॥ ॐ ॥

भट्टारक श्रीशुभचन्द्रजी विरचित-

श्रेणिक-चरित्र

संस्कृत पद्यसे हिन्दी भाषामें अनुवादक—

स्व० पं० गजाधरलालजी न्यायतीर्थ शास्त्री, कलकत्ता
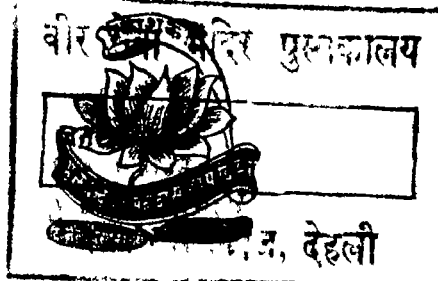
'जैनविजय' प्रिं० प्रेस-सूरतमें मूलचन्द किसनदास
कापड़ियाने मुद्रित किया।

पंचमावृत्ति] वीर सं० २४९५ [प्रति १०००

मूल्य रु० ४-५०

प्रथमावृत्तिकी प्रस्तावना

सहृदय पाठक !

यों तो यह संसार है, अनेक मनुष्य आकर इसमें जन्म धारण करते हैं और यथायोग्य अपने जीवनका निर्वाह कर चले जाते हैं परन्तु जन्म उन्हीं मनुष्योंका उत्तम, सार्थक एवं प्रशंसाभाजन गिना जाता है जो निःस्वार्थ और परहितार्थ हो। मनुष्योंकी निःस्वार्थता और परहितार्थता उन्हें अजरअमर बना देती है। पूर्वकालमें जिन२ मनुष्योंकी प्रवृत्ति निःस्वार्थ और परहितार्थ रही है यद्यपि वे पुरुष इस समय नहीं हैं तथापि उनका नाम अब भी बड़े आदरसे लिया जाता है और जबतक संसारमें अंशमात्र भी गुणग्राहिता रहेगी बराबर उन महापुरुषोंका नाम स्थिर रहेगा।

यह जो मनोज्ञ ग्रन्थ आपके हाथमें विराजमान है इसका नाम 'श्रेणिक-चरित्र' है। इस चरित्रके नायक प्रातःस्मरणीय महाराज श्रेणिक हैं। जैन जातिमें महाराज श्रेणिकका परम आदर है, जैनियोंका बच्चा बच्चा महाराज श्रेणिकके गुणोंसे परिचित है और उनके गुणोंके स्मरणसे अपनी आत्माको पवित्र मानता है।

यहांतक कि जैनियोंके बड़े२ आचार्योंका भी यह मत है कि यदि महाराज श्रेणिक इस भारतवर्षमें जन्म न लेते तो इस कलिकाल पंचमकालमें जैनधर्मका नामनिशान भी सुनना कठिन होजाता, क्योंकि वर्तमानमें इस भरतक्षेत्रमें कोई सर्वज्ञ रहा नहीं। जितने भी जैनसिद्धांत हैं उनके जाननेका उपाय केवल शास्त्र रह गये हैं और उनका प्रकाश भगवान महावीर अथवा गौतमसे अनेक विषयोंमें गूढ़ गूढ़ प्रश्न कर महाराज श्रेणिककी कृपासे हुआ है।

महाराज श्रेणिक कब हुए इस विषयमें सिवाय इनके चरित्रको छोड़कर कोई पुष्ट प्रमाण दृष्टिगोचर नहीं होता। जैन सिद्धांतके आधारसे भगवान् महावीरको निर्वाण गये २४४० वर्ष हुए हैं और भगवान महावीरके समयमें महाराज श्रेणिक थे इसलिये इस रीतिसे भगवान महावीर और महाराज श्रेणिक समकालिन सिद्ध होते हैं। कहींर पर यह किंवदंती सुननेमें आती है कि महाराज श्रेणिक राजा चंद्रगुप्तके दादे वा परदादे थे।

यह संस्कृत ग्रंथ श्री० भट्टारक शुभचंद्रजीका बनाया हुआ है और यह भाषा श्रेणिकचरित्र उसीका अनुवाद है।

ग्रन्थकारका परिचय

श्रेणिकचरित्रकी अंतिम प्रशस्तिमें भट्टारक शुभचंद्रजीने मूल संघकी प्रशंसा की है इसलिये यह जान पड़ता है कि महाराज शुभचंद्रजी मूल संघके भट्टारक थे एवं इसी प्रशस्तिमें इन्होंने प्रथम ही भगवत्कुन्दकुन्दको नमस्कार किया है। पीछे उन्हींके वंशमे पद्मनंदी, सकलकीर्ति, भुवनकीर्ति, भट्टारकजी ज्ञानभूषण एवं विजयकीर्ति भट्टारकोंका उल्लेख किया है और निम्नलिखित श्लोकोसे अपनेको विजयकीर्ति भट्टारकका शिष्य बतलाया है।

जगति विजयकीर्तिर्भव्यमूर्तिः सुकीर्तिर्जयतु च,
यतिराजो भूमिपैः स्पृष्टपादः।
नयनलिनहिमांशुर्ज्ञानभूषस्य पट्टे,
विविधपरविवादे क्ष्माधरे वज्रपातः॥ १॥
तच्छिष्येण शुभेन्दुना शुभमनः श्री ज्ञानभावेन वै,
पूत पुण्यपुराणमानुषभव संसारविध्वंसकं।
नो कीर्त्या व्यरचि प्रमोदवशतो जैने मते केवल,
नाहंकारवशात् कवित्वमदतः श्री पद्मनाभेविदं॥ २॥

अर्थः—नय (प्रमाणांश) रूपी कमलिनियोंके प्रकाशित करनेमें

चन्द्रके समान महाराज ज्ञानभूषणके पट्टपर अनेक परविवादरूप पर्वतोंपर वज्रपात, अनेक राजाओंसे पूजित, उत्तम कीर्तिके धारक भव्यमूर्ति यतिराज श्री विजयकीर्ति संसारमें जयवंत रहो।

भट्टारक विजयकीर्तिके शिष्य शुभचन्द्रजीने शुभ मन और ज्ञानकी भावनासे पुराणसे उद्धृत पवित्र एव संसारका नाश करनेवाला यह श्री पद्मनाभ तीर्थंकरका चरित्र रचा है। मेरा जैन मतपर अटूट स्नेह है इसीलिये यह रचना की गई है, किंतु कीर्ति, अहंकार और कवित्वके मदसे नहीं की गई है। भट्टारक शुभचन्द्रजीके विषयमें जो पट्टावली मिली है उसमे भी यह उल्लेख पाया गया है कि भट्टारक शुभचन्द्रजी भट्टारक विजयकीर्तिके ही शिष्य थे, एवं भट्टारक शुभचन्द्र भगवान् कुन्दकुन्द, पद्मनंदि, सकलकीर्ति आदिके आम्नायमे हुए हैं।

उसी प्रकार नीचे लिखी पांडवपुराणकी प्रशस्तिके श्लोकोंसे भी यह बात जानी गई है कि भट्टारक शुभचन्द्र भट्टारक विजयकीर्तिके ही शिष्य और कुन्दकुन्दादि आचार्योंकी ही आम्नायमें थे।

श्री मूलसंघेऽजनि पद्मनंदी तत्पट्टधारी सकलादिकीर्ति ।
कीर्तिः कृता येन च मर्त्यलोके शास्त्रार्थकर्त्री सकला पवित्रा ॥६७॥
भुवनकीर्तिरभूद्भुवनाद्भुतैर्भुवनभासनचारुमतिः स्तुत. ।
वरतपश्चरणोद्यतमानसो भवभयाहिखगेट् क्षितिवत्क्षमी ॥ ६८ ॥
चिद्रूपवेत्ता चतुरश्चिरंतनश्चिद्भूषणश्चर्चितपादपद्मकः ।
सूरिश्च चन्द्रादिचयैश्चनोतु वै चारित्रशुद्धिं खलु न प्रसिद्धिदां ॥६९॥
विजयकीर्तियतिर्मुदितात्मको जितनतान्यमनः सुगतैः स्तुतः ।
भवतु जैनमतं सुमतो मतो नृपतिभिर्भवतो भवतो विभुः ॥७०॥

पट्टे तस्य गुणांबुधिर्व्रतधरो धीमान् गरीयान् वरः,
श्रीमच्छ्रीशुभचन्द्र एव विदितो वादीभसिंहो महान् ।
तेनेदं चरितं विचारसुकरं चाकारि चंचद्रुचा,
पांडोः श्रीशुभसिद्धिसातजनकं सिद्ध्यै सुतानां सदा ॥७१॥

अर्थ—मूल संघमें मुनि श्री पद्मनन्दी हुए और उन्हींके पट्टपर अनेक मुनियोंके बाद श्री सकलकीर्ति मुनि हुए। भट्टारक सकलकीर्तिने मर्त्यलोकमें शास्त्रके अभिप्रायको भले प्रकार विवेचन करनेवाली समस्त कीर्तिका प्रसार किया ॥६७॥ भट्टारक सकलकीर्तिके पट्टपर भट्टारक भुवनकीर्ति हुए। भट्टारक भुवनकीर्ति समस्त लोकको आश्चर्य करनेवाले थे, ससारके स्वरूप प्रकाश करनेमें चतुरमति थे, स्तुत्य थे, उत्कृष्ट तपस्वी थे, संसार-भयरूपी सर्पके लिये गरुड़ एवं पृथ्वीके समान क्षमाशील थे ॥६८॥ आत्मस्वरूपके ज्ञाता, चतुर चिरंतन चन्द्र आदिसे पूजित, चरणकमलोंसे युक्त आचार्य श्री ज्ञानभूषण कीर्ति प्रसार करनेवाली चारित्रशुद्धि हमें प्रदान करें ॥६९॥ अन्य मनुष्योंके चित्तोंको जीतने एवं नम्रीभूत करनेवाले बौद्धोंसे स्तुत पवित्र आत्माके धारक, बुद्धिमान अनेक राजाओंसे पूजित एवं प्रभु-भट्टारक विजयकीर्ति जनमतकी रक्षा करें एवं ससारसे आप लोगोंको बचायें ॥७०॥ भट्टारक श्री विजयकीर्तिके पट्टपर गुणोंका समुद्र, ज्ञानी, बुद्धिमान, अतिशय गुरु, उत्कृष्ट, प्रसिद्ध, वादीरूपी हस्तियोंके लिये सिंह एवं महान् श्रीशुभचन्द्राचार्य हुए। तेजस्वी श्रीशुभचन्द्रने यह सरल सदा भव्योंको सिद्धि प्रदान करनेवाला पांडवचरित्र रचा ॥७१॥

इसप्रकार उक्त तीन प्रमाणोंसे यह बात निर्विवाद सिद्ध हो जाती है कि भट्टारक श्रीशुभचन्द्रजी मूलसंघके भट्टारक हुए हैं और वे विजयकीर्तिके शिष्य और भगवत्कुन्दकुन्दके आम्नायमें हुए हैं।

शुभचन्द्रजीकी प्रशस्तियोंमें जगह२ शाकवाटपुरके उल्लेखसे यह बात जानी जाती है कि शुभचन्द्र सागवाड़ाकी गद्दीके भट्टारक थे। यह गद्दी सकलकीर्तिके बाद ईडरकी गद्दीसे जुदी हुई है और तबसे उसके जुदे२ भट्टारक होते आये हैं। पांडवपुराणकी प्रशस्तिमें—

श्रीमद्विक्रमभूपतेर्द्विकहते स्पष्टाष्टसंख्ये शते,
रम्येऽष्टाधिकवत्सरे सुखकरे भाद्रे द्वितीयातिथौ ।
श्रीमद्वाग्वरनिवृतीदमतुले श्रीशाकवाटे पुरे,
श्रीमच्छ्रीपुरुषाभिधे विरचितं स्थेयात्पुराणं चिरं ॥ ८६ ॥

इस श्लोकसे यह बात बतलाई गई है कि यह पांडवपुराण (शाकवाट) सागवाड़ामें विक्रम संवत् सोलहसौ आठ १६०८ भादों द्वितीयाके दिन बनाया गया है। इससे यह साफ मालूम पड़ता है कि भट्टारक श्री शुभचन्द्र विक्रमकी सत्रहवीं शताब्दिमें हुए हैं।

पांडवपुराणकी प्रशस्तिमें भट्टारक श्री शुभचन्द्रजीने अपने बनाये ग्रन्थोंके नाम दिये हैं वे ये हैं—

चन्द्रप्रभचरित्र, पद्मनाभचरित्र, प्रद्युम्नचरित्र, जीवन्धरचरित्र, चन्दना कथा, नांदीश्वरी कथा, प० आशाधर कृत आचारशास्त्रकी टीका, तीस चौवीसीविधान, सद्वृत्तसिद्ध पूजा (सिद्धचक्रपूजा), सारस्वतयन्त्र पूजा, चिंतामणी तंत्र, कर्मदहन पाठ, गणधरवलय पूजन, पार्श्वनाथ काव्यकी पंजिका, पल्यव्रतोद्यापन, चारित्रशुद्धिव्रतोद्यापन, अपशब्द खंडन, तत्त्वनिर्णय, तर्कशास्त्र, तर्कशास्त्रकी टीका, सर्वतोभद्रपूजा, अध्यात्मपद्यवृत्ति, चिंतामणि व्याकरण, अंगप्रज्ञप्ति, जिनेन्द्रस्तोत्र, षडवाद और पांडवपुराण। श्रेणिकचरित्र इन्हीं भट्टारकका बनाया हुआ है परन्तु उपर्युक्त पांडव पुराणकी सूचीमें श्रेणिक चरित्रका उल्लेख नहीं किया गया है इसलिये मालूम होता है कि श्रेणिकचरित्र पांडवपुराणके पीछे अर्थात् विक्रम संवत् १६०८ के पीछे बनाया गया है, तथापि कब बनाया गया यह निर्णय नहीं होता। भट्टारक शुभचन्द्रजीके बनाये और भी अनेक ग्रन्थोंके नाम मिलते हैं, नहीं मालूम वे भी श्रेणिकचरित्रके पीछे बने हैं या पहिले।

इसके पहले मैं पद्मनन्दि पंचविंशतिकाका अनुवाद कर चुका हूँ और यह मेरा द्वितीय काम है। भाषाके लिखते समय मेरा बराबर लक्ष्य नहीं रहा है। मुझे विश्वास है इस अनुवादमें मेरी बहुतसी त्रुटियां रह गई होंगी। इसलिये यह सविनय प्रार्थना है कि विज्ञपाठक मुझे उन त्रुटियोंके लिए क्षमा करें।

मित्रवर सेठ मूलचन्दजी किसनदासजी कापडियाको परम धन्यवाद है कि जिनके उद्योगसे जैनधर्मको उन्नत करनेवाले बहुतसे काम हो रहे हैं।

काशी।
वीर सं० २४४१
मार्गशीर्ष शुक्ल ७

विद्वत्कृपाभिलाषी—
गजाधरलाल।

निवेदन

हमारे अन्तिम तीर्थंकर भ० महावीरके समकालीन श्री श्रेणिक महाराजका यह पुण्यपावन चरित्र स्व० प० पन्नालालजी बाकलीवालकी सूचनासे हमने ५४ वर्ष हुए प्रथम प्रकट किया था वह बिक जानेपर इसकी दूसरी, तीसरी व चौथी आवृत्ति प्रकट की थी यह भी बिक जानेसे चालू मांग होनेसे कागज छपाईकी विकट परिस्थितिमें इसकी यह पांचवीं आवृत्ति प्रकट की जाती है। आशा है इसका भी शीघ्र ही प्रचार हो जावेगा।

सूरत
वीर सं० २४९५
ता० २१-३-६९

निवेदकः—
मूलचन्द किसनदास कापड़िया,
—प्रकाशक।

विषय सूची

प्रथम सर्ग

महाराज उपश्रेणिकको राज्य प्राप्ति-वर्णन

श्रीवर्द्धमानमानंदं नौमि नानागुणाकरं ।
विशुद्धध्यानदीप्तार्चिर्हुतकर्मसमुच्चयं ॥

अर्थ—शुक्लध्यानरूपी देदीप्यमान अग्निसे समस्त कर्मोंके समूहको जलानेवाले, अनेक गुणोंके आकर, आनन्दके करनेवाले वर्द्धमानस्वामीको मैं नमस्कार करता हूं ॥ १ ॥

जिस भगवानने बाल्य अवस्थामें ही मुनियोंका सन्देह दूर करनेसे श्रेष्ठ विद्वत्ताको पाकर सन्मति नामको धारण किया, जिस भगवानने बाल्य अवस्थामें ही मायामयी सर्पके मर्दन करनेसे 'महावीर' नामको प्राप्त किया, और जो बाल्य अवस्थामें ही अत्यन्त बलको पाकर वीरोंके वीर कहलाये; जिस भगवानने मनुष्य लोक सम्बन्धी बड़े भारी राज्यको भी जीर्णतृणके समान समझकर छोड़ दिया एवं जो दीक्षा धारण कर समस्त लोकके वन्दनीय हुये, तथा जो महावीर भगवान केवलदर्शनको प्राप्त कर धर्मरूपी साम्राज्यसे शोभित हुये, ऐसे समस्त लोकमें आनन्द

मंगल करनेवाले श्री महावीर भगवानको मैं (ग्रन्थकार) अपने हृदयमें धारण करता हूं।

तत्पश्चात् ज्ञानरूपी भूषणके धारक, धर्मरूपी तीर्थके स्वामी श्री ऋषभदेव भगवानसे लेकर पार्श्वनाथ पर्यंत तीर्थङ्करोंको भी मैं अपनी इष्टसिद्धिके लिये इस ग्रंथके आदिमें नमस्कार करता हूं। इनसे भी भिन्न जो ज्ञानरूपी सम्पत्तिके धारी हैं उनको भी मैं नमस्कार करता हूं। तथा ध्यानसे देदीप्यमान शरीरके धारी, गणोंके स्वामी एवं उत्कृष्ट स्वामी (आदि गणधर) श्री वृषभसेन गुरुको भी मैं अपने हितकी प्राप्तिके लिये नमस्कार करता हू।

तत्पश्चात् मुनि, अर्जिका, श्रावक और श्राविका इन चारों गणोंसे सेवित, धीर, समस्त पृथ्वीतलमें श्रेष्ठ जिनसे मिथ्यावादी लोग डरते हैं, और जो तीनों लोकके प्रकाश करनेवाले हैं ऐसे (अन्तिम गणधर) श्रीगौतमस्वामीको भी मैं नमस्कार करता हूं।

इनके पश्चात् जिस भगवती वाणीके प्रसादसे संसारमें जीव समस्त हिताहितको जानते हैं और जो श्री केवलीभगवानके मुखसे प्रगट हुई उस वाणीको भी मैं नमस्कार करता हूँ।

तत्पश्चात् जो गुरु हितकारी, श्रेष्ठ वचनरूपी संपत्तिसे शोभित, ज्ञानरूपी भूषणके धारक, अत्यन्त तेजस्वी, अहंकाररूपी हस्तीके मर्दन करनेवाले हैं, ऐसे कर्मरूपी वैरियोंके विजयसे कीर्तिको प्राप्त करनेवाले, हितैषी और पुण्यरूपी मेरु पर्वतके शिखर पर निवास करनेवाले अर्थात् अत्यन्त पुण्यात्मा गुरुओंको भी मैं नमस्कार करता हूं।

तथा इस भरतक्षेत्रमें आगे होनेवाले, समस्त तीर्थंकरोंमें उत्तम, अत्यन्त तेजस्वी, श्री पद्मनाभ तीर्थंकरको भी मैं समस्त विघ्नोंकी शांतिके लिये नमस्कार करता हूं, जो पद्मनाभभगवान उत्सर्पिणीकालके कुछ समयके व्यतीत होने पर, इस भरतक्षेत्रमें पांच प्रकारके अतिशयोंकर सहित, सैकड़ों इन्द्र और देवोंसे पूजित उत्पन्न होवेंगे

और चिरकालसे विद्यमान पापरूपी वृक्षके छिये वज्रके समान होंगे तथा चतुर्थकालकी आदिमें जब समस्तधर्ममार्गोंका नाशहोजायगा, अहंकार व्याप्त होगा, उस समय जो भगवान समस्त जीवोंके अज्ञानांधकारको नाशकर मोक्षके मार्गके प्रकाशनपूर्वक धर्मकी ओर उन्मुख करेंगे और जिस पद्मनाभभगवानने पहिले अपने श्रेणिक भवमें (श्रेणिक अवतारमें) श्री महावीरस्वामी भगवानके समीपमें अनादिकालसे विद्यमान मिथ्यात्वको शीघ्र ही दूर किया तथा अतिशय मनोहर निर्मल समस्त दोषोंसे रहित क्षायिक सम्यक्त्वको धारण किया और समस्त इन्द्रियोंको संकोचकर शुद्ध सम्यग्दर्शनसे विभूषित हुये, जिस भगवानने महावीरस्वामीके सामने तीर्थंकर प्रकृतिका बन्ध किया, और जिस पुण्यात्मा पद्मनाभ भगवानने समस्त लोकमें सर्वथा आश्चर्य करनेवाले आस्तिक्य गुणको प्राप्त किया।

तथा जिस पद्मनाभ तीर्थंकर श्रेणिक अवतारके समय उनके किये हुए प्रश्नके उत्तरमें श्री महावीरस्वामीने समस्त पापोंका नाश करनेवाले तथा इस श्रेणिकचरित्रको भी प्रकाश करनेवाले वचनोंको प्रतिपादन किया और जिस पद्मनाभ भगवानके जीव श्रेणिक महाराजके प्रश्नके प्रसादसे पुराण व्रत सख्यान आदिके वर्णनके करनेवाले, समस्त विवादियोंके अभिमानको नाश करनेवाले इस समय भी अनेक ग्रन्थ विद्यमान हैं, जो श्रेणिक महाराज महाश्रोता, महाज्ञाता, महावक्ता, धर्मकी वास्तविक परीक्षा करनेवाले, भविष्यकालमें होनेवाले समस्त तीर्थंकरोंमें प्रथम व मुख्य तीर्थंकर भगवान होंगे, ऐसे (श्रेणिक महाराजके जीव) श्री पद्मनाभ तीर्थंकरको भी मैं मस्तक झुकाकर नमस्कारपूर्वक उनके संसार सम्बन्धी समस्त चरित्रका वर्णन करता हूं।

ग्रन्थाकार शुभचन्द्राचार्य अपनी लघुता प्रकट करते हुये कहते हैं कि कहाँ तीर्थंकरका यह चरित्र जिसके विस्तारका

अन्त नहीं और कहाँ अनेक प्रकारके आवरणोंसे ढकी हुई मेरी बुद्धि, तथापि जिस प्रकार सतमंजले उत्तम मकानके ऊपर चढ़नेकी इच्छा करनेवाला पंगुपुरुष प्रशंसाका भाजन होता है, उसी प्रकार इस गम्भीर विस्तृत चरित्रके वर्णन करनेसे मैं भी प्रशंसाका भाजन हूँगा इसमें किसी प्रकारका सन्देह नहीं।

यदि कोई विद्वान मुझे वावदूक अर्थात् अधिक बोलनेवाला वाचाल कहे तौ भी मुझे किसी प्रकारका भय नहीं, क्योंकि जिसप्रकार कोयल वसन्त ऋतुमें ही बोलती है और शुक सदा ही बोलता रहता है फिर भी शुकका बोलना किसीको आश्चर्यका करनेवाला नहीं होता उसी प्रकार यद्यपि पूर्वाचार्य परिमित तथा समयपर ही बोलनेवाले थे और मैं सदा बोलनेवाला हूं तो भी मेरा बोलना आश्चर्यजनक नहीं। जिस प्रकार पुष्पदन्त नक्षत्रके अस्त हो जानेपर अल्प प्रभाववाले तारागण भी चमकने लगते हैं उसी प्रकार यद्यपि पूर्वाचार्योंके सामने मैं कुछ भी जाननेवाला नहीं हूं तौ भी इस चरित्रके कहनेके लिये मैं उद्धत होकर उद्योग करता हूँ।

यद्यपि शब्दशास्त्रके जाननेवाले अधिक बोलनेवाले होते हैं तो भी वे वचन शुभ ही बोलते हैं, उसी प्रकार यद्यपि हमारी वाणी स्खलित है तो भी हम शुभ वचन बोलनेवाले हैं इसलिये हम पूर्वाचार्योंके समान ही हैं। जिस प्रकार बड़े २ जहाजवाले सुखपूर्वक अभीष्ट स्थानको चले जाते हैं और उनके पीछे २ चलनेवाले छोटे जहाजवाले भी सुखपूर्वक अपने इष्ट स्थानको प्राप्त हो जाते हैं, ठीक उसी प्रकार पूर्वाचार्योंके पीछे२ चलनेवाले हमको भी इष्टसिद्धिकी प्राप्ति होगी, तथा जिसप्रकार दरिद्री पुरुष धनिक लोगोंके महलों, उनके उदय तथा उनकी अन्य अनेक विभूतियोंको देखकर विषाद नहीं करते उसी प्रकार सूत्रके अनुसार पूर्वाचार्योंकी कृतिको देखकर हमको भी वाक्योंकी रचनामें कभी भी विषाद नहीं

करना चाहिये, क्योंकि शक्तिके न होने पर ईर्षा द्वेष करना विना प्रयोजनका है।

जिस प्रकार सिंह ही अपने शब्दको कह सकता है परंतु उस शब्दको कहनेमें मेंढ़क असमर्थ है, उसी प्रकार यद्यपि पूर्वाचार्योंने ग्रंथोंकीकी रचना की है तो भी मैं वैसे ग्रंथोंकी रचना करनेमें असमर्थ ही हूं। जिस प्रकार अत्यत छोटे देहका धारक कुन्थु जीव भी देहधारी कहा जाता है, और पर्वतके समान देहका धारण करनेवाला हाथी भी देहधारी कहा जाता है, उसी प्रकार पुराण, न्याय, काव्य आदि शास्त्रोंको भलीभांति जाननेवाला भी कवि कहा जाता है और अल्प शास्त्रोंका जाननेवाला मैं भी कवि कहा जाता हूं। मूंक पुरुष भले ही उत्तम न बोलता हो तो भी वह बोलनेकी इच्छा रखता है, उसी प्रकार यद्यपि मैं समस्त शास्त्रोंके ज्ञानसे रहित हूं तौ भी मैं इस चरित्रके वर्णन करनेका प्रयत्न करता हूं।

जिस प्रकार चरित्रके सुननेसे पुण्यकी प्राप्ति होती है उसी प्रकार भलीभांति विचार कर मैंने इस श्रेणिक चरित्रका कथन करना प्रारभ किया है। अथवा चरित्रोंके सुननेसे भव्य जीवोंको ससारमें तीर्थंकर इन्द्र चक्रवर्ती आदि पदोंकी प्राप्ति होती हैं यह भले प्रकार समझ और तीर्थंकर आदिके गुणोंका लोलुपी होकर, दृढ़ श्रद्धानी हो, मैं शुभचन्द्राचार्य, सारभूत उत्कृष्ट और पवित्र श्रेणिक चरित्रको कहता हूं। परंतु जिस प्रकार अधिक विस्तारवाले कच्चे धान्योंकी अपेक्षा पका हुआ थोड़ासा धान्य भी उत्तम होता है उसी विस्तृत चरित्रकी अपेक्षा संक्षिप्त चरित्र उत्तम तथा मनुष्योंके मनको हरण करनेवाला होता है इसलिये मैं इस श्रेणिक चरित्रका संक्षिप्त रीतिसे ही वर्णन करता हूँ।

समस्त लोकका मन हरनेवाला लाख योजन चौड़ा, गोल और तीन लोकमें अत्यंत शोभायमान जम्बूद्वीप है। वह जंबूद्वीप

कमलके समान मालूम पड़ता है; क्योंकि जिस प्रकार कमलमें पत्ते होते हैं, उसी प्रकार भरतादि क्षेत्ररूपी पत्ते इसमें भी मौजूद हैं। जिस प्रकार कमलमें पराग होता है, उसी प्रकार नक्षत्ररूपी पराग इसमें भी मौजूद हैं। जिस प्रकार कमलमे कली रहती है, उसी प्रकार इस जम्बूद्वीपमें मेरुपर्वतरूपी कली मौजूद है। जिस प्रकार कमलमें मृणाल (सफेद ततु) रहता है, उसी प्रकार इस जम्बूद्वीपमें भी शेषनागरूपी मृणाल मौजूद है। तथा जिस-प्रकार कमल पर भ्रमर, रहते हैं उसी प्रकार इस जम्बूद्वीपमे भी अनेक मनुष्यरूपी भ्रमर मौजूद हैं।

यह जम्बूद्वीप दूधके समान उत्तम निर्मल जलसे भरे हुवे तालावोंसे जीवोंको नाना प्रकारके आनन्द प्रदान करनेवाला है। यह जम्बूद्वीप राजाके समान जान पड़ता है क्योंकि जिस प्रकार राजा अनेक बड़े२ राजाओंसे सेवित होता है उसी प्रकार यह द्वीप भी अनेक प्रकारके महीधरोंसे अर्थात् पर्वतोंसे सेवित है। जिस प्रकार राजा कुलीन उत्तम वंशका होता है, उसी प्रकार यह जबूद्वीप भी कुलीन अर्थात् (कु) पृथ्वीमें लीन है और जिस प्रकारका राजा शुभ स्थितिवाला होता है, उसी प्रकार यह भी अच्छी तरह स्थित है, तथा राजा जिस प्रकार रामालीन अर्थात् स्त्रियोंकर संयुक्त होता है, उसी पुकार यह भी रामालीन, अनेक वन, उपवनोंसे शोभित है।

जिस प्रकार राजा महादेशी अर्थात् बड़े२ देशोंका स्वामी होता है उसी प्रकार यह भी महादेशी अर्थात् विस्तीर्ण है। यद्यपि यह द्वीप नदीनजड़ससेव्य: अर्थात् उत्कट जड़ मनुष्योंसे सेवित है तथापि 'नदीनजड़संसेव्य:' अर्थात् समुद्रोंके जलोंसे वेष्टित है इसलिये यह उत्तम है। यद्यपि यह जम्बूद्वीप, निम्नगाळी विराजित:, अर्थात् व्यभिचारिणी स्त्रियोंकर सहित है तथापि 'अनिम्नगाळीविराजित:' अर्थात् पतिव्रता स्त्रियोंकर शोभित है

इसलिये यह उत्तम है। तथा यद्यपि यह द्वीप द्विजराजाश्रित: अर्थात् वरुणसंकर राजाओंके आधीन है तो भी उत्तम ब्राह्मण क्षत्रिय वैश्योंका निवासस्थान होनेके कारण यह उत्तम ही है और पर्वतोंसे मनोहर, पुण्यवान उत्तम पुरुषोंका निवासस्थान, यह जम्बूद्वीप अनेक प्रकारके उत्तम तालाबोंसे, तथा बड़े बड़े कुण्डोंसे तीनों लोकमें शोभित है।

जिस जम्बूद्वीपकी उतम गोलाई देखकर लज्जित व दु:खित हुवा, यह मनोहर चन्द्रमा दिनरात आकाशमें घूमता फिरता है तथा जिस प्रकार लोक अलोकका मध्य भाग है उसी प्रकार यह जम्बूद्वीप भी समस्त द्वीपोंमें तथा तीन लोकके मध्य भागमें है ऐसा बडे२ यतीश्वर कहते हैं।

इस जम्बूद्वीपके मध्यमें अनेक शोभाओंसे शोभित, गले हुवे सोनेके समान देहवाला, देदीप्यमान, अनेक कांतियोंसे व्याप्त, सुवर्णमय मेरु पर्वत है। यह मेरु साक्षात् विष्णुके समान मालूम पड़ता है। क्योंकि जिस प्रकार विष्णुके चार भुजा हैं, उसी प्रकार इस मेरुपर्वतके चार गजदन्त रूपी चार भुजायें हैं और जिस प्रकार विष्णुका नाम अच्युत है उसी प्रकार यह भी अच्युत अर्थात् नित्य है। जिस प्रकार विष्णु श्री समन्वित अर्थात् लक्ष्मी सहित हैं, उसी प्रकार यह मेरुपर्वत भी श्री समन्वित अर्थात् नाना प्रकारकी शोभाओंसे युक्त है।

इस मेरुपर्वतपर सुभद्र, भद्रशाल तथा स्वर्गके नंदनवनके समान नंदनवन, और अनेक प्रकारके पुष्पोंकी सुगन्धिसे सुगधित करनेवाले सौमनस्य वन है। यह मेरु अपांडु अर्थात् सफेद न होकर भी पांडुशिलाका धारक सोलह अकृत्रिम चैत्यालयोंसे युक्त अपनी प्रसिद्धिसे सबको व्याप्त करनेवाला अर्थात् अत्यन्त प्रसिद्ध और नानाप्रकारके देवोंसे युक्त हैं। बड़े भारी ऊंचे परकोटेको धारण करनेवाला, सुवर्णमय और नानाप्रकारके रत्नोंसे शोभित,

यह मेरु, निराधार स्वर्गके टिकनेके लिये मानो एक ऊंचा खम्भा ही है ऐसा जान पड़ता है।

यह मेरुपर्वत तीनों लोकमें अनादिनिधन, अकृत्रिम, स्वभावसे ही सिद्ध और अनेक पर्वतोंका स्वामी अपने आप ही सुशोभित है। यह पर्वत अत्युत्तम शोभाको धारण करनेवाले जम्बूद्वीपके मध्यभागमें अनुपम सुख मोक्षको जानेकी इच्छा करनेवाले भव्य जीवोंको मोक्षके मार्गको दिखाता हुवा, और जिनेन्द्र भगवानके जन्मोत्सवसे पवित्र हुवा, एक महान तीर्थपनेको प्राप्त हुवा है। चारण ऋद्धिके धारण करनेवाले मुनियोंसे सदा सेवनीय है, व समस्त पर्वतोंका राजा है। श्रेष्ठ कल्पवृक्षोंके फूलोंसे स्वर्गलोकको भी जीतनेवाले इस मेरुपर्वतपर स्वर्गको छोड़कर इन्द्र भी अपनी इन्द्राणियोंके साथ क्रीड़ा करनेको आते हैं।

यह मेरूपर्वत अधिक ऊंचा होनेके कारण अत्युच्च कहा गया है, स्वय सिद्ध होनेसे अकृत्रिम कहा गया है, और पृथ्वीको धारण करनेवाला होनेके कारण धाराधीश अर्थात् पृथ्वीका स्वामी कहा गया है। इस मेरुपर्वतके ऊपर विराजमान चैत्यालयोंके और स्तुति करने योग्य परमात्माके ध्यान करनेवाले योगीन्द्रोंके स्मरणसे मनुष्योंके समस्त पांप नष्ट हो जाते हैं। इस मेरुपर्वतके माहात्म्यका हम कहां तक वर्णन करें, इस मेरुपर्वतके माहात्म्यका विस्तार बड़ेर करोड़ों ग्रंथोंमें भले प्रकार वर्णन किया गया है।

इसी मेरुपर्वतकी दक्षिण दिशामें जहां उत्तम धान्य उपजते हैं, मनोहर अनेक प्रकारकी विद्याओंसे पूर्ण और सुखोंका स्थान भरतक्षेत्र है। यह भरतक्षेत्र साक्षात् धनुषके समान है, क्योंकि जिस प्रकार धनुषमें बाण होते हैं उसी प्रकार इसमें गंगा, सिंधु दो नदी रूपी बाण हैं। इस भरतक्षेत्रके मध्य भागमें रूपाचल नामका विशाल पर्वत है जो चारों ओरसे सिंधु नदीसे वेष्टित

है और जिसकी दोनों श्रेणी सदा रहनेवाले विद्याधरोंसे भरी हुई हैं। यह भरतक्षेत्र अत्यन्त पवित्र है और गंगा, सिन्धु नामकी दो नदियोंसे तथा विजयार्द्ध पर्वतसे छः खण्डोंमें विभक्त अतिशय शोभाको धारण करता है।

इसी भरतक्षेत्रमें तीन खण्डोंसे व्याप्त, पुण्यात्मा भव्यजीवोंसे पूर्ण, दक्षिण भागमें आर्यखण्ड शोभित है। इस दैदीप्यमान आर्यखण्डमें सुख तथा दुःखसे व्याप्त, पुण्य पापरूपी फलको धारण करनेवाला सुखमा सुखमादि छह कालोंका समूह सदा प्रवर्तमान रहता है। इन छह प्रकारके कालोंमें प्रथम काल सुखमा२ है, जो कि शरीर आहार आदिसे देवकुरू भोगभूमिके समान है। दूसरा काल सुखमा नामका है जिसमें मनुष्यके शरीरकी ऊचाई दो कोशके प्रमाणकी रहती है। यह काल, स्थिति, आहार आदिकसे हरिवर्ष क्षेत्रके समान है तथा शुभ है। तीसरा काल सुखमा दुखमा नामक है, इसमें मनुष्योंके शरीरकी ऊचाई एक कोशके प्रमाण है। इसकी रचना जघन्य भोगभूमिके समान होती है।

चौथा काल दुखमा सुखमा है जिसकी रचना विदेह क्षेत्रके समान होती है, तीर्थङ्कर चक्रवर्ती बलभद्र नारायण आदि महापुरुषोंकी उत्पत्ति भी इसी कालमें होती है। पांचमा काल दुखमा है जिसमें पुण्य तथा पाप शुभाशुभगतिकी प्राप्ति होती है, यह दुःखोंका भंडार है। तथा इस पञ्चमकालमें मनुष्योंकी आयु शरीर धर्म सब कम हो जाते हैं।

इसके पश्चात् धर्म कर रहित, पापस्वरूप, दुष्ट मनुष्योंसे व्याप्त, और थोड़ी आयुवाले जीवोंसहित, छठवां दुःखमर काल आता है। इस प्रकार मोक्ष मार्ग साधन करनेके लिये दीपकके समान, इस आर्यखण्डमें छह प्रकारके काल सदा प्रवर्तमान रहते हैं।

ऐसा यह आर्यखंड नाना प्रकारके बड़े२ देशोंसे व्याप्त, पुर और ग्रामोंसे सुशोभित बहुतसे मुनियोंसे पूर्ण और पुण्यकी उत्पत्तिका स्थान अत्यंत शोभायमान है। इस आर्यखंडके मध्यमें जिस प्रकार शरीरके मध्यभागमें नाभि होती है उसी प्रकार इस पृथ्वी तलके मध्यभागमें मगध नामक एक देश है जो अनेक जनोंसे सेवित और विशेषतया भव्यजनोंसे सेवित है। इस मगध देशमें धन धान्य और गुणोंके स्थान मनुष्योंसे व्याप्त प्रकट रीतिसे संपत्तिके धारी अनेक ग्राम पास२ बसे हुये हैं। इस मगधदेशमें फलकी इच्छा करनवाले मनुष्योंको उत्तमोत्तम फलोंको देनेवाले उत्कृष्ट कल्प-वृक्षोंकी शोभाको धारण करते हैं। उस देशमें वहांके मनुष्य पके हुये धान्योके खेतोमे गिरते हुये सुवोंको कल्पवृक्षके फलोंके समान जानते हैं। वहां अत्यन्त निर्मल जलसे भरे हुये, काले काले हाथियोंसे व्याप्त सरोवर ऐसे मालूम पड़ते हैं मानों स्वयं मेघ ही आकर उनकी सेवा कर रहे हैं। वहांके तालाब साक्षात् कृष्णके समान मालूम पड़ते हैं क्योंकि जिस प्रकार श्रीकृष्ण कमलाकर अर्थात् लक्ष्मीके (कर) हाथ सहित है, उसी प्रकार तालाब भी कमलाकर अर्थात् कमलोंसे भरे हुये हैं। जिस प्रकार श्रीकृष्ण सुमनसों (देवो) से मंडित हैं, उसी प्रकार तालाब भी (सुमनसे) अर्थात् नाना प्रकारके फूलोसे पूर्ण हैं। जिस प्रकार श्रीकृष्ण हस्तियोंके मदको चकनाचूर करनेवाले हैं अर्थात् इनके पास आते ही हस्ति शांत हो जाते हैं। और जिस देशमें वनमें, पर्वतके मस्तकोपर, ग्राममें, देशमे, पुरमें, खोलारोंमें नदियोंके तटोंपर, सदा मुनिगण देखनेमें आते हैं और धर्मके उपदेशमें तत्पर, निर्मल, असंख्याते गणधर, बड़े२ संघोंके साथ दृष्टिगोचर होते हैं। उस देशमें कहींपर अनेक प्रकारके विमानोंमें बैठे हुए उत्तमदेव, अपनी अपनी अत्यंत सुन्दर देवांगनाओंके साथ केवली भगवानकी पूजा करनेके लिये आते हैं और कहींपर मनोहर बागोंमें, पुण्यात्मा पुरुषों द्वारा प्राप्त करने योग्य अपनी

मनोहर स्वर्गपुरीको छोड़कर देवतागण अपनी देवांगनाओंके साथ क्रीड़ा करते हैं। वहां गोपालोंकी रमणियों द्वारा गाये हुवे मनोहर गीतरूपी मंत्रोंसे-मंत्रित तथा उनके गीतोंमें दत्तचित्त, और भयरहित हिरणोंका समूह निश्चल खड़ा रहता है और भागनेपर भी नहीं भागता है। और वहां जब तालाबोंमें प्याससे अत्यंत व्याकुल हो अनेक हाथी पानी पीने आते हैं तब हथिनियोंको देखकर उनके विरहसे पीड़ित होकर अपना जीवन छोड़ देते हैं। यह मगधदेश नाना प्रकारके उत्तमोत्तम तीर्थोंका सहित, नाना प्रकारके देव विद्याधरोंसे सेवित, और विशेष रीतिसे अनेक मुनिगणोंकर शोभित है इसका कहांतक वर्णन करूं।

इसी मगधदेशमें राजघरोंसे शोभित, अनेक प्रकारकी शोभाओंसे मण्डित, धनसे पूर्ण तथा अनेक जनोंसे व्याप्त, राजगृह नामक एक नगर है। राजगृह नगरमें न तो अज्ञानी मनुष्य हैं, और न शीलरहित स्त्रियाँ हैं, और न निर्धन पुरुष बसते हैं। वहांके पुरुष उत्तम कुबेरके समान ऋद्धिके धारण करनेवाले और स्त्रियाँ देवांगनाओंके समान हैं। जगह २ पर कल्पवृक्षोंके समान वृक्ष हैं। और स्वर्गोंके विमानोंके समान सुवर्णके घर बने हुवे हैं। वहांका राजा इन्द्रके समान अत्यंत बुद्धिमान है। वहां ऊंचे २ धान्योंके वृक्ष, ऐसे मालूम पड़ते हैं मानो वे मूर्तिमान अत्यंत शोभा हैं और अपने पराक्रमसे इस लोकको भलीभांति जीतकर स्वर्गलोकको जीतनेकी इच्छासे स्वर्गलोकको जा रहे हैं।

उस नगरके रहनेवाले भव्यजीव मनुष्य नाना प्रकारके व्रतोंसे भूषित होकर केवलज्ञानको प्राप्तकर तथा समस्त कर्मोंको निर्मूलन कर परमधाम मोक्षको प्राप्त होते हैं। और वहांकी स्त्रियोंके प्रेमी अनेक पुरुष भी व्रतोंके सम्बन्धसे श्रेष्ठ चारित्रको प्राप्तकर स्वर्गको प्राप्त होते हैं क्योंकि पुण्यका ऐसा ही फल है। वहांके कितने एक पुण्यके अर्थी भव्यजीव उत्तम, मध्यम, जघन्य...

तीन प्रकारके पात्रोंको दान देकर भोगभूमि नामक स्थानको प्राप्त होते हैं और जीवन पर्यंत सुखसे निवास करते हैं। राजगृह नगरके मनुष्य ज्ञानवान हैं इसलिये वे विशेष रीतिसे दान तथा पूजामें ही ईर्षा द्वेष करना चाहते हैं। और ज्ञानमें (कलाकौशलोंमें) कोई किसीके साथ ईर्षा तथा द्वेष नहीं करते। इसमें जिनमन्दिर तथा राजमन्दिर सदा जय जय शब्दोंसे पूर्ण, उत्तम सभ्य मनुष्योंसे आकीर्ण, याचकोंको नाना प्रकारके फल देनेवाले शोभित होते हैं।

राजगृह नगरका स्वामी नाना प्रकारके शुभ लक्षणोंसे युक्त शरीर और देदीप्यमान यशका धारण करनेवाला उपश्रेणिक नामका राजा था। वह उपश्रेणिक राजा अत्यन्त ज्ञानवान, कल्पवृक्षके समान दानी, चन्द्रमाके समान तेजस्वी, सूर्यके समान प्रतापी, इन्द्रके समान परम ऐश्वर्यशाली, कुबेरके समान धनी, तथा समुद्रके समान गम्भीर था।

इसके अतिरिक्त उसमें और भी अनेक प्रकारके गुण थे। वह त्यागी था, भोगी था, सुखी था, धर्मात्मा था, दानी था, वक्ता था, चतुर था, शूर था, निर्भय था, उत्कृष्ट था, धर्मादि उत्तम कार्योंमें मान करनेवाला ज्ञानवान और पवित्र था, इसी-लिये अनेक राजाओंसे सेवित उपश्रेणिक महाराजको न तो चतुरंग सेनासे ही कुछ काम था और न अपने बलसे ही कुछ प्रयोजन था।

महाराज उपश्रेणिकके साक्षात् इन्द्रकी इन्द्राणीके समान, जो उत्तम रूप तथा लावण्यसे युक्त थी, इन्द्राणी नामकी पटरानी थी। वह तनूदरी, इन्द्राणी, अनेक प्रकारके गुणोंसे युक्त होनेके कारण अपने पतिको सदा प्रसन्न रखती रहती थी। उसके स्तन, अमृतकुम्भके समान मोटे, कामदेवको जिलानेवाले, उत्तम हाररूपी सर्पसे शोभित दो कलशों समान जान पड़ते थे। और उसके

उत्तम स्तनोंके सम्बन्धसे मदन ज्वर तो कभी होता ही नहीं था। जैसे रसायनके खानेसे ज्वर दूर हो जाता है वैसे ही उसके स्तनोंके रसायनसे मदन ज्वर भी नष्ट हो जाता था। वह इन्द्राणी अत्यन्त पवित्र और नाना प्रकारकी शोभाओंकर सहित, उपश्रेणिक राजाको आनन्द देती थी तथा वह राजा भी इस पटरानीके साथ सदा भोगविलासोंको भोगता था।

इस प्रकार परस्पर अतिशय प्रेमयुक्त अत्यन्त निर्मल सुख-रूपी सरोवरमें मग्न, अत्यन्त पवित्र और महान्, जिनके चरणोंकी वंदना बड़े बड़े राजा आकर करते थे। चारों ओर जिनकी कीर्ति फैल रही थी, और समस्त प्रकारके दुःखोंसे रहित तथा पुण्य मूर्ति वे दोनों राजा रानी इन्द्रके समान पुण्यके फलस्वरूप राजलक्ष्मीको भोगते थे।

राजा उपश्रेणिकने राज्यको पाकर उसे चिरकाल पर्यंत भोग किया, समस्त पृथ्वीको उपद्रवोंसे रहित कर दिया, और उनके राज्यमें किसी प्रकारके वेरी नहीं रह गये। उनके लिये ऐसे राज्यमें महाराणी इन्द्राणीके साथ स्थित होना ठीक ही था क्योंकि भव्य जीवोंको धर्मकी कृपासे राज्यसंपदाकी प्राप्ति होती है, धर्मसे उत्तमोत्तम स्त्रियां तथा चक्रवर्तीकी लक्ष्मी मिलती है और धर्मसे ही स्वर्गके विमानोंके समान उत्तमोत्तम घर, आज्ञाकारी उत्तम पुत्र भी मिलते हैं, इसलिये भव्यजीवोंको श्री जिनेन्द्र भगवानके सारभूत उत्कृष्ट धर्मकी अवश्य ही आराधना करनी चाहिये।

इस प्रकार भविष्य कालमें होनेवाले श्रीपद्मनाभ तीर्थंकरके पूर्व भवके जीव महाराज श्रेणिकके चरित्रमें महाराज उपश्रेणिकको राज्यकी प्राप्तिका वर्णन करनेवाला प्रथम सर्ग समाप्त हुआ।

दूसरा सर्ग

महाराज उपश्रेणिकके नगर प्रवेशका वर्णन

पद्मकी शोभाको धारण करनेवाले जिनेश्वर, तथा भविष्यमें तीर्थोंकी प्रवृत्ति करनेवाले ईश्वर, श्री पद्मनाभ भगवानको मैं मस्तक झुकाकर नमस्कार करता हूँ।

अनंतर इसके उन दोनों राजा रानीके महान् पुण्यके उदयसे, अनेक सुखोंका स्थान, भले प्रकार मातापिताको संतुष्ट करनेवाला, परम ऋद्धिधारक, श्रेणिक नामका पुत्र उत्पन्न हुवा। कुमार श्रेणिकमें सर्वोत्तम गुण थे, उसका रूप शुभ था और अतिशय निर्मल था। वह अत्यत भाग्यवान् और लक्ष्मीवान था। कुमार श्रेणिकके कामिनी स्त्रियोंके मनको लुभानेवाले काले केश ऐसे जान पड़ते थे मानों उसके मुख कमलकी सुगंधिसे सर्प ही इक्ट्ठे हुवे हैं। उसका विस्तीर्ण सुन्दर और अतिशय मनोहर तिलकसे शोभित ललाट, ऐसा मालूम पडता था मानो ब्रह्माने तीनों लोकके आधिपत्यका पट्टक ही रचा है।

बालकके दोनों नेत्र नील कमलके समान विशाल अतिशय शोभित थे। दोनों नेत्रोंकी सीमा बांधनेके लिये उनके मध्यमें अतिशय मधुर सुगंधिको ग्रहण करनेवाली नासिका शोभित थी। स्फुरायमान दीप्तिधारी बालक श्रेणिकका मुख यद्यपि चंद्रमाके समान देदीप्यमान था तथापि निर्दोष, सदा प्रकाशमान, और समस्त कलंकोंसे रहित ही था। विशाल एवं अतिशय मनोहर हारोंसे भूषित उसका वक्षःस्थल राज्यभारके धारण करनेके लिये विस्तीर्ण था और अनेक प्रकारकी शोभाओंसे अत्यंत सुशो-भित था। कामिनी स्त्रियोंके फंसानेके लिये जाल समान उसकी दोनों भुजाएं ऐसी जान पड़ती थी मानों याच-

लोंको अभीष्ट दानकी देनेवाली हो मनोहर कल्पवृक्षकी शाखा ही हैं। उसके कटि रूपी वृक्षपर, करधनीमें, लगी हुई छोटीर घंटियोंके ब्याजसे शब्द करता हुवा, कामदेव सहित, करधनी रूपी महा सर्प निवास करता था। श्रेणिकके शुभ आकृतिके धारक, अनेक प्रकारके उत्तमोत्तम लक्षणोंसे युक्त, और अतिशय कांतिके धारण करनेवाले, दोनों चरण अत्यंत शोभित थे। तथा उस पुण्यात्मा एवं भाग्यवान कुमार श्रेणिकके अतिशय मनोहर शरीररूपी महलमें संपत्तिके साथ विवेक बढ़ता था, और अनेक प्रकारकी राजसंबंधी कलाओंके साथ ज्ञानवृद्धिको प्राप्त होता था।

यद्यपि कुमार श्रेणिक बालक था तथापि बुद्धिकी चतुराईसे वह बड़ा ही था और सज्जनोंका मान्य था। वह हरएक कार्यमें चतुर और सौभाग्य बुद्धि आदि असाधारण गुणोंका भी आकर था। इसने बिना परिश्रमके शीघ्र ही शास्त्ररूपी समुद्रको पार कर लिया था और क्षत्रिय धर्मकी प्रधानताके कारण अनेक प्रकारकी शस्त्रविद्याएं भी सीखली थीं। तथा भाग्यशाली जिस बालक श्रेणिक अनेक प्रकारके गुणोंसे मंडित उत्तम ज्ञान, बुद्धिसे भूषित था, उसके हाथ दानसे शोभित थे। इस प्रकार यौवन अवस्थाको प्राप्त, अत्यंत बलवान श्रेणिक अपनी सुन्दरता आदि सम्पदाओंसे संपन्न था, जिसे देख उसके माता पिता अत्यंत तुष्ट रहते थे। श्रेणिकके अतिरिक्त महाराज उपश्रेणिकके पांचसो पुत्र और भी थे जो अत्यंत पुण्यात्मा और उत्तमोत्तम शुभ लक्षणोंसे भूषित थे।

महाराज उपश्रेणिकके देशके पास ही उसका शत्रु चन्द्रपुरका राजा सोमशर्मा रहता था जो अपने पराक्रमके सामने समस्त जगतको तुच्छ समझता था। जिस समय महाराज उपश्रेणिकको यह पता लगा कि चन्द्रपुरका स्वामी सोमशर्मा अपने सामने किसीको पराक्रमी नहीं समझता, तो उन्होंने शीघ्र ही उसे अपने

आधीन करनेका विचारकर अनेक उपायोंसे उसे अपने आधीन तो कर लिया पर उसे पुनः ज्योंका त्यों राज्याधिकार दे दिया। सोमशर्मा जब महाराज उपश्रेणिकसे हार गया तो उसको बहुत दुःख हुवा और उसने मनमें यह बात ठान ली कि महाराज उपश्रेणिकसे इस अपमानका बदला किसी न किसी समयपर अवश्य लूंगा। तदनुसार उसने एक दिन यह चाल की कि सुवर्ण, धन, धान्य, मनोहर वस्त्र और उत्तमोत्तम आभूषणकी भेंट महाराज उपश्रेणिककी सेवामें भेजी उसके साथ एक चीत नामका घोड़ा भी भेजा। यह घोड़ा देखनेमें सीधा पर सर्वथा अशिक्षित, अतिशय दुष्ट एव अत्यन्त ही धोखेबाज था।

जिस समय महाराज उपश्रेणिकने चन्द्रपुरके राजा सोमशर्माकी भेजी हुई भेटको देखा तो वे सोमशर्माके मनके भीतरी अभिप्रायको न समझ उसके विनय भावपर अतिशय मुग्ध होकर उसकी बारम्बार प्रशंसा करने लगे और भेंटसे अपनेको धन्य भी मानने लगे। ऊपरसे ही मनोहर घोड़ेको देख वे मुक्त कण्ठसे यह कहने लगे कि अहा! यह राजा सोमशर्माका भेजा हुआ घोड़ा सामान्य घोड़ा नहीं है किन्तु समस्त घोड़ाओंका शिरोमणि अश्वरत्न है। मेरी घुड़सालमें ऐसा मनोहर घोड़ा कोई है ही नहीं, ऐसा कहते कहते उस घोड़ाकी परीक्षा करनेके लिए वे अपने आप उसपर सवार हो गये, और चढ़कर मार्गमें अनेक प्रकारकी शोभाओंको देखते हुवे वनकी ओर रवाने हुये।

जिस समय महाराज उपश्रेणिक वनके मध्यभागमें पहुंचे और आनंदमें आकर घोड़ेके कोड़ा लगाया फिर क्या था? कोड़ा लगते ही वह अशिक्षित एवं दुष्ट घोड़ा चक्कर खाकर बातकी बातमें ऐसे भयंकर वनमें निर्भयतासे प्रवेश कर गया जहाँ अजगरोंके फूत्कार शब्द हो रहे थे, रींछ भी भयंकर शब्द कर

रहे थे, बड़े २ हाथी भी चिंघाड़ रहे थे और बन्दर वृक्षोंसे गिर पड़ने पर भयंकर चित्कार शब्द कर रहे थे एवं जहां तहां भलीभांतिके पक्षियोंके भी शब्द सुनाई पड़ते थे। घोड़ेने उस वनमें प्रवेशकर, महाराज उपश्रेणिकको ऐसे अन्धकारमय भयंकर गडढेमें, जहां सूर्यकी किरण प्रवेश नहीं कर सकती थी पटक दिया और बातकी बातमें दृष्टिसे लुप्त हो गया।

अतिशय बलवान पुरुषोंको भी दुर्बल मनुष्योंके साथ कदापि वैर नहीं करना चाहिये क्योंकि दुर्बलके साथ भी किया हुआ वैर मनुष्योंको इस संसारमें अनेक प्रकारका अचिन्तनीय कष्ट देता है।

अहो! दुःखोंका समूह कैसा आश्चर्यका करनेवाला है। देखो! कहां तो मगधदेशका स्वामी राजा उपश्रेणिक और कहां अनेक प्रकारके भयंकर दुःखोंको देनेवाला भयानि वन? तथा अतिशय मनोहर राजगृहनगर? कहां अन्धकारमय गड्ढा? क्या किया जाय, वैरका फल ही ऐसा है, इसलिये उत्तम पुरुषोंको चाहिये कि वे उभयलोकमें दुःख देनेवाले इस परमवैरी वैर विरोधको अपने पास कदापि न फटकने दें।

जब लोगोंने महाराज उपश्रेणिकके लापता होनेका समाचार सुना तो सेनामें, देशमें, अनेक जनोंसे सर्वथा पूर्ण राजगृह-नगरमें एवं अन्यान्य नगरोंमें भी शोक और चिन्ता छा गई और हाहाकार मच गया। रणवासकी समस्त रानियां यह समाचार सुनते ही मूर्छित हो गईं और महाराजके वियोगमें एकदम करुणाजनक रोदन करने लगीं जितने केशविन्यास हार आदिक शृंगार थे उन सबको उन्होंने तोड़कर अलग फेंक दिये। चतुरंगिनी सेनाने और महाराज उपश्रेणिकके पुत्रोंने महाराजको ढूंढनेके लिए अनेक प्रयत्न किये किन्तु कहींपर भी उनका पता न लगा। किन्तु 'णमो अरिहन्ताणं, णमो सिद्धाणं' इत्यादि महामंत्रका ध्यान करते हुए महाराज उपश्रेणिक अंधकारमय एवं

दु:खोंके देनेवाले उसी गडढेमें पड़े अनेक प्रकारके कष्टोंको भोगते रहे।

जिस वनके भीतर भयंकर गड्ढेमें महाराज उपश्रेणिक पड़े थे उसी वनमें एक अत्यन्त मनोहर भीलोंकी पल्ली थी। उस पल्लीका स्वामी, समस्त भीलोका अधिपति क्षत्रिय यमदण्ड नामका राजा था। उसकी विद्युन्मती पटरानी अतिशय मनोहर और रूप एवं सौभाग्यकी खानि थी। इन दोनों राजा रानीके चन्द्रमाके समान उत्तम मुखवाली तिलकवती नामकी एक कन्या थी।

क्रीड़ा करनेका अत्यन्त प्रेमी राजा यमदण्ड, इधर उधर अनेक प्रकारकी क्रीड़ाओको करता हुवा उस गड्ढेके पास आया जिस गड्ढेमें महाराज उपश्रेणिक पड़े नाना प्रकारके कष्टोंको भोग रहे थे। गड्ढेके अत्यन्त समीप आकर जब महाराज उपश्रेणिकको उसने भयकर गड्ढेमें पड़ा देखा तो वह आश्चर्यसे अपने मनमें यह विचार करने लगा कि यह कौन है? यह कैसे इस दशाको प्राप्त हुवा? और इसे किसने इस प्रकारका भयंकर कष्ट दिया है?

कुछ समय इसी प्रकार विचार करतेर जब उसको यह बात मालूम हो गई कि ये राजगृहनगरके स्वामी महाराज उपश्रेणिक हैं तो झट वह अपने घोड़ेपरसे उतर पड़ा और अत्यन्त विनयसे उसने महाराज उपश्रेणिकके दोनों चरणोंको नमस्कार किया और विनयपूर्वक उनके पास बैठकर यह पूछने लगा—कि हे प्रभो! किस दुष्ट वैरीने आपको इस भयंकर गड्ढेमें लाकर गिरा दिया? और हे मगधेश! ऐसी भयंकर दशाको आप किस कारणसे प्राप्त हुवे? कृपाकर यह समस्त समाचार सुनाकर मुझे अनुग्रहीत करें। आपकी इस दुखमय अवस्थाको देखकर मुझे अत्यन्त दु:ख है।

जिस समय महाराज उपश्रेणिकने भीलोंके स्वामी यमदण्डका इस प्रकार भक्तिभरा वचन सुना तो उनका चित्त अत्यन्त प्रसन्न

हुआ और उन्होंने प्रिय वचनोंमें राजा यमदण्डके प्रश्नका इस प्रकार उत्तर दिया और कहा—मित्र! यदि तुमको अत्यन्त आश्चर्य करनेवाले मेरे वृत्तांतके सुननेकी अभिलाषा है तो ध्यान पूर्वक सुनो, मैं कहता हूँ—

मेरे देशके समीप देशमें रहनेवाला सोमशर्मा नामका एक चन्द्रपुरका स्वामी है। वह अपने पराक्रमके सामने किसीको भी पराक्रमी नहीं समझता था और बड़े अभिमानसे राज्य करता था। जिस समय मुझे उसके इस प्रकारके अभिमानका पता लगा तो मैंने अपने पराक्रमसे बातकी बातमें उसका अभिमान ध्वंस कर दिया और उसे अपना सेवक बनाकर पुनः मैंने ज्योंका त्यों उसे चन्द्रपुरका स्वामी बना दिया। यद्यपि उसने मेरी आधीनता स्वीकार तो कर ली पर उसने अपने कुटिल भावोंको नहीं छोड़ा इसलिए एक दिन उस दुष्टने नाना प्रकारके आभूषण उत्तम वस्त्र एवं धन धान्य सुवर्ण आदिक पदार्थ मेरी भेंटके लिये भेजें, और इन पदार्थोंके साथ एक घोड़ा भी भेजा।

यद्यपि वह घोड़ा ऊपरसे मनोहर था पर अशिक्षित एवं दुष्ट था। जिस समय उसकी भेजी हुई भेंट मैंने देखी तो मैं उसके कुटिलभावको तो समझ नहीं सका किंतु विना विचारे ही मैं उसके इस प्रकारके बर्तावको उत्तम बर्ताव समझकर प्रसन्न हो गया। भेंटमे भेजे हुवे उन समस्त पदार्थोंमें मुझे घोड़ा बहुत ही उत्तम मालूम पड़ा, इसलिये विना विचारे ही उस घोड़ेकी परीक्षा करनेके लिये मैं उस पर सवार होकर वनकी ओर चल पड़ा। जिस समय मै वनमें आया तो मैंने तो आनन्दमें आकर उसके कोड़ा मारा किंतु वह घोड़ा कोड़ेके इशारेको न समझकर एकदम ऊपर उछला और मुझे इस भयंकर गढ्ढेमें पटककर न जाने कहाँ चला गया? इसी कारण मैं इस गढ्ढेमें पड़ा हुआ इस प्रकारके कष्टोंको भोग रहा हूँ।

जब महाराज उपश्रेणिकने अपना समस्त वृत्तांत सुना दिया तो उन्होंने राजा यमदण्डसे भी पूछा कि हे भाई! तुम कौन हो और कैसे तुम्हारा यहाँ आना हुवा और तुम्हारी क्या जाति है?

महाराज उपश्रेणिकके समस्त वृत्तांतको जानकर और भले प्रकार उनके प्रश्नको भी सुनकर राजा यमदण्डने विनयभावसे उत्तर दिया कि हे प्रभो! समस्त भीलोंका स्वामी मै राजा यमदण्ड हूं और क्रीड़ा करता २ मैं इस स्थान पर आ पहुंचा हूं। मेरी जाति क्षत्रिय है और अपने राज्यसे भ्रष्ट होकर मैं इस पल्लीमें रहता हूं, इसलिये हे महाभाग! कृपाकर आप मेरे घर पधारिये और अपने चरणकमलोंसे मेरे घरको पवित्र कर मुझे अनुग्रहीत कीजिये।

महाराज उपश्रेणिकने तो अपने दुःखको दूर करनेके लिये उसे विनीत समझकर शीघ्र ही उसकी प्रार्थनाको स्वीकार कर लिया और उसके साथ साथ उसके घरकी ओर चल दिया।

यद्यपि राजा यमदण्ड क्षत्रियवंशी राजा था और उसका आचार विचार उत्तम गृहस्थोंके समान होना चाहिये था किंतु उसका सम्बन्ध अधिक दिनोंसे भीलोंके साथ हो गया था इसलिये उसकी क्रियाएं गृहस्थोंकी क्रियाओंके समान नहीं रही थीं—भीलोंकी क्रियाओंके समान हो गई थीं। महाराज उपश्रेणिकने जब उसके घर जाकर उसके गृहस्थाचारको देखा तो वे एकदम दंग रह गये और राजा यमदण्डसे कहा कि हे यमदण्ड! यद्यपि तुम क्षत्रिय राजा हो तथापि अब तुम्हारा गृहस्थाचार क्षत्रियोंके समान नहीं रहा है और मैं शुद्ध गृहस्थाचारपूर्वक बने हुए भोजनको ही खा सकता हूं। पवित्र एवं विशुद्ध ज्ञानी होकर मैं आपके घरमें भोजन नहीं कर सकता।

जिस समय राजा यमदण्डने महाराज उपश्रेणिकके इस प्रकारके वचनोंको सुना तो उसने तत्क्षण इस भांति विनयपूर्वक

कहा—हे प्रभो ! यदि आप ऐसे गृहस्थाचार संयुक्त मेरे घरमें भोजन करना नहीं चाहते हैं तो आप घबड़ायें नहीं, गृहस्थाचारपूर्वक भोजनके लिये मेरे यहां दूसरा उपाय भी मौजूद है। वह उपाय यही है कि मेरे अत्यन्त शुभ लक्षणोंको धारण करनेवाली, भले प्रकार गृहस्थाचारमें प्रवीण, एक तिलकवती नामकी कन्या है वह कन्या शुद्ध क्रियापूर्वक भोजन पानी आदिसे आपकी सेवा करेगी।

भीलोंके स्वामी यमदण्डके इस प्रकारके विनम्र वचनोंको सुनकर मगधदेशाधिपति महाराज उपश्रेणिक अत्यन्त प्रसन्न हुए और उसी दिनसे अपने पिताकी आज्ञासे कन्या तिलकवतीने भी महाराज उपश्रेणिककी सेवा करनी प्रारम्भ कर दी। कभी वह कन्या एक प्रकारका और कभी दूसरे प्रकारका मिष्ट भोजन बनाकर महाराजको प्रसन्न करने लगी। कभी महाराजके रोगको भलीभांति पहिचान वह उत्तम औषधियुक्त भोजन उनको कराती और कभी अतिशय मधुर शीतल जलसे महाराजके मनको संतुष्ट करती। इस प्रकार कुछ दिनोंके बाद औषधियुक्त भोजनोंसे विशेषतया उस कन्याके हाथसे भोजन करनेसे महाराज उपश्रेणिकका स्वास्थ्य ठीक होगया तथा महाराज उपश्रेणिक पूर्वकी तरह ज्योंके त्यों नीरोग होगये।

जबतक महाराज सरोग रहे तबतक तो मैं किस प्रकार नीरोग हूंगा ? मेरा यह रोग किस रीतिसे नष्ट होगा ? इत्यादि चिन्ता सिवाय महाराजके चितमें किसी विचारने स्थान नहीं पाया, किन्तु नीरोग होते ही नीरोगताके साथ२ उस कन्याके स्नेह, सेवा, रूप एवं सौंदर्यपर अतिशय मुग्ध होकर वे विचार करने लगे कि इस कन्याका रूप आश्चर्यकारक है और इसके मनोहर वचन भी आश्चर्य करनेवाले ही हैं। तथा इसकी यह मंथर गति भी आश्चर्य ही करनेवाली है। इसकी बुद्धि अतिशय

शुभ है, इसके दोनों नेत्र चकित हरिणीके समान चंचल एवं विशाल हैं। अर्ध चन्द्रके समान मनोहर इसका ललाट है और इसका मुख चंद्रमाकी कांतिके समान कांतिका धारण करनेवाला है। यह कोकिलाके समान अतिशय मनोहर शब्दोंको बोलनेवाली है, रूप एवं सौभाग्यकी खानि है, अतिशय मनोहर इस कन्याके ये दोनों स्तन, खजानेके दो सुवर्णमय कलशोंके समान उन्नत कामदेवरूपी सर्पसे कलंकित, अतिशय स्थूल है, और हर एक मनुष्यको सर्वथा दुर्लभ हैं और इसके दोनो स्तनोंके मध्यमें अत्यन्त मनोहर कामदेवरूपी ज्वरको दमन करनेवाली नदी है, इसके समस्त अंगोंकी ओर दृष्टि डालनेसे यही बात अनुभवमें आती है कि इस प्रकार सुन्दराकारवाली रमणीरत्न न तो कभी देखनेमें आई और न कभी सुननेमें आई, और न आवेगी।

महाराज उपश्रेणिक इसप्रकार कन्याके स्वरूपकी उधेड़बुनमें लगे थे कि इतनेमें ही राजा यमदंड उनके पास आये और महाराज उपश्रेणिकने कहा कि हे भीलोंके स्वामी यमदण्ड! यह तुम्हारी तिलकवती नामकी कन्या नाना प्रकारके गुणोंकी खानि एवं अनेक प्रकारके सुखोंको देनेवाली है, आप इस कन्याको मुझे प्रदान कीजिये क्योंकि मेरा विश्वास है कि मुझे इसीसे संसारमे सुख मिल सकता है।

महाराज उपश्रेणिकके इस प्रकारके वचनोंको सुनकर राजा यमदण्डने विनयभावसे कहा कि हे प्रभो! कहां तो आप समस्त मगधदेशके प्रतिपालक और कहां मेरी अत्यंत तुच्छ यह कन्या? हे महाराज! देवांगनाओंके समान अतिशय रूप और सौभाग्यकी खानि आपके अनेक रानियां हैं तथा कुमार श्रेणिक पहिले आपके ही पुत्र हैं जो अतिशय बलवान, धीर और समस्त पृथ्वीतलकी भलेप्रकार रक्षा करनेवाले हैं, इसलिये अत्यन्त तुच्छ यह मेरी प्यारी पुत्री प्रथम तो आपके किसी कामकी नहीं। यदि दैवयोगसे इसका सम्बन्ध आपसे हो भी जाय तो हे प्रभो! क्या

यह अन्य रानियों द्वारा घृणाकी दृष्टिसे देखी जानेपर उस अप-मानसे उत्पन्न हुई पीड़ाको सहन कर सकेगी ? और हे प्रजा-पालक ! प्रथम तो मुझे विश्वास नहीं कि इसके कोई पुत्र होगा ।

कदाचित् दैवयोगसे इसके कोई पुत्र भी उत्पन्न होजाय और श्रेणिक आदि कुमारोंका वह सदा दास बना रहे, तो भी उसको अवश्य दुःख ही होगा, और पुत्रके दुःखसे दुःखित यह मेरी प्राणस्वरूप पुत्री अन्य रानियों द्वारा अवश्य ही अपमानित रहेगी, इसलिये उपरोक्त दुःखोंके भयसे मैं अपनी इस प्यारी पुत्रीका आपके साथ विवाह करना उचित नहीं समझता ।

हां ! यदि आप मुझे इस प्रकारका वचन देवें कि जो इससे पुत्र उत्पन्न होगा वही राज्यका उत्तराधिकारी बनेगा तो मैं हर्षपूर्वक आपकी सेवामें अपनी पुत्रीको समर्पण कर सकता हू । आप जो उचित न्याय एवं अन्याय समझे सो करें, आप मेरे स्वामी हैं और मैं आपका सेवक हूं ।

राजा यमदंडके इस प्रकारके वचन सुनकर महाराज उप-श्रेणिकने उसकी समस्त प्रतिज्ञाओंको स्वीकार किया और प्रसन्नता-पूर्वक उसकी तिलकवती पुत्रीके साथ विवाह कर, उसके साथ भांति भांतिकी क्रीड़ा करते हुवे महाराज उपश्रेणिक विशाल संपत्तिके साथ राजगृह नगरको रवाना हुए और मार्गमें अनेक प्रकार वन उपवनोंकी शोभाओंको देखते राजगृह नगरके समीप आ पहुंचे । महाराज उपश्रेणिकके आनेका समाचार सारे नगरमें फैल गया । महाराज उपश्रेणिकका शुभागमन सुनते ही समस्त नगरनिवासी मनुष्य, राजसेवक एवं महाराजके समस्त पुत्र, अपनेको धन्य और पुण्यात्मा समझकर, उनके दर्शनोंके लिये अतिशय लालायित होकर शीघ्र ही उनके सामने स्वागतके लिये आये और आकर विनयपूर्वक महाराजके चरणोंमें नमस्कार किया । चिरकालसे महाराजके वियोगसे दुःखित उनके दर्शनसे

संतुष्ट हो समस्त जन उपश्रेणिक महाराजकी ओर प्रेमपूर्वक टकटकी लगाकर देखने लगे और अतिशय प्रेमपूर्वक वार्तालाप करते हुवे उन लोगोंने कुछ समय तक वहीं ठहरकर पीछे महाराजसे नगरमें प्रवेश करनेके लिये प्रार्थना की तथा महाराजके चलने पर समस्त नगरनिवासी जनोंने महाराजके पीछे२ राजगृह नगरकी ओर प्रस्थान किया।

महाराज उपश्रेणिकके नगरमें प्रवेश करते ही उनके शुभागमनके उपलक्षमें अतिशय उत्सव मनाया गया। पटह, शंख, काहल, दुंदुभि, आदि मनोहर बाजे बजने लगे, तथा उत्तमोत्तम हावभावोंके दिखानेमें प्रवीण, नृत्यकलामें अति चतुर, देवांगनाओंके मदको चूर करनेवाली और अति सुन्दर वेश्यायें अधिक आनंद नृत्य करने लगीं। महाराज उपश्रेणिक बहुत दिनोंके बाद नगरके देखनेसे अति आनंदित हुये और सर्वांगसुन्दरी महाराणी तिलकवतीके साथ२ अनेक प्रकारके तोरणोंसे शोभित, नीली, पीली आदि ध्वजाओंसे सुशोभित, चित्तको हरण करनेवाले, नाना प्रकारके चौकोंसे मंडित राजगृह नगरमें प्रवेश किया।

राजगृह नगरके राजमार्गमें जाते हुवे महाराज उपश्रेणिकको देखकर अनेक नगरवासी अपने मनमें इस प्रकार कल्पना करके कहते थे कि अहा! पुण्यका माहात्म्य विचित्र है। देखो, कहां तो अत्यंत धीरवीर महाराज उपश्रेणिक और कहां उत्तमांगी, चंद्रमुखी, मृगाक्षी, लक्ष्मीके समान अति मनोहर स्थूल उन्नत स्तनोंसे मंडित कन्या तिलकवती? कहां राजा उपश्रेणिकका विशाल वनमें गढ्ढेमें गिरना और निकलना और कहां पीछे इस कन्याके साथ विवाह?

जान पड़ता है कि इस कन्याकी प्राप्तिके लिये महाराज उपश्रेणिकको समस्त पुण्य मिलकर वहां ले गये थे। इसमें सन्देह नहीं कि जो मनुष्य पुण्यवान हैं उनके लिये विपत्ति भी संपत्ति

रूप और दुःख सुखस्वरूप हो जाता है। बुद्धिमान मनुष्योंको चाहिये कि वे सदा पुण्यका ही संचय करें।

इसप्रकार नगरवासियोंके कथा कौतूहलोंको सुनते हुए महाराज उपश्रेणिकने रानी तिलकवतीके साथ साथ अनेक प्रकारकी शोभाओंसे सुशोभित राजमंदिरमें प्रवेश किया। राजमंदिरमें प्रवेश करने पर महाराज उपश्रेणिकने तिलकवतीके उत्तमोत्तम गुणोंसे मुग्ध हो उसे अतिशय मनोहर क्रीड़ा योग्य महलमें ठहराया और नवोढा तिलकवतीके साथ अनेक प्रकारकी क्रीड़ा करने लगे।

कभी कभी तो महाराज कमलके रसलोलुप भँवरेके समान रानी तिलकवतीके मुखकमलके रसका आस्वादन करते, और कभी कभी चन्दनलतापर गन्धलोलुप भ्रमरके तुल्य उसके साथ उत्तान-क्रीड़ा करते। जान पड़ता था कि स्तनरूपी दो मनोहर क्रीड़ा-पर्वतोंसे युक्त महारानी तिलकवतीका वक्षःस्थल वन है और महाराज उपश्रेणिक उस वनमे विहार करनेवाले मनोहर हिरण हैं।

जब महाराज उपश्रेणिक अपने हाथोंसे महारानी तिलकवतीके स्तनोंपरसे अति मनोहर वस्त्र खींचते थे तब जान पड़ता था कि उनके स्तनरूपी खजानेके कलशों पर उनकी रक्षार्थ दो सर्प ही बैठे थे। महारानी तिलकवतीके, मैथुनरूपी जलसे युक्त कामदेवरूपी मनोहर कमलके आधारभूत, दोनों जंघारूपी सरोवरके बीच महाराज उपश्रेणिक ऐसे मालूम पड़ते थे मानों सरोवरमें हँस ही क्रीड़ा कर रहा है। रानी तिलकवतीके साथ अनेक प्रकारकी क्रीड़ा कर महाराज उपश्रेणिकने उसे केवल क्रीड़ाके ताड़नोंसे व्याकुल ही नहीं किया था किन्तु निर्दयताके साथ वे उसे चुम्बनोंसे भी व्याकुल करते थे।

इसप्रकार प्रेमपूर्वक चिरकाल क्रीड़ा करनेसे रानी तिलकवतीके चलाती (चलातकी) नामका उत्तम पुत्र उत्पन्न हुआ और अत्यंत

भाग्यशाली वह बालकबी थोड़े ही कालमें बड़ा हो गया। इस रीतिसे पुण्यके माहात्म्यसे अत्यन्त मनोहर, नवीन स्त्रियोंमें उत्तम, अत्यन्त उज्ज्वल, हरएक कलामें प्रवीण, समस्त पुण्य-फलोंसे उत्पन्न उत्तम रूपवाली और समस्त देवांगनाओंके समान अत्यन्त उत्कृष्ट, भाग्यवती तिलकवतीको महाराज उपश्रेणिक नाना प्रकारकी क्रीड़ाओंसे तुष्टकर थे, तथा मोहसे नाना प्रकारकी कामको पैदा करनेवाली चेष्टाओंको करनेवाली, अत्यन्त मनोहर, अपने शरीरको दिखानेवाली, अत्यन्त प्रौढ़ा, देदीप्यमान वस्त्रोंसे शोभित, मुकुट जड़ित मणियोंकी किरणोंसे अधिक शोभायमान, अत्यंत निर्मल रूपवाली और पुण्यकी मूर्ति तिलकवती भी अपने हावभावोंसे, नानाप्रकारके भोगविलासोंसे महाराज उपश्रेणिकके साथ क्रीड़ा कर उन्हें तृप्त करती थी।

सच है:—धर्मात्मा प्राणियोंको धर्मकी कृपासे ही उत्तम कुलमे जन्म मिलता है, धर्मकी कृपासे ही उत्तमोत्तम राज-मंदिर मिलते है, धर्मके माहात्म्यसे ही मनोहर रूपवाली भाग्यवती सती सर्वोत्तम स्त्रीरत्नकी प्राप्ति होती है, धर्मसे ही समस्त प्रकारकी आकुलता रहित विभूति प्राप्त होती है, एवं अत्यन्त आनन्दको देनेवाले धर्मसे ही मोक्ष-सुख भी मिलता है, इसलिये उत्तम मनुष्योंको उचित है कि वे उत्तमोत्तम राज्य, स्वर्ग, मोक्ष इत्यादि सुखोंको प्राप्त करानेवाले धर्मके फलोंको भलीभांति जानकर धर्ममें अपनी बुद्धिको स्थिर कर धर्मको धारण करें।

इस प्रकार महाराज श्रेणिकके जीव भविष्यकालमें होनेवाले श्री पद्मनाभ तीर्थंकरके चरित्रमें महाराज उपश्रेणिकके नगर प्रवेशको कहनेवाला द्वितीय सर्ग समाप्त हुवा।

तीसरा सर्ग

कुमार श्रेणिकका राजगृह नगरसे निष्कासन

समस्त कर्मोंसे रहित, प्राचीन, मनोहर, अखण्ड केवलज्ञान रूपी सूर्यके धारक, प्रथम तीर्थंकर श्री ऋषभदेव भगवानको मैं मस्तक झुकाकर नमस्कार करता हूँ।

अनन्तर इसके महाराज मगधेश्वर उपश्रेणिकके मनमें इस प्रकारकी चिन्ता हुई कि मेरे बहुतसे पुत्र हैं इनमेंसे मैं किस पुत्रको राज्यका भार दूँ? इस प्रकार अतिशय दूरदर्शी महाराज उपश्रेणिकने इस बातको चिरकाल तक विचार कर, और इस बातको भी भलीभांति स्मरण कर कि तिलकवतीके पुत्र चलातकीको मैंने राज दे दिया है, किसी ज्योतिषीको एकांतमे बुलाकर पूछा—

हे नैमित्तिक! तू ज्योतिष शास्त्रका जाननेवाला है अतः इस बातको शीघ्र विचार कर कह कि मेरे बहुतसे पुत्रोंमें राज्यका भोगनेवाला कौन पुत्र होगा?

महाराजकी इस बातको सुनकर ज्योतिर्विद् नैमित्तिक अष्टांग निमित्तोंसे भलीभांति महाराजके प्रश्नको विचार कर बोला— महाराज! मैं ज्योतिष शास्त्रके बलसे "आपके पुत्रोंमेंसे राज्यका भोगनेवाला कौनसा पुत्र होगा" कहता हूँ, आप ध्यान लगाकर सुनिये।

उसके जाननेका पहिला निमित्त तो यह है-कि आपके जितने पुत्र हैं सब पुत्रोंको आप एक एक घड़ेमें शक्कर भरके दीजिये उनमें जो पुत्र किसी दूसरे मनुष्य पर उस घड़ाको रखकर निर्भय सिंहके द्वारमें प्रवेश कर अपने घड़ेमें खेलता हुवा चला आवे तो जानिये कि वही पुत्र राज्यका अधिकारी होगा।

(२) दूसरा निमित्त यह है-कि आप अपने सब कुमारोंको एक २ नवीन घड़ा दीजिये और उनसे कहिये कि हरएक ओसके जलसे उस घडेको भरकर ले आवे। जो पुत्र ओससे घड़ाको भरकर ले आवेगा अवश्य वही पुत्र राजा होगा।

(३) तीसरा निमित्त यह भी है कि आप अपने सब पुत्रोंको एकसाथ भोजन करनेके लिए बिठालिये और आप उन पुत्रोंको खीर शक्कर पूवे और दाल-भात आदि सर्वोत्तम स्वादिष्ट पदार्थोंको एकसाथ बैठाकर खिलाइये, जिस समय वे भोजनके स्वादमें अत्यन्त लीन हो जावें, उस समय भयंकर डाढ़ोंवाले अत्यन्त क्रूर तथा वाघोंके समान मत्त कुत्तोंको धीरेसे छुड़वा दीजिये, उस समय जो उन भयंकर कुत्तोंको हटाकर आनन्दपूर्वक निर्भयतासे भोजन करेगा वही पुत्र आपके समान इस मगधदेशका निःसंदेह राजा हो सकेगा।

(४) चौथा निमित्त यह समझिये—जिस समय नगरमे आग लगे उस समय जो पुत्र सिंहासन छत्र चवर आदि पदार्थोंको अपने शिरपर रखकर नगरसे बाहिर निकले, समझ लीजिये कि मुकुटका धारण करनेवाला वही राज्यका भोगनेवाला होगा।

और हे महाराज! राज्यकी प्राप्तिका (५) पांचवा निमित्त यह भी है:—थोडेसे पिटारोंको उत्तमोत्तम [illegible] तथा खाजे आदि मिष्टान्नोंमे भरवाकर, उनके मुंहको अच्छी तरहसे बंद कराकर और मुहर लगवाकर हरएकके घरमें रखवा दीजिये तथा उन पिटारोंके साथ शुद्ध निर्मल मधुर जलसे पूर्ण एकर उत्तम घड़ेको भी मुंह बन्द कर उसी तरह प्रत्येकके घरमें रखवा दीजिये फिर प्रत्येक कुमारको एकर घड़ेमेंसे पानी तथा एकर पिटारेमेंसे लड्डू आदिके खानेकी आज्ञा दीजिये। उनमेंसे जो कुमार जलसे भरे हुवे घड़के मुखको बिना खोले ही पानी पीलेवे तथा पिटारेसे

बिना खोले ही लड्डू आदि पदार्थोंको खा लेवे, समझ लीजिये कि वही पुत्र राज्यका भोगनेवाला होगा।

इस प्रकार नैमित्तिकके बताये हुए पांच निमित्तोंको सुनकर महाराजने उस नैमित्तिकको विदा किया और ज्योतिषीके बतलाये हुवे उन निमित्तोंसे कुमारोंकी परीक्षा करनेके लिये स्वयं ऐसा विचार करने लगे कि आश्चर्यकी बात है कि राज्य तो मैंने चलातकीको देनेके लिये दृढ़ संकल्प कर लिया है, लेकिन अब नहीं जान सकता कि इन निमित्तोंसे परीक्षा करने पर राज्यका भोगनेवाला कौन ठहरेगा?

कुछ समय बीतने पर महाराजने एक समय अपने समस्त पुत्रोंको सभामें बुलाया और सरल स्वभावसे वे लोग महाराजकी आज्ञाके अनुसार सभामें आकर अपने २ स्थानों पर बैठ गये। उनको भलीभांति बैठे हुवे देखकर महाराजने कहा—हे पुत्रों! मैं कहता हूं, सुनो आप लोग एक २ शक्करका घड़ा लेकर सिंहद्वारकी ओर जाइये।

महाराजके इस वचनको सुनकर महाराजकी आज्ञाके पालन करनेवाले सब कुमार महाराजकी आज्ञासे एक२ शक्करके घड़ेको स्वयं लेकर सिंहद्वारकी ओर गये तथा थोड़ी देर वहांपर ठहरकर अपने२ घरोंको चले आये। पर चतुर कुमार श्रेणिक किसी अन्य सेवकके सिरपर घड़ेको रखवाकर सिंहद्वारमें गया तथा पीछे खेलता हुवा अपने घरको चला आया। जब महाराज उपश्रेणिकने यह बात सुनी तब वे चकित होकर रह गये और अपने मनमें विचार करने लगे कि निःसंदेह भाग्यशाली श्रेणिक-कुमार ही राज्यका अधिकारी होगा, अब मैं अपने राज्यको चलाती कुमारके लिये कैसे दे सकूंगा?

इस प्रकार कुछ समय तक विचार करते२ महाराजने दूसरे निमित्तकी परीक्षा करनेके लिये अपने पुत्रोंको बुलाया और कहा—

हे पुत्रो! तुम सब आज फिर मेरी बातको सुनो। सब लोग एक२ नवीन घड़ा लो और उसको अपनी चतुरतासे ओसके जलसे मुँह तक भरकर लाओ।

महाराजका वचन सुनते ही वे समस्त राजकुमार सबेरा होते ही बड़े उत्साहके साथ ओसके जलसे घड़ोंको भरनेके लिये अनेक प्रकारके तृणयुक्त जगहों पर गये और वहां पर ओसके जलसे भींगे तृणोंको देखकर अत्यन्त प्रसन्न हो बड़े प्रयत्नसे तृणोंके जलको ग्रहण करनेके लिये अलग अलग बैठ गये। जिस समय वे उस ओसके पानीको नवीन घड़ामें भरते थे घड़ेके भीतर जाते ही क्षणभरमें वह ओसका पानी सूख जाता था। इस तरह ओसके जलसे घड़ा भरनेके लिये उन्होंने यथाशक्ति बहुत परिश्रम किया और भांति भांतिके प्रयत्न किये किंतु उनमेंसे एक भी कुमार घड़ाको न भर सका किन्तु एकदम घबड़ाकर सबके सब कुमार अपने२ स्थानोंमें चुपचाप बैठ गये।

बहुतकाल बैठनेपर जब उन्होंने यह बात निश्चय समझ ली कि घड़े नहीं भरे जा सकते तब चलाती आदि सब राजकुमार महाराजकी इस परीक्षामें अनुत्तीर्ण हो लज्जाके भरे मुख नीचे किये हुवे अपने२ घरोंको चले गये, परन्तु अत्यन्त बुद्धिमान कुमार श्रेणिक महाराजकी आज्ञा पालन करनेके लिये जिस प्रदेशमें ओसके जलसे भीगे हुवे बहुत तृण थे, गया और उन तृणोंपर उसने एक कपड़ा डाल दिया।

जिस समय वह कपड़ा ओसके जलसे भीग गया तब उस भीगे कपड़ेको निचोड़२ कर उस जलसे घड़ेको अच्छी तरह भरकर वह अपने घर ले आया, और ओसके जलसे भरे हुवे उस घड़ेको महाराज उपश्रेणिकके सामने रख दिया। महाराजने जिस समय कुमार श्रेणिक द्वारा लाये ओसके जलसे भरे हुवे घड़ेको देखा तो श्रेणिकको अत्यन्त बुद्धिमान समझकर वे चितासे

व्याकुल हो गये और मनमें विचार करने लगे कि अवश्य यह श्रेणिक ही राज्यका भोगनेवाला होगा, किन्तु मैंने जो यह वचन दे दिया है कि राज्य चलातीकुमारको ही दिया जायगा, न जाने इस वचनकी क्या गति होगी ?

इस प्रकार कुमार श्रेणिकको दोनों परीक्षाओंमें उत्तीर्ण देखकर पुन: राज्यकार्यकी परीक्षाके लिए महाराज उपश्रेणिकने श्रेणिक आदि समस्त पुत्रोंको भोजनके लिये अपने घरमें बुलाया। जिस समय समस्त एकसाथ भोजन करनेके लिये बैठ गये तब बड़े आदरके साथ उनके सामने सुवर्णोंके बड़े बड़े थाल रख दिये गये और उन थालोंमें उनके लिये खाजे, घेवर, मोदक, खीर, मीठामाड़, घी मूंगका मिष्ट स्वादिष्ट चूरा, उत्तम दही और अनेक प्रकारके पके हुवे अन्न तथा मीठा भात, और भी अनेक प्रकारके भोजन तथा पूवा भिगोड़े आदिक अनेक मनोहर मिष्टान्न परोसे गये। जिस समय क्षुधासे पीड़ित तथा स्वादके लोलुप सब कुमार भोजन करने लगे और भोजनके स्वादके आनन्दमें मग्न हुये, तब महाराज उपश्रेणिककी आज्ञासे राजसेवकोंने भयंकर कुत्तोंको छोड़ दिया। फिर क्या था ? वे भयंकर कुत्ते सुगंधित उत्तम भोजनको देखकर उसी ओर झुके और भौंकते हुवे समस्त कुत्ते राजकुमारोंके भोजनपात्रों पर बातकी बातमें टूट पड़े।

भोजनपात्रोंके ऊपर उन कुत्तोंको टूटते हुए देखकर मारे भयसे कांपते हुवे राजकुमार अपने अपने भोजनके पात्रोंको छोड़कर एकदम वहांसे भगे और आपसमें हंसी करते हुवे तितर बितर होकर अपने२ घरोंमें चले गये। बुद्धिमान कुमार श्रेणिकने जब यह दृश्य देखा कि ये कुत्ते आगे बढ़े चले ही आ रहे हैं और काटनेके लिये उद्यत हैं तब उसने अपनी बुद्धिसे उन सब कुत्तोंको दूर हटाया और दूसरे २ कुमारोंकी पत्तलोंको

उन कुत्तोंके सामने फेंककर उन्हें बहुत दूर भगा दिये और आनन्दसे भोजन करने लग गया।

इस बातको सुनकर महाराज उपश्रेणिक फिर भी अत्यन्त चिन्तासागरमें निमग्न हो गये और विचारने लगे कि मैं अब इस उत्तम राज्यको चलातीकुमारको किसी रीतिसे प्रदान करूं?

एक समय जब नगरमें भयंकर आग लगी तथा ज्वालासे समस्त नगर जलने लगा और नगरके लोग जहां तहां भागने लगे तब कुमार श्रेणिक तो झट सिंहासन छत्र आदि सामानको लेकर वनको चला गया, शेष राजकुमार कोई हाथमें भाला लेकर वनको गया और कोई खड्ग लेकर, कोई घोड़ा आदि लेकर कोई वनको गये। इस बातको सुनकर फिर भी महाराज उपश्रेणिक मनमें अत्यत दुःखित हुवे तथा सोचने लगे कि चलाती पुत्र किस रीतिसे इस राज्यका भोगनेवाला बने?

ज्योतिषीकी बतलाई हुई इतनी परीक्षाओंमें कुमार श्रेणिकको उत्तीर्ण देख महाराज उपश्रेणिकको संतोष न हुवा अतएव उन्होंने ज्योतिषीके बतलाये हुवे अन्तिम निमित्तकी परीक्षाके लिये फिर भी किसी समय अपने राजकुमारोंको बुलाया तथा प्रत्येक घरमें महाराज उपश्रेणिकने अत्यंत मधुर लड्डुओंसे भरे हुवे एक पिटारेका मुख बंद कर रखवा दिया और उसके साथमें अत्यंत निर्मल जलसे भरा हुवा एक २ नवीन घड़ा भी रखवा दिया।

इन सब बातोंके पीछे लड्डुओंके खानेके लिये और पानी पीनेके लिये समस्त राजकुमारोंको महाराज उपश्रेणिकने आज्ञा भी दी। कुमार श्रेणिकके अतिरिक्त जितने राजकुमार थे सबने उन लड्डुओंसे भरे हुवे पिटारेको एकदम हाथमें लेकर बिना विचारे ही शीघ्र खोल डाला और अपनी भूखकी शांतिके लिये लड्डु खाना आरम्भ कर दिया तथा प्यास लगने पर घड़ोंके

मुंह खोलकर उनसे पानी पिया परन्तु कुमार श्रेणिक, जो उन सब कुमारोंमें अत्यंत बुद्धिमान था चट महाराजके मनका तात्पर्य समझ पिटारेके मुखको बिना ही उघाड़े उसको लेकर इधर उधर हिलाने लगा और इस प्रकार उस पिटारेसे निकले हुवे चूर्णको खाकर उसने अपनी क्षुधाकी शान्ति की तथा जहां पर घड़ा रक्खा था वहां जो जल घड़ेसे बाहिर इकट्ठा हुवा था उसीसे अपनी प्यास बुझाई किंतु घड़ेके मुखको खोलकर पानी नहीं पिया।

अनंतर महाराज उपश्रेणिकने समस्त राजकुमारोंको अपने२ घर जानेके लिये आज्ञा दी। परीक्षासे राज्यकी प्राप्तिके लिये सब चिह्न धीर वीर भाग्यशाली कुमार श्रेणिकमें देखकर महाराज श्रेणिक अपने मनमें इस प्रकार चिंता करने लगे, कि ज्योतिषीके बतलाये निमित्तोंसे कुमार श्रेणिक सर्वथा राज्यके योग्य सिद्ध हो चुका, अब मैं किस रीतिसे चलाती पुत्रको राज्य दूं? मैं पहिले यह वचन दे चुका हूं कि यदि राज्य दूंगा तो चलातीको ही दूंगा, किन्तु ज्योतिषी द्वारा बतलाये हुवे निमित्तोंसे राजकुमार श्रेणिक उपयुक्त ठहरता है।

अब मैं पहिले दिये हुवे अपने वचनकी कैसे रक्षा करूं? हां! यह बात बिलकुल ठीक है कि जिसका भाग्य बलवान होता है उसको राज्य मिलता है इसमें जरा भी सन्देह नहीं। इस प्रकार अत्यंत भयंकर चिंता-सागरमें गोता लगाते हुवे महाराज उपश्रेणिकने अत्यंत बुद्धिमान सुमति तथा मतिसागर नामके मंत्रियोंको तथा इनसे अतिरिक्त अन्य मंत्रियोंको भी बुलाया और उनसे इस प्रकार अपने मनका भाव कहा—

हे मंत्रियो! आप सब लोग अत्यंत बुद्धिमान् तथा श्रेष्ठ हैं। मेरे मनमें एक बड़ी भारी चिन्ता है जिससे मेरा सब शरीर

सूखा जाता है, उस चिंताकी निवृत्ति किस रीतिसे होगी इस पर विचार करो।

महाराजकी इस विचित्र बातको सुनकर अन्य मंत्रियोंने तो कुछ भी उत्तर न दिया पर अत्यंत बुद्धिमान् सुमति नामके मंत्रीने कहा-हे प्रभो! हे राजन्! हे समस्त पृथ्वीके स्वामी! हे समस्त वैरियोंके मस्तकोंको नीचे करनेवाले! महाभाग! आप सरीखे नरेन्द्रोंको किस बातकी चिंता हो सक्ती है? हे प्रभो! देवोंके घोड़ोंको भी अपने कला कौशलसे जीतनेवाले अनेक घोड़े आपके यहां मौजूद हैं, जो कि अपने खुरोंके बलसे तमाम पृथ्वीका चूर्ण कर सकते हैं, और आपकी भक्तिमें सदा तत्पर रहते हैं।

अपने दांतरूपी खडगोंसे तमाम पृथ्वीको विदारण करनेवाले अंजन पर्वतके समान लम्बे चौड़े आपके यहां अनेक हाथी मौजूद हैं। हे राजेन्द्र! आपके मंदिरमें भलीभांति आपकी आज्ञाके पालन करनेवाले अनेक पदाति (सेना) भी मौजूद हैं और रथी शूरवीर भी आपके यहां बहुत हैं, जो कि संग्राममें भलीभांति आपको आज्ञाके पालन करनेवाले हैं। आपको किसी वैरीकी भी चिंता नहीं है क्योंकि आपके देशमें आपका कोई वैरी भी नजर नहीं आता, आपमें धन तथा राज्यका कोई बांटनेवाला (दायाद) भी नहीं है और आपके पुत्र भी आपकी आज्ञाके पालन करनेवाले हैं।

आपके राज्यमें कोई आपको विरोधी कुटिल दृष्टिगोचर नहीं होता फिर हे प्रभो! आपके मनमें किस बातकी चिंता है? आप उसे शीघ्र प्रकाशित करें, उसको दूर करनेके लिये अनेक उपाय मौजूद हैं, उसकी शीघ्र ही निवृत्ति हो सकती है। यदि आप इस समय उसको नहीं बतलायेंगे सो ठीक नहीं, क्योंकि राजाके चिंताग्रस्त होनेसे पुरवासी मंत्री आदिक सब ही चिंताग्रस्त होजाते हैं, उनको भी दुःख उठाना पड़ता है क्योंकि यथा राजा

तथा प्रजा अर्थात् जिस प्रकारका राजा हुवा करता है उसकी प्रजा भी उसी प्रकारकी हुआ करती है।

इस प्रकार अत्यन्त बुद्धिमान् सुमति नामक मंत्रीकी इस बातको सुन महाराज उपश्रेणिक बोले—हे सुमते! मुझे देश आदि अथवा पुत्र आदिकी ओरसे कुछ भी चिंता नहीं है, किन्तु चिंता मुझे इसी बातकी है कि मैं इस राज्यको किस पुत्रको प्रदान करूं? मंत्रीने उत्तर दिया—

हे अत्यन्त बुद्धिमान महाराज! आपका सुयोग्य पुत्र कुमार श्रेणिक है उसीको बेधड़क राज्य दे दीजिये। मंत्रीकी बातको सुनकर महाराज उपश्रेणिकने कहा—हे मंत्रिन्! जिस समय मेरे शत्रु द्वारा भेजे हुवे घोड़ाने मुझे वनमें पटक दिया था उस समय यमदण्ड नामक भिल्ल राजाने वनमें मेरी सेवा की थी, तथा उसकी पुत्री तिलकवतीने अपनी अतुलनीय सेवासे एक तरह मुझे पुनः जीवित किया था। अकस्मात् उसी पुत्रीके साथ मेरा विवाह हो गया।

विवाहके समय तिलकवतीके पिताने यह मुझसे कौल करा लिया था कि यदि आप इस पुत्रीके साथ अपना विवाह करना चाहते हैं तो मुझे यह वचन दे दीजिये कि, इससे जो पुत्र होगा वही राज्यका अधिकारी होगा, नहीं तो मैं अपनी पुत्रीका विवाह आपके साथ नहीं करूंगा। मैंने उस तिलकवतीके सौंदर्य एवं गुणों पर मुग्ध होकर उसके पिताको उस प्रकारका वचन दे दिया था कि मैं इसीके पुत्रको राज्य दूंगा किंतु मैंने राज्य किसको देना चाहिये, यह बात जिस समय ज्योतिषीने पूछी तो उसने ज्योतिष विद्यासे यही कहा कि इस महाराज्यका अधिकारी कुमार श्रेणिक ही है।

अब बताइये ऐसी दशामें मैं क्या करूं और राज्य किसको दूं? यदि मैं चलातीकुमारको राज्य न देकर कुमार श्रेणिकको

राज्य प्रदान करूं और अपने वचनका ख्याल न रक्खूँ तो संसारमें मेरा जीवन सर्वथा निष्फल है। मुझे ऐसा मालूम होता है कि यदि मैं अपने वचनका पालन न कर सकूँगा तो मेरा पहिले कमाया हुआ सब पुण्य भी बिना प्रयोजनका है क्योंकि मल मूत्र आदि सात धातुओंसे बना हुवा यह शरीर पुण्य रहित निस्सार है अर्थात् किसी कामका नहीं।

इसमें किसी प्रकारका संदेह नहीं कि चंचल जीवनकी अपेक्षा इस शरीरमें सत्य वचन ही सार है, अर्थात् जो कहकर वचनका पालन करता है वही मनुष्य आर्य है और उत्तम है किंतु जो अपने वचनको पालन नहीं करता है वह उत्तम नहीं। क्योंकि जिस मनुष्यने संसारमें अपने वचनकी रक्षा नहीं की उसने उपार्जन किये हुवे पुण्यका सर्वथा नाश कर दिया, और यह बात भी है कि ससारमें शरीर सर्वथा विनाशिक है।

जीवन बिजलीके समान चंचल है और सब प्रकारकी सम्पदायें भी पलभरमें नष्ट होनेवाली है। यदि स्थिर है तो एक वचन ही है ऐसा सब स्वीकार करते हैं। ऐसा समझकर हे मन्त्रिन्! सुमते! मैंने जो वचन कहा है उस वचनपर तुम्हें भलीभांति विचार करना चाहिये जिससे कि संसारमें मेरा जीवन सार्थक समझा जावे, निरर्थक नहीं। इस प्रकार जब महाराज उपश्रेणिकने कहा तब मतिसागर नामक मंत्री बोला—

हे महाराज! इस थोड़ीसी बातके बिचारनेमें आप क्यों चिन्ता करते हैं? क्योंकि चिन्ता स्वर्ग राज्यकी लक्ष्मीको बिकार-युक्त बना सकती है फिर थोड़ीसी बातके लिए चिंता करना क्या बड़ी बात है? मैं अभी कुमार श्रेणिकको देशके बाहिर निकाले देता हूँ, आप चिन्ता छोड़िये। इस चिन्तामें क्या रक्खा है? मतिसागर मंत्रीकी अपने अनुकूल इस बातको सुनकर

महाराज उपश्रेणिक मनमें अत्यन्त प्रसन्न हुवे तथा उस मंत्रीसे यह बात भी कहते हुवे—

हे मंत्रिन्! इस कार्यको तुम शीघ्र करो, इसमें देरी करना ठीक नहीं है। इस प्रकार महाराज उपश्रेणिककी आज्ञाको शिरपर धारण कर वह मतिसागर नामका मंत्री कुमार श्रेणिकके समीपमें गया। जिससमय वह कुमारके पास गया तो अपने पास बुद्धिमान मतिसागर मंत्रीको आते देखकर अत्यन्त चतुर कुमार श्रेणिकने उसका बड़ा भारी सम्मान किया और परस्परमें बड़े स्नेहसे उन दोनोंने कुशल भी पूछी। थोड़ी देर तक कुमार श्रेणिकके पास बैठकर तथा कुमारको भलीभांति प्रणामकर मंत्री मतिसागरने यह वचन कहा—

हे कुमार! आप मेरे मनोहर तथा हितकारी वचनको सुनिये। आपके अपराधसे महाराज उपश्रेणिकको बड़ा भारी क्रोध उत्पन्न हुवा है, वे आपपर सख्त नाराज हैं, न जाने वे आपको क्या दण्ड न देवेंगे? और क्या अहित न कर पावेंगे क्योंकि राजाके कुपित होनेपर आपको यहां पर नहीं रहना चाहिये। मंत्री मतिसागरके इस प्रकार अश्रुतपूर्व वचन सुनकर कुमार श्रेणिकने उत्तर दिया—

कृपाकर आप बतावें कि मेरा क्या अपराध हुवा है? इस प्रकार कुमारके बोलनेपर मंत्री मतिसागरने उत्तर दिया—

जिस समय तुम सब कुमारोंके भोजन करते समय कुत्ते छोड़े गये थे और जिस समय समस्त पात्रोंको झूठा कर दिया था उस समय तुमसे भिन्न सब कुमार तो भोजन छोड़कर चले गये थे और यह कहो तुम अकेले क्यों भोजन करते रह गये थे? इसलिये ऐसा मालूम होता है कि महाराजकी नाराजीका यही कारण है और यह बात ठीक भी है क्योंकि नीचताका कारण कुत्तोंसे छुआ हुवा भोजन अपवित्र भोजन ही कहलाता

है। मंत्री मतिसागरकी इस बातको सुनकर और कुछ हंसकर कुमारने मनोहर शब्दोंमें उत्तर दिया—

हे मन्त्रिन्! कुत्तोंको बुद्धिपूर्वक हटाकर मुझे यत्नसे भले-प्रकार रक्षित भोजन करना ही योग्य था इसीलिये मैंने ऐसा किया था क्योंकि जो कुमार अपने भोजनपात्रोंकी, न कुछ बलवान कुत्तोंसे भी रक्षा नहीं कर सकते वे कुमार राजसन्तान अर्थात् प्रजाकी क्या रक्षा कर सकते हैं? इसलिये जो आपने यह बात कही है कि तुमने कुत्तोंका छुवा हुवा भोजन किया इसलिये महाराज तुमपर नाराज हैं यह बात तुम्हें बुद्धिमान नहीं सूचित करती। कुमारके इस प्रकार न्याययुक्त वचन सुनकर समस्त दुष्कार्योंको भलेप्रकार जानकर भी वह मंत्री फिर अतिशय बुद्धिमान श्रेणिककुमारसे बोला—

हे बुद्धिमान कुमार! तुम्हें इस समय न्याय एवं अन्यायके विचारनेकी कोई आवश्यकता नहीं। महाराजका क्रोध इस समय अनिवार्य और आश्चर्यकारी है। अब तुम यही काम करो कि थोड़े दिनके लिये इस देशसे चले जाओ और राजमन्दिरमें न रहो क्योंकि यह नियम है कि संसारमें राजाके क्रोधके सामने कुलीन भी नीच कुलमें उत्पन्न हुवा कहलाता है, नीतियुक्त अनीतियुक्त कहा जाता है और पण्डित भी वज्रमूर्ख कहा जाता है। प्यारे कुमार श्रेणिक! यदि तुम राज्य ही प्राप्त करना चाहते हो तो न तो तुम्हें देशसे अलग होनेमें किसी बातका विचार करना चाहिये, और न किसी प्रकारकी भावना ही करनी चाहिये, किन्तु जैसे बने वैसे इस समय शीघ्र ही इस देशसे तुम्हें चला जाना चाहिये। हे कुमार! परदेशमें कुछ दिन रहकर फिर तुम इसी देशमें आ जाना, पीछे राज्य आपको जरूर ही मिलेगा, क्योंकि राज्य आपका ही है।

मंत्री मतिसागरके ऐसे कपटभरे वचन सुनकर, राजाका क्रोध परिणाममें दुःख देनेवाला है इस बातको जानकर और

अपनी माता आदिको भी पूछकर, अत्यन्त दुःखित हो कुमार श्रेणिक राजगृह नगरसे निकल पड़े तथा महाराज उपश्रेणिक द्वारा भेजे हुवे रक्षाके बहानेसे गूढ वेष धारण करनेवाले पांच हजार जासूस योद्धाओंके साथ साथ एकदम नगरसे बाहिर होगये।

कुमारकी माता महाराणी इन्द्राणीके कानतक यह बात पहुंची कि कुमार श्रेणिकको देशनिकाला हुवा है, सुनते ही वह इसप्रकार भयङ्कर रुदन करने लगी—हा पुत्र! हा महाभाग! हे कमलके समान नेत्रोंको धारण करनेवाले! हा कामदेवके समान! हा अत्यंत पुण्यात्मा! हा अत्यंत शुभ लक्षणोंको धारण करनेवाले! हा गजेन्द्रकी सूंडके समान लम्बेर हाथोंके धारक! हा कोकिलके समान प्यारी बोलीके बोलनेवाले! हा कमलके समान उत्तम मुखके धारक! हा उत्तम एव ऊंचे ललाटमें शोभित! हा कामदेवके समान मनोहर शरीरके धारक! हा कामदेवके समान विलासी! हा सुन्दर! हा शुभाकार! हा नेत्रप्रिय। हा सन्तोषके देनेवाले! हा शुभ! हा राज्यके धारण करनेमें शूरवीर! हा प्रिय! हा सुन्दर आकृतिके धारग करनेवाले कुमार! मुझ दुःखिनी मांको छोड़कर तू कहां चला गया? जो वन अनेक प्रकारके भयंकर सिंह व्याघ्रोंसे भरा हुआ है उस वनमें तू कहांपर होगा?

हाय! पूर्वभवमें मैंने ऐसा कौनसा घोर पाप किया था जिससे इस भवमें मुझे ऐसे उत्तम पुत्ररूपी रत्नका वियोग सहना पड़ा? हाय! क्या पूर्वभवमें मैंने किसी मातासे पुत्रका वियोग कर दिया था? अथवा श्रीजिनेन्द्र भगवानकी आज्ञाका मैंने उल्लंघन किया था? वा मैंने अपने शीलका मर्दन किया था—व्यभिचारका आश्रय किया था? अथवा मैंने किसी तालावका पुल नष्ट किया था? वा मलिन जलसे मैंने वस्त्र धोये थे? किंवा अग्निसे मैंने किसी उत्तम वनको भस्म किया था? वा

मैंने व्रतका भंग कर दिया था ? अथवा मुझसे किसी दिगम्बर मुनिकी निंदा हो गई थी ? किंवा मैंने किसीसे द्रोह किया था ? या परके वचनकी मैंने अवज्ञा कर दी थी ? अथवा मैंने इस भवमें पाप किया है जिससे मुझे ऐसे उत्तम पुत्र-रत्नसे जुदा होना पड़ा ?

इस प्रकार बारम्बार कुमार श्रेणिककी माता इन्द्राणीका करुणाजनक भयंकर रुदन सुनकर समस्त नगरमें हाहाकार मच गया। समस्त पुरवासी लोग करुणाजनक स्वरसे कुमार श्रेणिकके लिये रोने लगे और परस्परमें कहने लगे—

राजाने जो कुमारको नगरसे निकाल दिया है सो अज्ञानतासे ही निकाला है क्योंकि बड़े खेदकी बात है कि कुमार श्रेणिक तो अद्वितीय भाग्यवान, सर्वथा राज्यके योग्य, अद्वितीय दाता और भोक्ता था, विना विचारे महाराज उपश्रेणिकने उसे कैसे नगरसे निकाल दिया ? इस प्रकार कुमार श्रेणिकके चले जानेपर अत्यन्त उन्नत कोलाहलयुक्त भी नगर शांत हो गया ? कुमारके शोकसे समस्त पुरवासी दुःखसागरमें गोता लगाने लगे। वह कौनसा दुःख न था जो कुमारके वियोगमें पुरवासियोंको न सहना पड़ा हो ?

इधर पुर तो कुमारके शोकसागरमें मग्न रहा, उधर कुमार श्रेणिक मार्गमें जाते २ कुछ दूर चलकर अत्यन्त दुःखित, एवं अपमान-जन्य दुःखके प्रवाहसे जिनका मुख फीका होगया है, माको स्मरण करने लगे तथा और भी आगे कुछ धीरे२ चलकर बुद्धिमान् कुमार श्रेणिक, मयूर शब्दोंसे शोभित किसी निर्जन अटवीमें जा पहुंचे। वहांसे अनेक प्रकारके धान्योंसे शोभित चित्र विचित्र ध्वजाओंसे मंडित, एवं राजमंदिरसे भी शोभित कोई मनोहर नन्दिग्राम उन्हें दीख पड़ा।

महा धीरवीर कुमार धीरे धीरे उसी नगरकी ओर रवाना

होकर उस नगरके द्वारपर आ पहुंचे। द्वारकी अपूर्व शोभा निरखते हुवे वहांपर ठहर गये, पीछे उस नगरमें प्रवेश कर कुमार श्रेणिक अनेक प्रकारके माला, घंटा, तोरण आदिकर शोभित, अत्यन्त मनोहर, श्रेष्ठ सम्पत्तिके धारक राजमंदिरके पास पहुंचे और वहां उन्होंने अत्यन्त वृद्ध, नानाप्रकारके गुणों-कर मंडित मनोहर, अतिशय प्रीति करनेवाले, उत्कृष्ट, किसी इन्द्रदत्त नामके सेठको देखा और उससे कहा—

हे श्रेष्ठिन्! आप यहां न बैठिये, मेरे साथ आइये। यहांपर कोई नंदिग्रामका स्वामी ब्राह्मण निश्चयसे रहता है। हम दोनों भोजनकी प्राप्तिके लिये भ्रमण कर रहे हैं, आइये उसके पास चलें वह हमें अवश्य भोजनादि देगा। ऐसा कहकर कुमार श्रेणिक और सेठ इन्द्रदत्त दोनों उस ब्राह्मणके पास गये और उससे कहा—

हे विप्र नंदिनाथ! तू महाराज उपश्रेणिकके सन्मानका पात्र राज्यसेवाके योग्य है और तू राज्यकार्यके लिये महाराज द्वारा दिये हुये मालका मालिक है इसलिये हम दोनोंको पीनेके लिये कुछ जल और भोजनके लिये कुछ धान्य दे क्योंकि राज्यके कार्यमें चतुर हम दोनों राजदूत हैं और भ्रमण करते २ यहांपर आ पहुंचे हैं। कुमार श्रेणिकके इस प्रकार वचन सुनकर क्रोधसे नेत्रोंको लाल करता हुवा एवं सदा परके ठगनेमें तत्पर उस ब्राह्मणने क्रोधसे उत्तर दिया—

कहांके राजसेवक? कौन? किस कारणसे कहांसे यहां आगये? मैं तुम्हें पीनेके लिये पानीतक न दूंगा, भोजनादिककी तो बात ही क्या है? जाओ२ शीघ्र ही तुम मेरे घरसे चले जाओ, जरा भी तुम यहांपर मत ठहरो। यदि तुम राजसेवक भी हो तोभी मुझे कोई परवाह नहीं। ब्राह्मणके इस प्रकार

मूर्खताभरे वचन सुनकर कोपसे जिनका गात्र कंप रहा है, कुमार श्रेणिकने कहा—

अरे दयाहीन भिक्षुक! हम कौन हैं? तुझे इस समय कुछ भी मालूम नहीं, तुझे पीछे मालूम होगा। तेरे ऐसे दया रहित वचनोंपर मैं पीछे विचार करूंगा। जो कुछ मुझे उस समय दण्ड दिया जायगा इस समय उसके कहनेकी विशेष आवश्यकता नहीं, ऐसा कहकर कुमार श्रेणिक और सेठ इन्द्रदत्त जहां बौद्धसन्यासी रहते थे वहां गये और वहांपर उन्होंने रक्तवस्त्रोंको धारण करनेवाले अनेक बौद्ध सन्यासियोंको देखा।

कुमार श्रेणिकके लक्षणोंको राजाके योग्य देखकर, यह राजकुमार है इस बातको जानकर और यह शीघ्र ही राजा होगा यह भी समझकर उनमेंसे एक सन्यासीने राजकुमार श्रेणिकसे पूछा-

हे मगध देशके स्वामी महाराज उपश्रेणिकके पुत्र बुद्धिमान कुमार श्रेणिक! तुम कहां जा रहे हो? अकेले यहांपर आप कैसे आये?

कुमारने उत्तर दिया कि राजाने कोपकर हमें देशसे निकाल दिया है। फिर बौद्ध सन्यासियोंके आचार्यने कहा-हे कुमार! अब आप पहले भोजनादि कीजिये फिर मेरे हितकर वचनोंको सुनिये। कुमार! आप कुछ दिन बाद नियमसे मगध देशके राजा होवेंगे इसमें आप जरा भी संदेह न करें। मेरे वचनोंपर आप विश्वास कीजिये और आप सुखकी प्राप्तिके लिये शीघ्र ही बौद्ध धर्मको ग्रहण कीजिये।

इस बौद्ध-धर्मकी कृपासे ही आपको निसंदेह राज्यकी प्राप्ति होगी। विश्वास कीजिये व्रतोंके करनेसे तथा उपवासोंके आचरण करनेसे हमारे समस्त कार्योंकी सिद्धि होती है। हमारा यह उपदेश है कि आप राज्यकी प्राप्तिके लिये निश्चल रीतिसे बौद्धधर्मको धारण करें।

हे कुमार ! किसी समय जब संसारमें यह प्रश्न उठा था कि धर्म क्या है ? उस समय समस्त विज्ञानके पारगामी महादेव भगवान् बुद्धने यह वचन कहा था कि हे चतुरार्य ! जो धर्म वास्तविक रीतिसे सबे आत्माके स्वरूपको बतलानेवाला है, और समस्त पदार्थोंके क्षणिकत्वको समझानेवाला है वही धर्म वास्तविक धर्म है एवं वही सेवन करनेके योग्य है, उससे भिन्न कोई भी धर्म सेवने योग्य नहीं।

हे राजकुमार ! विज्ञान, वेदना, संस्कार रूप, नाम ये पांच प्रकारकी संज्ञाएं ही तीनों लोकमें दुःख-स्वरूप हैं। पांच प्रकारके विज्ञान आदिक मार्गसमुदाय और मोक्ष ये तत्त्व हैं। अष्टांग मोक्षकी प्राप्तिके लिये इन्हीं तत्त्वोंको समझना चाहिये। यह समस्त लोक क्षणभगुर नाशवान है, कोई पदार्थ स्थिर नहीं। चित्तमें जो पदार्थ सदाकाल रहनेवाला नित्य मालूम पड़ता है वह स्वप्नके समान भ्रम स्वरूप है तथा जो ज्ञान समस्त प्रकारकी कल्पनाओंसे रहित निर्भ्रान्त अर्थात् भ्रम भिन्न और निर्विकल्प हो, वही प्रमाण है किंतु सविकल्प ज्ञान प्रमाण नहीं है, वह मृगतृष्णाके समान भ्रमजनक ही है।

जिन तत्त्वोंका वर्णन बौद्धधर्ममें किया है वे ही वास्तविक तत्व हैं इसलिये यदि तुम अपने पिताके राज्यकी प्राप्तिके लिये उत्सुक हो-मगधदेशके राजा बनना चाहते हो तो आप समस्त इष्ट पदार्थोंका सिद्ध करनेवाला बौद्धधर्म शीघ्र ही ग्रहण करो। हे कुमार ! यदि आपको राजा बननेकी इच्छा है तो आप बौद्ध-धर्मको ही अपना मित्र बनायें क्योंकि इस धर्मसे बढ़कर दुनियांमें दूसरा कोई भी मित्र नहीं है।

बौद्धाचार्यके इन वचनोंने कुमार श्रेणिकके पवित्र हृदयपर पूरा प्रभाव जमा दिया। कुमार श्रेणिकने बौद्धाचार्यके कथनानुसार बौद्धधर्म धारण किया एवं उस बौद्धाचार्यके चरणोंको

भक्तिपूर्वक नमस्कार कर बौद्धधर्मके पक्के अनुयायी बन गये। अतिशय निर्मल चित्तके धारक कुमार श्रेणिकने उसी बौद्धाश्रममें इन्द्रदत्त सेठिके साथ स्नान, अन्न, पानादिसे मार्गकी थकावट दूर की तथा राज्यकी ओरसे जो उनका अपमान हुवा था और उस अपमानसे जो उनके चित्तपर आघात हुवा था उस आघातको भी वे भूलने लगे और उस बौद्धाचार्यके साथ कुछ दिन पर्यंत वहींपर रहे।

अनंतर इसके अब यहांपर अधिक रहना ठीक नहीं यह विचारकर अतिशय हर्षितचित्त, बौद्धधर्मके सच्चे अनुयायी, कुमार श्रेणिक उस स्थानसे चले। यह समाचार सेठ इन्द्रदत्तने भी सुना। सेठ इन्द्रदत्त भी यह जानकर कि कुमार श्रेणिक अत्यन्त पुण्यात्मा है, कुमारके पीछे पीछे चल दिये। इस प्रकार वन-मार्गोंको देखते हुवे, अनेक प्रकारकी पर्वत गुफाओंको निहारते हुवे, मत्तमयूरोंके नृत्यका आनन्दपूर्वक देखते हुवे वे दोनों महोदय जब कुछ थक गये तब कुमार श्रेणिकने अति मधुर वाणीसे सेठ इन्द्रदत्तसे कहा—

हे श्रेष्ठिन् (मातुल)! चलते चलते इस मार्गमें मैं और आप थक गये हैं इसलिये चलिये जिह्वारूपी रथपर चढ़कर चलें। कुमारकी इस आकस्मिक बातको सुनकर अचम्भेमें पड़कर सेठ इन्द्रदत्तने विचारा कि संसारमें कोई जिह्वारथ है? यह बात न तो हमने आज तक सुनी और न साक्षात् जिह्वारूपी रथ ही देखा। मालूम होता है यह कुमार कोई पागल मनुष्य है ऐसा थोडी देर तक विचार कर सेठ इन्द्रदत्त चुप हो गये, उन्होंने कुमार श्रेणिकसे बातचीत करना भी बन्द कर दिया एवं दोनों चुपचाप ही आगेको चलने लगे।

थोड़ी दूर आगे जाकर, अपने निर्मल जलसे पथिकोंके श्रमको तृप्त करनेवाली, अत्यन्त निर्मल जलसे भरी हुई एक

उत्तम नदी दोनोंने देखी। नदीके देखते ही कुमार श्रेणिकने तो अपने जूते पहिनकर नदीमें प्रवेश किया और सेठ इन्द्रदत्तने पैरोंसे दोनों जूतोंको पहिले उतारकर हाथमें लेलिया बाद वे नदीमें घुसे। मगधदेशके कुमार श्रेणिकको जूते पहिनकर जब उन्होंने नदीमें प्रवेश करते हुवे देखा तो सेठ और भी अचम्भा करने लगे और उनको इस बातका पक्का निश्चय होगया कि कुमार श्रेणिक जरूर कोई पागल पुरुष है। तथा कुमार श्रेणिकके कामसे उन्होंने अपने मनमें यह विचार किया कि अन्य बुद्धिमान पुरुष तो यह काम करते हैं कि जलमें जूता उतारकर घुसते हैं किन्तु कुमार श्रेणिकने जूता पहिने ही नदीमें प्रवेश किया, मालूम होता है कि यह साधारण मूर्ख नहीं बड़ा भारी मूर्ख है।

इस प्रकार विचार करते२ सेठ इन्द्रदत्त फिर कुमार श्रेणिकके पीछेर आगे चले। कुछ दूर चलकर उन्होंने अत्यन्त शीतल छाया युक्त एक वृक्ष देखा। मार्गमें धूप आदिसे अतिशय क्लांत कुमार श्रेणिक और सेठ इन्द्रदत्त दोनों ही उस वृक्षके पास पहुँचे।

कुमार श्रेणिक तो उस वृक्षकी छायामें अपने शिरपर छत्री तानकर बैठे और सेठ इन्द्रदत्त छत्री बन्दकर। कुमारको छत्री ताने हुवे बैठा देखकर सेठ इन्द्रदत्त फिर भी मनमें गहरा विचार करने लगे कि संसारमें और मनुष्य तो छत्रीको धूपसे बचनेके लिए शिरपर लगाते हैं किंतु यह कुमार अत्यत शीतल वृक्षकी छायामें भी छत्री लगाये बैठा है यह तो बड़ा मूर्ख मालूम पड़ता है।

इस प्रकार विचार करतेर फिर भी सेठ इन्द्रदत्त कुमारके साथ आगे चले। आगे चलकर उन्होंने अनेक प्रकारके उत्तमोत्तम मनुष्योंसे व्याप्त, अनेक प्रकारके हाथी, घोड़ा आदि पशुओंसे

भरा हुवा अतिशय मनोहर, एक नगर देखा। नगरको देखकर कुमार श्रेणिकने सेठ इन्द्रदत्तसे पूछा—

हे मामा! कृपाकर कहें यह उत्तम नगर बसा हुवा है कि उजड़ा हुवा? कुमारके इन वचनोंको सुनकर सेठ इन्द्रदत्तने उत्तर नहीं दिया किन्तु अतिशय चतुर कुमार श्रेणिक और इन्द्रदत्त फिर भी आगेको चल दिये। आगे कुछ ही दूर जाकर उन्होंने एक अत्यन्त सुन्दर पुरवासी मनुष्य अपनी स्त्रीको मार मारते हुवे देखा। देखकर फिर कुमार श्रेणिकने सेठ इन्द्रदत्तसे प्रश्न किया कि—हे श्रेष्ठिन्! बताईये कि जिस स्त्रीको यह सुन्दर मनुष्य मार रहा है वह स्त्री बंधी हुई है अथवा खुली हुई? कुमारके इस प्रकारके वचन सुनकर इन्द्रदत्तने विचारा कि यह कुमार अवश्य पागल है इसमें किसी प्रकारका सन्देह नहीं।

इस प्रकार अपने मनमें कुमारके पागलपनेका दृढ़ विश्वास कर फिर भी दोनों आगेको बढे। आगे चलते-चलते उन्होंने जिसको मनुष्य जलानेके लिये ले जा रहे थे एक मरे हुवे मनुष्यको देखा। मृत मनुष्यको देखकर फिर भी कुमार श्रेणिकको शंका हुई और शीघ्र ही उन्होंने सेठ इन्द्रदत्तसे पूछा—मामा! मुझे शीघ्र बतावें कि यह मुर्दा आज मरा है कि पहिलेका मरा हुवा है।

आगे बढ़कर श्रेणिकने भले प्रकार पके हुवे फलोंसे रम्य फलोंकी उत्तम सुगंधिसे जिसके ऊपर भौंरा गुँजार शब्द कर रहे हैं जो जलसे भीगे हुवे फलोंसे नीचेको नम रहा है, एक उत्तम शालिक्षेत्र देखा। शालिक्षेत्र देखकर कुमारने फिर सेठि इन्द्रदत्तसे प्रश्न किया—हे मामा! शीघ्र बताइये इस क्षेत्रका मालिक इस क्षेत्रके फलोंको खावेगा कि खा चुका?

आगे चलकर किसी एक नवीन क्षेत्रमें हल चलाता हुवा एक किसान मिला उसको देखकर फिर कुमार श्रेणिकने प्रश्न किया कि हे श्रेष्ठिन्! जल्दी बताइये इस हलपर हलके स्वामी कितने

हैं। तथा आगे बढ़कर एक बदरीवृक्ष दृष्टिगोचर हुआ उसे देखकर फिर भी कुमारने सेठि इन्द्रदत्तसे पूछा—हे मातुल! कृपाकर मुझे बताइये कि इस बेरियाके पेड़में कितने कांटे हैं।

इस प्रकार कुमार श्रेणिक तथा सेठि इन्द्रदत्त दोनों जनोंकी जिह्वारथ, जूता, छत्री, ग्रामका निश्चय, स्त्री, मुर्दा, शालिक्षेत्र, हल, कांटेके विषयमें बातचीत हुई। पुण्यके फलसे अत्यन्त विशद बुद्धिके धारक कुमार श्रेणिकने अपने स्नेहयुक्त वचनोंसे, शब्दोंके अर्थको भलीभांति नहीं समझनेवाले भी सेठि इन्द्रदत्तके कानोंको तृप्तकर दिया और उत्तम बुद्धिको प्रकट करनेवाले वचन कहे। तथा नाना प्रकारकी शास्त्रकथाओंमें प्रवीण, चन्द्रमाके समान शोभाको धारण करनेवाला, तेजस्वी, लक्ष्मीवान, अपने पुण्यसे जितेन्द्रिय पुरुषोंको भी अपने आधीन करनेवाला, पृथ्वीमें सुन्दर, कुमार श्रेणिकने सेठि इन्द्रदत्तके साथ उत्तमोत्तम तालाबोंसे शोभित वेणपद्म नगरमें प्रवेश किया।

देखो, कर्मका फल—कहां तो मगधदेश? कहां राजगृहनगर? और नंदिग्राम कहां! तथा कहां बौद्धमतका सेवन? और कहां सेठि इन्द्रदत्तके साथ मित्रता! संसार कर्मोंका फल विचित्र और अलक्ष्य है, किन्तु नियम है कि जीवोंके समस्त अशुभ कार्योंका नाश धर्मसे ही होता है, धर्मसे ही शुभ कर्मोंकी प्राप्ति होती है। संसारमें धर्मसे प्रिय वस्तुओंका समागम होता है इसलिये जिन मनुष्योंकी उपर्युक्त वस्तुओंके पानेकी अभिलाषा है उन्हें चाहिये कि वे सदा अपनी बुद्धिको धर्ममें ही लगावें।

इस प्रकार भविष्यत् कालमें होनेवाले श्रीपद्मनाभ तीर्थंकरके जीव श्री महाराज श्रेणिक चरित्रमें कुमार श्रेणिकका राजगृहनगरसे निष्कासन कहनेवाला तीसरा सर्ग समाप्त हुआ।

चौथा सर्ग

महाराज श्रेणिकका नंदश्राके साथ विवाह वर्णन

अनतर इसके जिस समय सेठि इन्द्रदत्त वेणपद्म नगरके तालावके पास पहुँचे तो वहींसे उन्होंने वेणपद्म नगरको देखा तथा जिस वेणपद्म नगरकी स्त्रियोंके मुख चन्द्रमा मनोहर, कामीजनोंके मन तृप्त करनेवाले थे, उनकी मनोहरताके सामने चन्द्रमा अपनेको कुछ भी मनोहर नहीं मानता था और लज्जित हो रात दिन जहां तहां घूमता फिरता था तथा जिस नगरके निवासी मनुष्य सदा पुण्यकर्ममें तत्पर, दानी, भोगी, धीरवीर और जिनेन्द्र भगवानकी आज्ञाको भलीभांति पालन करनेवाले थे, ऐसे उस सर्वोत्तम नगरकी शोभा देखकर वे अति प्रसन्न हुवे और कुमार श्रेणिकसे कहने लगे—हे कुमार! इस नगरमें आप क्या करेंगे? कहांपर निवास करेंगे? मुझे कहें।

इन्द्रदत्तकी यह बात सुनकर कुमार श्रेणिकने उत्तर दिया कि हे वणिकस्वामी. इन्द्रदत्त! मैं भांति भांतिके कमलोंसे शोभित इसी तालावके किनारे रहूंगा, आप अपने मनोहरपुरमें जाकर निवास करें।

कुमारके मुखसे ऐसे उत्तम वचन सुनकर सेठि इन्द्रदत्तने फिर कहा कि हे राजकुमार! यदि आप यहां रहना चाहते हैं तो मेरा एक निवेदन है, वह यही कि जबतक मेरी आज्ञा न होवे आप इस तालावको छोड़कर कहीं न जायें।

इन्द्रदत्तके उस प्रकारके वचनोंको सुनकर कुमार श्रेणिक तो तालावके किनारे बैठ गये और सेठि इन्द्रदत्तने अपने नगरकी ओर गमन किया। ज्यों इन्द्रदत्त अपने घर पहुंचे और जिस समय वे अपने कुटुम्बियोंसे मिले तो उनको अति आनंद हुवा,

मारे आनंदके उनके दोनों नेत्र फूल गये, अंग रोमांचित हो गया और मुख भी कांतिमान हो गया। तथा जिस समय स्त्री पुत्र पुत्रियोंने उनका सम्मान किया और प्रेमकी दृष्टिसे देखा तो उन्होंने पूर्वोपार्जित धर्मके प्रभावसे अपना जन्म सार्थक जाना और अपनेको कृतकृत्य समझा।

महोदय सेठ इन्द्रदत्तके पीन एवं उन्नत स्तनोंसे शोभित, चन्द्रमुखी कोकिलाके समान मधुर बोलनेवाली-पिकवैनी नन्दश्री नामकी कन्या थी। उस कन्याने अपने मनोहर कण्ठसे कोकिलाको जीत लिया था। वह मुखसे चन्द्रमाको, नेत्रोंसे कमल पत्रको और हाथसे कमल पल्लवको जीतनेवाली थी। उसके केशोंके सामने मनोहर नीलमणि भी तुच्छ मालूम पड़ती थी। गतिसे वह हंसिनीकी चाल नीची करनेवाली थी। एवं स्तनोंसे उसने सुवर्णकलशोंको, नितंबोंसे उत्तमशिलाको, रूपसे कामदेवकी स्त्री रतिको तिरस्कृत कर दिया था।

जिससमय इस कन्याने अपने पिता इन्द्रदत्तको देखा तो शीघ्र ही उसने प्रणामपूर्वक कुशल क्षेम पूछी। तथा कुशल क्षेम पूछनेके बाद अपनी मनोहर वाणीसे यह कहा कि हे पूज्यपिता! आपके साथ कोइ भी उत्तम बुद्धिमान मनुष्य आया हुवा नहीं दीखता। परदेशसे आप किसी मनुष्यके साथ२ आये हैं अथवा अकेले? पुत्रीके ऐसे वचन सुनकर एवं उन वचनोंके तात्पर्यको भी भलीभांति समझकर सेठ इन्द्रदत्तने हर्षपूर्वक उत्तर दिया—

हे पुत्री! मेरे साथ एक मनुष्य आया है और वह अत्यंत रूपवान, युवा, गुणी, मनोहर, तेजस्वी और बुद्धिमान् है। तथा वह मनुष्य अपनेको मगधदेशके स्वामी महाराज उपश्रेणिकका पुत्र कुमार श्रेणिक बतलाता है, यद्यपि वह तेरे लिये सर्वथा वरके योग्य है तथापि उसमें एक बड़ा भारी दोष है कि वह विचाररहित वचन बोलनेके कारण मूर्ख मालूम पड़ता है।

पिताके इस प्रकारके वचन ध्यानपूर्वक सुनकर मनोहरांगी, दांतोंकी दीप्तिसे सर्वत्र प्रकाश करनेवाली, कठिनस्तनी, नवांगी कुमारी नन्दश्रीने कहा–हे पिता ! कृपाकर आप मुझसे कहें कि जो मनुष्य आपके साथ आया है उसकी आपने क्या२ चेष्टा देखी है, उसकी उम्र क्या है ? और किसलिये वह यहांपर आया है ?

पुत्रीके इसप्रकार वचन सुनकर सेठ इन्द्रदत्तने कहा–हे पुत्री ! यदि उसके विषयमें कुछ जाननेकी लालसा है तो मैं उस मनुष्यके सब वृत्तांतको कहता हूं, तू आनन्दपूर्वक सुन–मैं लौटकर घर आरहा था तब बीच मार्गमें नंदग्रामके समीप मेरी उससे भेंट हुई उसी समयसे उसने मुझे मामा बना लिया और मार्गमें भी मामा कह कर ही मुझे पुकारा सो यह बता कि कौन और कहांका रहनेवाला तो वह और मैं कहां रहनेवाला ? फिर उसने मुझे मामा कहकर क्यों पुकारा ? दूसरे कुछ चलकर फिर उसने कहा कि हम दोनों थक गये हैं इसलिये चलो अब जिह्वारूपी रथपर सवार होकर गमन करें ।

हे पुत्री ! यह बात बिलकुल उसने मिथ्या कही थी क्योंकि जिह्वारथ संसारमें कोई है यह बात आजतक न सुनी न देखी । पुनः कुछ चलकर एक नदी पड़ी उसमें उसने जूते पहिनकर प्रवेश किया तथा अत्यंत शीतल वृक्षकी छायाके नीचे वह छत्री तानकर बैठा तथा आगे चलकर एक अनेक प्रकारके मनोहर घरोंसे शोभित, मनुष्य एवं हाथी, घोड़ा आदि पशुओंसे व्याप्त, एक नगर पड़ा, उस नगरको देखकर उसने मुझसे पूछा—हे मातुल ! यह नगर उजड़ा हुवा है कि बसा हुवा ?

हे पुत्री ! यह प्रश्न भी उसके मनको आनन्द देनेवाला नहीं हो सकता । आगे चलकर मार्गमें कोई एक मनुष्य किसी स्त्रीको मार रहा था उस स्त्रीको देखकर फिर उसने मुझे पूछा—हे मामा ! यह स्त्री बन्धी हुई है कि खुली हुई ?

उसी प्रकार आगे चलकर एक मरा हुवा मनुष्य मिला उसे देखकर फिर उसने पूछा कि यह आजका मरा है अथवा पहिलेका ही मरा हुवा है? आगे चलकर अतिशय पके हुए उत्तम धान्योंसे व्याप्त एक क्षेत्र पड़ा, उसे देखकर उसने यह कहा—हे मामा! इस खेतका मालिक इसके फलोंको खावेगा या खा चुका?

इसी प्रकार हल चलाते हुवे किसी किसानको देखकर उसने पूछा कि इस हलपर हलके चलानेवाले कितने मनुष्य हैं? तथा आगे चलकर एक बेरीका वृक्ष पड़ा उसको देखकर उसने यह कहा—हे मातुल! इसमे कितने कांटे हैं इत्यादि उसके द्वारा किये हुवे अयोग्य, पूर्वापर विचार रहित प्रश्नोंसे मुझे पूर्ण विश्वास है कि वह कुमार अवश्य पागल है।

पिताके मुखसे कुमार श्रेणिक द्वारा की हुई चेष्टाओंको सुनकर बुद्धिमती नन्दश्रीने जवाब दिया—हे पिता! उस कुमारको जो उपर्युक्त चेष्टाओंसे आपने पागल समझ रक्खा है सो वह कुमार पागल नहीं है, किन्तु वह अत्यन्त चतुर एवं अनेक कलाओंमें निपुण है ऐसा निःसंशय समझिये। क्योंकि जो उस कुमारने आपको मामा कहकर पुकारा था उसका मतलब यह था कि संसारमें भानजा अत्यत माननीय एवं प्रिय होता है इसलिये मामाके कहनेसे तो उस कुमारने आपके प्रेमकी आकांक्षा की थी। तथा जिह्वारथका अर्थ कथा कौतूहल है।

कुमारने जो जिह्वारथ कहा था वह भी उसका कहना बहुत ही उत्तम था, क्योंकि जिस समय सज्जन पुरुष मार्गमें थक जाते हैं उस समय वे थकावटको अनेक प्रकारके कथा कौतूहलसे दूर करते हैं। कुमारका लक्ष्य भी उस समय थकावटको दूर करनेके लिये ही था। तथा जो कुमार नदीके जलमें जूते पहिनकर घुसा था वह काम भी उसका एक बड़ी भारी बुद्धिमानीका

था क्योंकि जलके भीतर बहुतसे कंटक एवं पत्थरोंके टुकडे पड़े रहते हैं, सर्प आदिक जीव भी रहते हैं।

यदि जलमें जूता पहिनकर प्रवेश न किया जाय तो कटक एव पत्थरोंके टुकडोंके लग जानेका भय रहता है। सर्प आदि काटनेका भी भय रहता है। इसलिये कुमारका जलमें जूता पहिनकर घुसना सर्वथा योग्य ही था।

५. तथा हे पिता! कुमार वृक्षकी छायामें जो छत्री लगाकर बैठा था उसका वह कार्य भी एक बड़ी भारी बुद्धिमानीको प्रकट करनेवाला था क्योंकि वृक्षकी छायामे छत्री लगाकर न बैठ जानेपर पक्षी आदि जीवोंकी बीट गिरनेकी सम्भावना रहती है इसलिये वृक्षकी छायामें छत्री लगाकर कुमारका बैठना भी सर्वथा योग्य था, अति मनोहर नगरको देखकर कुमारने जो आपसे यह प्रश्न किया था—

हे मातुल! यह नगर उजड़ा हुवा है कि बसा हुआ? उसका आशय भी बहुत दूर तक था क्योंकि भले प्रकार बसा हुआ नगर वही कहा जाता है, जो नगर उत्तम धर्मात्मा मनुष्योंसे जिन प्रतिबिम्ब, जिन चैत्यालय, एवं उत्तम यतीश्वरोंसे अच्छी तरह परिपूर्ण हो और उससे भिन्न नगर उजड़ा हुवा कहा जाता है, "इसलिये यह नगर बसा हुवा है अथवा उजड़ा हुआ?" यह प्रश्न भी कुमारका विचार परिपूर्ण था। हे पिता! स्त्रीको मारते हुवे किसी पुरुषको देखकर जो कुमारने, 'यह स्त्री बंधी हुई है अथवा खुली हुई है?' आपसे यह प्रश्न किया था वह प्रश्न भी उसका अत्युत्तम प्रश्न था क्योंकि बंधी हुई स्त्री विवाहिता कही जाती है और छूटी हुईका नाम अविवाहिता है।

कुमारका प्रश्न भी इसी आशयको लेकर था कि यह स्त्री इस पुरुषकी विवाहिता है अथवा अविवाहिता? अतः कुमारका यह प्रश्न भी उसकी चतुरताको जाहिर करता है। ७ तथा मरे

मनुष्यको देखकर कुमारने यह प्रश्न किया था कि "यह मरा हुवा मनुष्य आजका मरा हुवा है अथवा पहिलेका मरा हुवा ?" उसका यह प्रश्न भी बड़ी चतुरतासे परिपूर्ण था, क्योंकि हे पूज्य पिता ! जो मनुष्य धर्मात्मा, दयावान, ज्ञानवान्, विनयसे उत्तम पात्रोंको दान देनेवाला, एवं समस्त जगतमें यशस्वी होता है और वह मर जाता है उसको हालका मरा हुवा कहते हैं और इससे भिन्न जो मनुष्य दान रहित कामी, पापी होता है उसको संसारमें पहलेसे ही मरा हुआ कहते हैं।

कुमारका जो यह प्रश्न था कि—"यह मरा हुवा मनुष्य हालका मरा हुवा है अथवा पहिलेका ? यह प्रश्न भी कुमारको अत्यंत बुद्धिमान एव चतुर बतलाता है" तथा हे पिता ! कुमारने धान्य परिपूर्ण खेतको देखकर आपसे जो यह पूछा था कि इस क्षेत्रके स्वामीने इस क्षेत्रके धान्यका उपभोग कर लिया है अथवा करेगा ?

यह प्रश्न भी कुमारका बड़ी बुद्धिमानीका था क्योंकि कर्ज लेकर जो खेत बोया जाता है उसके धान्यको तो पहिले ही उपभोग कर लिया जाता है, इसलिये वह मुक्त कहा जाता है और जो खेत विना कर्जके बोया जाता है उस खेतके धान्यको उस खेतका स्वामी भोगेगा ऐसा कहा जाता है।

कुमारके प्रश्नका भी यही आशय था कि यह खेत कर्ज लेकर बोया गया है अथवा विना कर्जके ? इसलिये इस प्रश्नसे भी कुमारकी बुद्धिमानी वचनागोचर जान पड़ती है। तथा हे तात ! कुमार श्रेणिकने जो यह प्रश्न किया था कि—हे मातुल ! इस बेरीके वृक्षके ऊपर कितने कांटे हैं ? सो उसका आशय यह है कि कांटे तो दो प्रकारके होते हैं—एक सीधे दूसरे टेढ़े। उसी प्रकार दुर्जनोंके भी वचन होते हैं।

इसलिये यह प्रश्न भी कुमार श्रेणिकका सर्वथा सार्थक ही

था। इसलिये उक्त प्रश्नोंसे कुमार श्रेणिक अत्यंत निपुण, विद्वानोंके मनोंको हरण करनेवाला, समस्त कलाओंमें प्रवीण, और अनेक प्रकारके शास्त्रोंमें चतुर है ऐसा समझना चाहिये। हे तात! आप धैर्य रक्खें, कुमार श्रेणिककी बुद्धिकी परीक्षा मैं और भी कर लेती हूं, किंतु कृपाकर आप मुझे यह बतावें कि अनेक प्रकारके उत्तमोत्तम विचारोंसे परिपूर्ण सर्वोत्तम गुणोंका मंदिर, वह कुमार ठहरा कहां है?

नन्दश्रीके इस प्रकार सन्तोषभरे वचन सुनकर इन्द्रदत्तने उत्तर दिया—हे सुते! जिस कुमारके विषयमें तूने मुझे पूछा है, अतिशय रूपवान एवं युवा वह कुमार इस नगरके तालाबके किनारे पर ठहरा हुवा है।

पिताके मुखसे ऐसे वचन सुनते ही कुमारको तालाबके किनारे ठहरा हुवा जानकर नन्दश्री शीघ्र ही भागतीर, जो पर मनुष्यके मनके अभिप्रायोंको जाननेमें अतिशय प्रवीण थी अपनी प्यारी सखी निपुणमतिके पास गई और निपुणमतिके पास पहुँचकर यह कहा—

हे लम्बेर नखोंको धारण करनेवाली प्रिय सखी निपुणमति! जहांपर अत्यन्त रूपवान कुमार श्रेणिक बैठे हैं वहांपर तू शीघ्र जा और उनको आनन्दपूर्वक यहां लिवाकर लेआ। प्रियतमा सखी! इस बातमें जरा विलम्ब न हो। कुमारी नंदश्रीकी यह बात सुनकर प्रथम तो निपुणमति सखीने अपना शृङ्गार खूब किया, पश्चात् वह नखमें तेल भरकर कुमारीकी आज्ञानुसार जिस स्थानपर कुमार श्रेणिक विराजमान थे वहांपर गई। वहां कुमारको बैठे हुए देखकर एवं उनके शरीरकी अपूर्व शोभाको निहारकर उसने अति मधुर वाणीसे कुमारसे कहा—हे कुमार! आप प्रसन्न तो हैं? क्या पूर्णचन्द्रमाके समान मुखको धारण करनेवाले आप ही सेठ इन्द्रदत्तके साथ आये हैं?

निपुणमतीके इसप्रकार चित्ताकर्षक वचन सुन कुमार चुप न रह सके। उन्होंने शीघ्र ही उत्तर दिया कि हे चन्द्रवदनी अबले! मैं ही सेठ इन्द्रदत्तके साथ आया हूं, जो कुछ काम होवे वे रोकटोक आप कहें, और किसी बातका विचार न करें।

कुमारके इसप्रकार आनंदप्रद एवं मनोहर वचन सुन निपुणमतीने उत्तर दिया—हे कुमार! जिस सेठ इन्द्रदत्तके साथ आप आये हैं उसी सेठकी अपने रूपसे रतिको भी तिरस्कार करनेवाली सर्वोत्तम नंदश्री नामकी पुत्री है। उस पुत्रीका कटिभाग, दोनों स्तनोंके भारसे अत्यन्त कृश है। अतिशय कृश कटिभागकी रक्षार्थ उसके दो स्थूल नितम्ब हैं, जो अत्यन्त मनोहर हैं।

भांति भांतिके कौशलोंसे अनेक स्त्रियोंका विधाता ब्रह्मा भी इस नंदश्रीकी रूप आदि संपदा देखकर इसके समान दूसरी किसी स्त्रीको उत्तम नहीं मानता है। उसका मुख कामीजनोंके चित्तरूपी रात्रिविकासी कमलोंको विकसित करनेवाला एवं समस्त अंधकारको नाश करनेवाला पूर्ण चन्द्रमा है और वह अतिशय देदीप्यमान नखोंसे शोभित है।

हे कुमार? उसी समस्त कामीजनोंके चित्तको हरण करनेवाली कुमारी नंदश्रीने, अपनी सुगंधिसे भ्रमरोंको लुभानेवाला, सर्वोत्तम एव आनंदका देनेवाला यह नखभर तेल मेरे द्वारा आपके लगानेके लिये भेजा है। हे महाराज! जितनी जल्दी होसके इसको लगाकर आप सुखपूर्वक स्नान करें तथा मेरे साथ अनेक प्रकारकी शोभाओंसे व्याप्त सेठ इन्द्रदत्तके घर शीघ्र चलें।

जिस समय कुमारने निपुणमतीके वचन सुने और जब नखभर तेल देखा तो उनके मनमें गहरी चिंता हो गई। वे मन ही मन यह कहने लगे कि यह न कुछ तेल है, इसको सर्वांगमें लगाकर स्नान कैसे किया जा सकता है? मालूम होता

है सुगंधके लोभी भ्रमरोंसे चुम्बित, एवं उत्तम, यह थोड़ा तेल मेरी बुद्धिकी परीक्षाके लिये कुमारी नंदश्रीने भेजा है तथा ऐसा क्षणएक भलेप्रकार विचारकर गुरुओंके भी गुरु कुमारने अपने पांवके अंगूठेसे जमीनमें एक उत्तम गढ़ा खोदा और मुंहतक उसको जलसे भरकर दीर्घ नख धारण करनेवाली सखी निपुणमतीसे कहा कि—हे उन्नतस्तनी सुभगे! तू इस जलके भरे हुवे गढ़ेमें नखमें भरे हुवे तेलको डाल दे।

कुमार श्रेणिककी इस प्रकार आज्ञा पाते ही अति स्नेहकी दृष्टिसे कुमारकी ओर देखकर और मन ही मनमें अति प्रसन्न निपुणमतीने जलसे भरे हुवे उस गढ्ढेमें तेल छोड़ दिया और अनेक प्रकारकी कलाओंमें प्रवीण वह चुपचाप अपने घरकी ओर चल दी। निपुणमतीको इस प्रकार जाते हुवे देखकर कुमारने पूछा—हे अबले! सेठ इन्द्रदत्तका घर कहां और किस जगहपर है? किन्तु कुमारके इस प्रकारके उत्तम प्रश्नको सुनकर भी निपुणमतीने कुछ भी जवाब नहीं दिया और विनययुक्त वह निपुणमती कानमें स्थित तालवृक्षके पत्तेका भूषण दिखकर चुपचाप चली गई।

कुमारके चातुर्यके देखनेसे प्रफुल्लित कमलोंके समान नेत्रोंसे शोभित सखी निपुणमतीने शीघ्र ही अत्यन्त मनोहर सेठ इन्द्रदत्तके घरमें प्रवेश किया और कुमारी नंदश्रीके पास जाकर जो जो कुमार श्रेणिकका चातुर्य उसने देखा था सब कह सुनाया। कुमारी नंदश्री निपुणमतीसे कुमारके चातुर्यकी प्रशंसा सुनकर शीघ्र ही अपने पिताके पास गई और जो कुमार श्रेणिकका चातुर्य उसके पिताको आश्चर्यका करनेवाला था उसे सेठ इन्द्रदत्तको जा सुनाया और यह कहा—

हे तात! कुमार श्रेणिक अत्यन्त गुणी हैं, ज्ञानवान हैं, समस्त जगतके चातुर्योंमें प्रवीण हैं, कोकशास्त्रके भी ज्ञाता हैं

और अनेक प्रकारकी कलाओंको भी जाननेवाले हैं इसमें किसी प्रकारका सन्देह नहीं। इसलिये आप कुमारके पास जांय और शीघ्र ही यहांपर उनको लिवाकर ले आवें। आप उन्हें पागल न समझें क्योंकि जिस समय आप कुमारके साथ-साथ आये थे उस समय जिह्वारथ आदि वाक्योंसे कुमार क्रीड़ा करते हुवे आपके साथमें आये थे और उन वाक्योंसे कुमारने अपना चातुर्य आपको बतलाया था। उनमें स्वाभाविक, मनोहर एवं अनेक प्रकारके कल्याणोंको करनेवाले अनेक गुण विद्यमान हैं।

इधर कुमारके विषयमें नंदश्री तो यह कह रही थी, उधर कुमारने निपुणमतीके चले जानेपर पहिले तो उस तेलसे अपने शरीरका अच्छी तरह मर्दन किया। अंजनके समान काले बालोंमें उसे अच्छी तरह लगाया। और इच्छा पूर्वक उस तालाबमें स्नान किया, पीछे वहांसे नगरकी ओर चल दिये। स्वर्गपुरके समान उत्तम शोभाको धारण करनेवाले उस पुरमें घुमकर वे यह विचारने लगे कि सेठ इन्द्रदत्तका घर कहां और किस ओर है? मुझे किस मार्गसे सेठ इन्द्रदत्तके घर जाना चाहिये?

इसी विचारमें वे इधर उधर बहुत घूमे, अनेक घर देखे, बहुतसी गलियोंमें भ्रमण किया, किंतु इन्द्रदत्तके घरका उन्हें पता न लगा। अन्तमें घूमतेर वे क्लांत हो गये और ज्योंही उन्होंने श्रम दूर करनेके लिये किसी स्थानपर बैठना चाहा त्योंही उन्हें निपुणमतीके इशारेका स्मरण आया। वे अपने मनमें विचारने लगे कि जिस समय निपुणमती तालाबसे गई थी उस समय मैंने उसे पूछा था कि सेठ इन्द्रदत्तका घर कहां है? उस समय उसने कुछ भी जबाब नहीं दिया था किंतु तालवृक्षके पत्तेसे बने हुवे भूषणसे मंडित वह अपना कान दिखाकर हो चली गई थी। इसलिये जान पड़ता है कि जिस घरमें तालका वृक्ष हो निस्संशय वही सेठ इन्द्रदत्तका घर है।

अब कुमार ताड़वृक्ष सहित घरका पता लगाने लगे। पता लगाते लगाते उन्हें एक ताड़वृक्षसे मंडित चतखना महल नजर पड़ा तथा लालसापूर्वक वे उसीकी ओर झुक पड़े।

इधर कुमारके आनेका समय जानकर कुमारकी और भी बुद्धिकी परीक्षाके लिये कुमारी नंदश्रीने द्वारके सामने घोंटूपर्यंत कीचड़ डलवा रक्खी थी और उसमें एक एक पैरके फासलेमें एक एक ईंट भी रखवा दी थी तथा अपनी प्रिय सखीसे वह यों अपना विचार प्रकट कर कह रही थी कि हे आलि! अब मैं कुमारकी बुद्धिकी परीक्षा जब स्वयं अपने नेत्रोंसे कर लूंगी तब मै उस कुमारके साथ अपने विवाहकी प्रतिज्ञा करूंगी।

नंदश्रीकी यह बात सुनकर कुमारके बुद्धिचातुर्यको देखनेके लिये वह निपुणमती सुन्दरी भी उसके पास बैठ गई। इस प्रकार अनेक कथा कौतूहलोंको करती हुई वे दोनों कुमारके आगमनका इन्तजार कर रही थीं कि कुमार श्रेणिक भी दरवाजेके पास पहुँचे।

आते ही जब उन्होंने द्वारपर घोंटूपर्यंत भरी हुई कीचड़ देखी और उस कीचड़के ऊपर एक एक पैरके फासलेसे रक्खी हुई ईंटे भी जब उनके नजर पड़ीं तो यह विचित्र दृश्य देखकर वे एकदम दंग रह गये और अपने मनमें विचारने लगे कि बड़े आश्चर्यकी बात है कि नगरभरमें और कहीं भी कीचड़ देखनेमें नही आई, कीचड़ वर्षाकालमें होती है, वर्षाका मौसम भी इससमय नहीं फिर इस द्वारके सामने कीचड़ कहांसे आई? मालूम होता है नंदश्रीने मेरी बुद्धिकी परीक्षाके लिये यह द्वारपर कीचड़ भरवाई है और कीचड़के मध्यमें ईंटें रखवाई हैं। दूसरा कोई भी प्रयोजन नजर नहीं आता। मुझे अब इस घरके भीतर जाना आवश्यकीय है।

यदि मैं इन ईंटोंपर पांव रखकर भीतर जाता हूं तो

अवश्य गिरता हूं और कीचड़में गिरने पर मेरी हंसी होती है। इसी संसारमें अत्यन्त दुःखकी देनेवाली है इसलिये मुझे कीचड़में होकर ही जाना चाहिये। यदि मेरे पांव कीचड़में जानेसे लिथड़ भी जांय तो भी मेरा कोई नुकसान नहीं। ऐसा एक क्षण अपने मनमें पक्का निश्चय कर अतिशय बुद्धिमान्, भलेप्रकार लोकचातुर्यमें पंडित, कुमार अ णिकने, उस कीचड़में होकर ही महलमें प्रवेश किया।

कुमारके इस उत्तम चातुर्यको देखकर कुमारी नंदश्री दंग रह गई किंतु कुमारकी बुद्धिकी परीक्षाका कौतूहल अभीतक उसका समाप्त नहीं हुवा। इसलिये जिस समय कुमार उस कीचड़को लांघकर महलमें घूसे और जिस समय नंदश्रीने उनके पांव कीचड़में लिथड़े हुवे देखे तो फिर भी उसने किसी सखी द्वारा कीचड़ धोनेके लिये एक चुल्लू पानी कुमारके पास भेजा।

कुमारने जिससमय कुमारी नदश्रीद्वारा भेजा हुवा थोड़ासा पानी देखा तो देखकर उनको बड़ा आश्चर्य हुवा। वे अपने मनमे पुनः विचारने लगे कि कहां तो इतना अधिक कीचड़! और कहां यह थोड़ासा जल! इससे कैसे कीचड़ धुल सकती है? तथा एक क्षण ऐसा विचार कर और एक बांसकी फचट लेकर पहिले तो उससे उन्होंने पैरमें लगे हुवे कीचड़को खुरच कर दूर किया पश्चात् उस नदश्रीद्वारा भेजे हुवे पानीके कुछ हिस्सेमें एक कपडा भिगोकर उस थोड़ेसे जलसे ही उन्होंने अपने पांव धोलिये और अपने महनीय बुद्धिबलसे अनेक आश्चर्य करानेवाले कुमारने उसमेंसे भी कुछ जल बचाकर कुमारीके पास भेज दिया।

कुमारके इस चातुर्यको अपनी आंखोंसे देख कुमारी नदश्रीसे चुप न रहा गया, वह एकदम कहने लगी-अहा! जैसा कौशल एवं ऊंचे दर्जेका पांडित्य कुमार अ णिकमें है वैसा कौशल एवं पांडित्य अन्यत्र नहीं तथा ऐसा कहती कहती अपने रूपसे

लक्ष्मीको भी नीचे करनेवाली कुमारके गुणोंपर अतिशय मुग्ध, कुमारी नदश्रीने कामदेवसे भी अति मनोहर, कुमार श्रेणिकको भीतर जाकर ठहरा दिया और विनयपूर्वक यह निवेदन भी किया कि हे महाभाग! कृपाकर आज आप मेरे मंदिरमें ही भोजन करें।

हे उत्तम कांतिको धारण करनेवाले प्रभो! आज आप मेरे ही अतिथि बनें। मुझपर प्रसन्न हों। अयि प्राज्ञवर! हमारे अत्यन्त शुभ भाग्यके उदयसे आपका यहां पधारना हुवा है। हे मेरी समस्त अभिलाषाओंके कल्पद्रुम! आप मेरे अतिथि बनकर मुझपर शीघ्र कृपा करें। समारमें बड़े भाग्यके उदयसे इष्टजनोंका संयोग होता है। जो मनुष्य अत्यत दुर्बल इष्टजनको पाकर भी उनकी भलेप्रकार सेवा सत्कार नहीं करते उन्हें भाग्यहीन समझना चाहिये। हे पुण्यात्मन्! भोजनके लिये आदरपूर्वक आग्रह कर रही हू।

कुमारीके ऐसे अतिशय आदरपूर्ण वचन सुन कुमार श्रेणिकने अपनी मधुर वाणीसे कहा–सुभगे! संसारमें तू अति चतुर सुनी जाती है। हे उत्तम लक्षणोंको धारण करनेवाली पंडिते! हे बाले! तथा हे मनोहरांगी! मैं भोजन तब करूंगा जब मेरी प्रतिज्ञानुसार भोजन बनेगा। वह मेरी प्रतिज्ञा यही है कि मेरे हाथमे ये बत्तीस ३२ चांवल हैं इन बत्तीस चावलोंसे भांति भांतिके पके हुवे अन्नसे मनोहर भोजन बनाकर दूध, दही, हवि आदिसे परिपूर्ण, और भी अनेक प्रकारके व्यञ्जनोंकर युक्त, सरस मिष्ट, पूवा आदि पदार्थ सहित, उत्तम भोजन जो मुझे खिलावेगा उसीके यहां मैं भोजन करूंगा, दूसरी जगह नहीं।

कुमारके ऐसे प्रतिज्ञा–परिपूर्ण एवं अपनी परीक्षा करनेवाले वचन सुनकर कुमारी प्रथम तो एकदम विस्मित हो गई।

पश्चात् उसने बड़े विनयसे कहा कि लाइये, अपने चावलोंको कृपाकर मुझे दीजिये।

कुमारीके आग्रहसे कुमारको चावल देने पड़े तथा कुमारसे बत्तीस चावल लेकर उनको पीस कूटकर कुमारीने उनके पूवे बनाये। उन पूवोंको बेचनेके लिये अपनी प्रियसखी निपुणमतिको देकर बाजार भेज दिया। कुमारीकी आज्ञानुसार निपुणमति उन पूवोंको लेकर सफेद वस्त्र पहिनकर बाजारकी ओर गई और जहांपर जूवा खेला जाता था वहां पहुंच कर और किसी ज्वारीके पास जाकर उन पूवोंकी उसने इसप्रकार तारीफ करना प्रारम्भ किया कि ये पूवे अति पवित्र देवमयी हैं, जो भाग्यवान् मनुष्य इनको खरीदेगा इसे अवश्य अनेक लाभ होंगे। सर्व खिलाड़ियोंमें इन पूवोंको खानेवाला ही विशेष रीतिसे जीतेगा। इसमें सन्देह नहीं।

निपुणमतीके इसप्रकार आश्चर्य भरे वचनों पर विश्वास कर एवं उन पूवोंको सच ही देवमयी जानकर ज्वारियोंके मनमें उनके खरीदनेकी इच्छा हुई और खेलमें विजय एव अधिक धनकी आशासे उनमेंसे एक ज्वारीने मुंहमांगी कीमत देकर पूवोंको तत्काल खरीद लिया और कीमत अदा कर दी। कीमतका रुपया लेकर और कुमारकी प्रतिज्ञानुसार भोजनके लिये उसे पर्याप्त जानकर निपुणमतीने उसी समय नन्दश्रीको जाकर चुपचाप दे दिया।

जिस समय नन्दश्रीने पूवोंकी कीमतको देखा तो उसको बड़ी प्रसन्नता हुई और उसने भांतिर के मधुर भोजन बनाना प्रारम्भ कर दिया। जिस समय वह भोजन बना चुकी उसने भोजनके लिये कुमारको बुला भी लिया। भोजनका बुलावा सुन नन्दश्रीका रूप देखनेके अति लोलुपी, अपने मनमें अति प्रसन्न कुमार पाकशालामें चट आ धमके। कुमारीने कुमारको देखते

ही आदरपूर्वक आसन दिया और प्रेमपूर्वक भोजन कराना आरम्भ कर दिया।

कभी तो वह कुमारी भोजनमें मग्न कुमारको खीर आदि पदार्थोंसे उत्तम रसोंसे परिपूर्ण अनेक मसालों युक्त, अति मधुर बेरोंके टुकड़ोंको खिलाती हुई और कभी अपनी चतुरतासे भांति२ के फलोंका उसने भोजन कराया तथा कभी२ उसने दूध दही मिश्रित नानाप्रकारके व्यंजन बनाकर कुमारको खिलाये। एवं कुमार भी उसके चातुर्यपर विचार करते२ भोजन करते रहे तथा जिस समय कुमार भोजन कर चुके उस समय कुमारने पान खाया।

इस प्रकार कुमारके चातुर्यसे अति प्रसन्न, उनके गुणोंमें अतिशय आसक्त, कुमारी नंदश्री जिस प्रकार राजहंसके पास बैठी हुई राजहंसी शोभित होती है, कुमारके समीपमें बैठी हुई अत्यन्त शोभित होने लगी।

इन समस्त बातोंके बाद कुमारीके मनमें फिर कुमारकी बुद्धिकी परीक्षाका कौतूहल उठा। उसने शीघ्र एक अति टेढ़े छेदका मूंगा कुमारको दिया और उसमें डोरा पोनेके लिये निवेदन किया, कुमारी द्वारा दिये हुवे इस कार्यको कठिन कार्य जान क्षणभर तो कुमार उसके पोनेके लिये विचार करते रहे। पीछे भले प्रकार सोच विचार कर उस डोरेके मुखपर थोड़ा गुड़ लपेट दिया और अपनी शक्तिके अनुसार मूंगके छेदमें उसको प्रविष्ट कर चिंटियोंके बिलपर उसे जाकर रख दिया।

गुड़की आशासे जब चिंटियोंने डोरेको खींचकर पार कर दिया तब डोरा पार हुवा जानकर कुमार श्रेणिकने मूंगेको लाकर नन्दश्रीको दे दिया। कुमारी नन्दश्री कुमार श्रेणिकका यह अपूर्व चातुर्य देख अति प्रसन्न हुई, उसका मन कुमारमें आसक्त हो

गया। यहांतक कि कुमारके श्रेष्ठगुणोंसे, उनकी रूप सम्पदासे कामदेव भी बुरी रीतिसे उसके सामने कम मस्त।

सेठ इन्द्रदत्तको यह पता लगा कि कुमारी नंदश्री कुमार श्रेणिकपर आसक्त है, कुमार श्रेणिकको वह अपना वल्लभ बना चुकी तो शीघ्र ही राजाके समान सम्पत्तिके धारक इन्द्रदत्तने कुमारीके विवाहार्थ बड़े आनन्दसे उद्योग किया।

कुमार कुमारीके विवाहका उत्सव नगरमें बड़े जोर शोरसे प्रारम्भ हुवा। समस्त दिशाओंको बधिर करनेवाले घण्टे बजने लगे, नगर अनेक प्रकारकी ध्वजाओंसे व्याप्त, मनोहर तोरणोंसे शोभित, कल्याणको सूचन करनेवाले शुभ शब्दोंसे युक्त हो गया। उस समय भेरियोंके बड़ेर शब्द होने लगे। शंख काहल आदि बाजे बजने लगे। नक्कारोंके शब्द भी उस समय खूब जोर शोरसे होने लगे। समस्त जनोंके सामने भांति भांतिकी शोभाओंसे मंडित कुमार कुमारीका विवाह मंडप प्रीतिपूर्वक बनाया गया। बंदीगण कुमार श्रेणिकके यशको मनोहर पद्योंमें रचकर गान करने लगे। कुमार श्रेणिक और कुमारी नंदश्रीके विवाहके देखनेसे दर्शकजनोंको बचनागोचर आनंद हुवा। उन दोनोंके रूप देखनेसे दोनोंके गुणोपर मुग्ध दोनोंकी सब लोग मुक्तकण्ठसे तारीफ करने लगे।

दम्पतिका रूप देख समस्त लोग इस भांति कहने लगे कि आश्चर्यकारी इनकी गति है तथा आश्चर्य इनका रूप और मधुर वचन है। ये सब बातें पूर्व पुण्यसे प्राप्त हुई हैं। नंदश्रीको देखकर अनेक मनुष्य कहने लगे कि चन्द्रके समान कांतिको धारण करनेवाला तो यह नंदश्रीका मुख है, फूले कमलके समान इसके दोनों नेत्र हैं और अत्यन्त विस्तीर्ण इसका ललाट है। कुमार श्रेणिकका संसारमें अद्भुत पुण्य मालूम पड़ता है जिससे कि इस कुमारको ऐसे स्त्रीरत्नकी प्राप्ति हुई है तथा कुमारको

देखकर लोग यह कहने लगे कि इस नंदश्रीने पूर्व जन्ममें क्या कोई उत्तम तप किया था! अथवा किसी उत्तम व्रतको धारण किया था। वा इष्ट पदार्थोंके देनेवाले शीलका इसने परभवमें आश्रय किया था? अथवा इसने उत्तम पात्रोंको पवित्र दान दिया था? जिससे इसको ऐसे उत्तम रूपवान गुणवान पतिकी प्राप्ति हुई है।

इस प्रकार धर्मके प्रभावसे समस्त लोकद्वारा प्रशंसित, अतिशय हर्षित चित्त, अत्यन्त दीप्तियुक्त देहके धारक, वे दोनों स्त्री-पुरुष भलिभांति सुखका अनुभव करने लगे।

इस प्रकार होनेवाले श्री पद्मनाभ भगवानके पूर्वभवके जीव महाराज श्रेणिकका कुमारी नन्दश्रीके साथ विवाह-वर्णन करनेवाला चौथा सर्ग समाप्त हुआ।

पांचवां सर्ग

महाराज श्रेणिकको राज्यकी प्राप्ति

जिस उत्तम धर्मकी कृपासे संसारमें उन दोनों दंपतिको अतिशय सुख मिला, धर्मात्मा पुरुषोंको अनेक विभूति देनेवाले उस परम पवित्र धर्मको मैं मस्तक झुकाकर नमस्कार करता हूं।

इस प्रकार विवाहके अनंतर कुमार श्रेणिकने पके हुवे ताड़ फलके समान उत्तम स्तनोंसे मंडित, मनको भलेप्रकार सतुष्ट करनेवाली कांता नंदश्रीके साथ क्रीड़ा करनी प्रारंभ कर दी। कभी तो कुमार उसके साथ मनोहर उद्यानमें लता मंडपोंमें रमने लगे, कभी उन्होंने नदियोंके तट अपने क्रीड़ास्थल बनाये तथा कभी कभी वे उत्तम स्तनोंसे विभूषित नंदश्रीके साथ महलकी अटारियोंमें क्रीड़ा करने लगे। जिसप्रकार दरिद्री पुरुष खजाना पाकर अति मुदित होजाता है और उसे अपने तन बदनका भी होश हवाश नहीं रहता उसी प्रकार कुमार उस नदश्रीके देहस्पर्शसे-अतिशय आनंदका अनुभव करने लगे।

मनोहरांगी नंदश्री भी सूर्यकी किरणस्पर्शसे जैसे कमलिनी आनंदित होती है उसी प्रकार कुमारके हाथके कोमल स्पर्शसे अनन्य प्राप्त सुखका आस्वादन करने लगी। कभी तो वे दोनों दम्पति चुम्बनजन्य सुखका अनुभव करने लगे। और कभी स्वाभाविक रसका आस्वादन करने लगे तथा कभी कभी दोनोंने परस्पर रूपदर्शन एवं रतिसे उत्पन्न आनन्दका अनुभव किया, और कभी हास्योत्पन्न रस चाखा। कभी२ स्तनस्पर्शसे उत्पन्न एवं कथा कौतूहलसे जनित सुखका भी उन्होंने भोग किया।

इस प्रकार मानसिक, कायिक, वाचनिक अभीष्ट सुखको अनुभव करनेवाले, भांति भांतिकी क्रीड़ाओंमें मग्न, सुखसागरमें गोते

मारनेवाले, कुमार श्रेणिक और नंदश्रीके जाते हुवे कालका भी पता न लगा।

बाद कुछ दिनके उत्तम गुणयुक्त कुमारके साथ क्रीड़ा करते करते रानी नंदश्रीके धर्मके प्रभावसे गर्भ रह गया तथा सुन्दर आकारका धारक शुभ लक्षणों कर युक्त वह उदरमें स्थित जीव दिनोंदिन बढ़ने लगा। गर्भके प्रभावसे रानी नंदश्रीके अतिशय मनोहर अगपर कुछ सफेदी छागई, स्तनोंके अग्रभाग (चूचुक) काले पड़ गये। उसे किसी प्रकारके भूषण भी नहीं रुचने लगे। तथा भूषण रहित वह ऐसी शोभित होने लगी जैसा नक्षत्रोंके अस्त हो जानेपर प्रभात शोभित होता है एवं गर्भके भारसे नन्दश्रीकी गति भी अधिक मन्द होगई।

भोजन भी बहुत कम रुचने लगा और उसको अपने अंगमें ग्लानि भी होने लगी एवं मतवाले हाथीके समान गमन करनेवाली, मुखरूपी चन्द्रमासे शोभित मनोहरांगी नन्दश्रीके अंगमें गर्भसे होनेवाले मनोहर चिह्न भी प्रकाशित होने लगे। कदाचित् नन्दश्रीको सात दिन पर्यंत अभयदानका सूचक उत्तम दोहला हुआ। अपने घरकी स्थिति देख उस दोहलाकी पूर्ति अति कठिन जानकर वह चिन्ता करने लगी और जैसी पानीके अभावसे उत्तम लता कुह्मला जाती है उसी प्रकार उसका अंग भी चिंतासे सर्वथा कुम्हलाने लगा।

किसी समय कुमार श्रेणिककी दृष्टि नन्दश्री पर पड़ी। उदास एवं कांति रहित रानी नन्दश्रीको देख उन्हें अति दुःख हुवा। वे अपने मनमें विचार करने लगे कि अतिशय मनोहर एवं देदीप्यमान सुन्दरी नन्दश्रीके शरीरमें अति बाधा देनेवाला यह दुःख कहांसे टूट पड़ा! इसकी यह दशा क्यों और कैसी हो गई! तथा क्षणएक ऐसा विचार उन्होंने पास जाकर नंदश्रीसे पूछा—हे प्रिये! किस कारणसे आपका शरीर सर्वथा खिन्न,

कृष और फीका पड़ गया है वह कौनसा कारण है मुझे कहो?

कुमारके ऐसे हितकारी एवं मधुर वचन सुनकर और दोहलेकी पूर्ति सर्वथा कठिन समझकर पहिले तो नन्दश्रीने कुछ भी उत्तर न दिया, किंतु जब उसने कुमारका आग्रह विशेष देखा तो वह कहने लगी—हे कांत! मैं क्या करूं मुझे सात दिन पर्यंत अभयदानका सूचक दोहला हुवा है। इस कार्यकी पूर्ति अति कठिन जान मैं खिन्न हूं। मेरी खिन्नताका दूसरा कोई भी कारण नहीं। प्रियतमा नंदश्रीके ऐसे वचन सुन कुमारने गम्भीरतापूर्वक कहा—

प्रिये! इस बातके लिये तुम जरा भी खेद न करो। मत व्यर्थ खेदकर अपने शरीरको सुखाओ। सुव्रते! मैं शीघ्र ही तुम्हारी इस अभिलाषाको पूर्ण करूंगा। चतुरे! जो तुम इस कार्यको कठिन समझ दुःखित हो रही हो सो सर्वथा व्यर्थ है। तथा मधुरभाषिणी एवं शुभांगी नन्दश्रीको ऐसा आश्वासन देकर भलेप्रकार समझा बुझाकर, कुमार श्रेणिक किसी वनकी ओर चल पड़े और वहांपर किसी नदीके किनारे बैठ नंदश्रीकी इच्छा पूर्ण करनेके लिये विचार करने लगे।

उस समय उसी नगरके राजा वसुपालका ऊंचे२ दांतोंको धारण करनेवाला एक मतवाला हाथी नगरसे बड़े झपाटेसे बाहिर निकला तथा प्रत्येक घरके द्वारको तोड़ता हुवा, बहुतसे नगरके खम्भोंको उखाड़ता हुवा, अनेक प्रकारके वृक्षोंको नीचे गिराता हुवा, उत्तमोत्तम लतामंडपोंको निर्मूल करता हुवा, अनेक सज्जन वीरों द्वारा रोकनेपर भी नहीं रुकता हुवा, अपने चित्कारसे समस्त दिशाओंको बधिर करता हुवा, एवं अपनी सूंडको ऊपर उठा दिग्गजोंको भी मानों युद्ध करनेके लिये ललकारता हुवा और समस्त नगरको व्याकुल करता हुवा मत्त हाथी उसी नदीकी ओर झपटा जहां कुमार बैठे थे।

जिस समय पर्वतके समान विशाल, अति मत्त, अपनी ओर आता हुवा, वह भयंकर हाथी कुमारकी नजर पड़ा तो कुमार शीघ्र ही उसके साथ युद्ध करनेके लिये तैयार होगये तथा उस मतवाले हाथीके सन्मुख जाकर अनेक प्रकारसे उसके साथ युद्ध कर मारे मुक्कोंके उसे मद रहित कर दिया। और निर्भयता पूर्वक क्रीड़ार्थ उसकी पीठपर चट सवार हो राज-द्वारकी ओर चल दिये।

मतवाले हाथीपर बैठे हुवे कुमारको देखकर हाथीके कर्मोंसे भयभीत, कुमारका हाथीके साथ युद्ध देखनेवाले कुमारकी वीरतासे चकित, अनेक मनुष्य जय जय शब्द करने लगे एवं परस्पर एक दूसरेसे यह भी कहने लगे—सेठ इन्द्रदत्तके जमाईका पराक्रम आश्चर्यकारक है। रूप और नवयौवन भी बड़ा भारी प्रशसनीय है। शक्ति भी लोकोत्तर मालूम पड़ती है।

देखो, जिस मत्त हाथीको बलवानसे बलवान भी कोई मनुष्य नहीं जीत सकता था उस हाथीको इस कुमारने अपने बुद्धि बल और पुण्यके प्रभावसे बातकी बातमें जीत लिया। इधर मनुष्य तो इस भांति पवित्र शब्दोंसे कुमारकी स्तुति करने लगे, उधर गजसे भी अतिशय पराक्रमी कुमारने अनेक प्रकारकी लीली पीली ध्वजाओंसे शोभित क्रीड़ापूर्वक नगरमें प्रवेश किया।

सुन्दर आकारके धारक, असाधारण उत्तम गुणोंसे मंडित कुमार श्रेणिकको हाथीपर चढे हुवे देख महाराज वसुपाल मनमें अति हर्षित हुवे और बड़ी प्रीति एवं हर्षसे उन्होंने कुमारसे कहा—

हे वीरोंके शिरताज! हे अनेक पुण्य फलोंके भोगनेवाले कुमार! जिस बातकी तुम्हें इच्छा हो शीघ्र ही मुझे कहो। हे उत्तमोत्तम गुणोंके भण्डार कुमार! शक्त्यनुसार मैं तुम्हारी इच्छा पूर्ण करूँगा। महाराजके संतोषभरे वचन सुनकर अन्य मनुष्यों द्वारा कुछ मांगनेके लिये प्रेरित भी कुमारने कुछ भी

अहंकारसे कुछ भी जवाब नहीं दिया, महाराजके सामने वे चुपचाप ही खड़े रहे

सेठ इन्द्रदत्त भी ये सब बातें देख रहे थे। उन्होंने शीघ्र ही कुमारके मनके भावको समझ लिया और इस भांति महाराजसे निवेदन किया—महाराज! यदि आप कुमारके कामको देखकर प्रसन्न हुवे हैं और उनकी अभिलाषा पूर्ण करना चाहते हैं तो एक काम करें, सात दिनतक इस नगर और देशमें सब जगह पर आप अभयदानकी ड्योडी पिटवादें।

सेठ इन्द्रदत्तके ऐसे कुमारके अनुकूल वचन सुन राजा वसुपाल अति संतुष्ट हुवे और उन्होंने बेधड़क कह दिया कि आपने जो कुमारके अनुकूल कहा है वह मुझे मजूर है। मैं सात दिनतक नगर एवं देशमें सब जगह अभयदानके लिये तैयार हूं। तथा ऐसा कहकर अपनी प्रतिज्ञाके अनुसार अभयदानके लिये नगर एवं देशमें सर्वत्र डंका भी पिटवा दिया।

रानी नंदश्रीने यह बात सुनी कि कुमारकी वीरतापर मोहित होकर महाराज वसुपालने सात दिन तक अभयदान देना स्वीकार किया है तो सुनते ही वह अपने मनोरथको पूर्ण हुवा समझ, बहुत प्रसन्न हुई और जैसे नवीन लता दिनोंदिन प्रफुल्लित होती जाती है वैसे वह भी दिनोदिन प्रफुल्लित होने लगी। शुभ लग्न, शुभ वार, शुभ नक्षत्र, शुभ दिन एवं शुभ योगमें किसी समय रानी नंदश्रीने अतिशय आनंदित, पूर्ण चन्द्रमाके समान मनोहर मुखका धारक कमलके समान मनोहर नेत्रोंसे युक्त, उत्तम पुत्रको जना! पुत्रकी उत्पत्तिसे मारे आनंदके रानी नन्दश्रीका शरीर रोमांचित होगया और वह सुखसागरमें गोता लगाने लगी।

सेठ इन्द्रदत्तके घर पुत्री नंदश्रीसे धेवता हुआ है यह समाचार सारे नगरमें फैल गया। सेठ इन्द्रदत्तके घर कामिनियां

मनोहर गीत गाने लगीं। बंदीजन पुत्रकी स्तुति करने लगे, पुत्रके आनंदमें मनोहर शब्द करनेवाले अनेक बाजे भी बजने लगे। बालकके गर्भस्थ होने पर नंदश्रीको अभयदानका दोहला हुआ था इसलिये उस दिनको लक्ष्यकर सेठ इन्द्रदत्तके कुटुम्बी मनुष्योंने बालकका नाम अभयकुमार रख दिया एवं जैसे रात्रि-विकासी कमलोंको आनंद देनेवाला चंद्रमा दिनोंदिन बढ़ता चला आता है वैसे ही अतिशय देदीप्यमान शरीरका धारक समस्त भूमण्डलको हर्षायमान करनेवाला वह कुमार भी दिनोंदिन बढ़ने लगा।

कुटुम्बीजन दूधपान आदिसे बालककी सेवा करने लगे, आनंदसे खिलाने लगे इसलिये उस बालकसे उसके पिता माताको और भी विशेष हर्ष होने लगा। कुछ दिन बाद अभयकुमारने अपनी बालक अवस्था छोड़ कुमार अवस्थामें पदार्पण किया और उस समय तेजस्वी कुमार अभयने थोड़े ही कालमें अपने बुद्धिबलसे बातकी बातमें समस्त शास्त्रोंका पार पा लिया। वह असाधारण विद्वान् हो गया। इस प्रकार कुमार श्रेणिकके साथ रानी नंदश्रीके साथ भांति भांतिके भोग भोगने लगे तथा भोग विलासोंमें मस्त, वे दोनों दम्पति जाते हुए कालकी भी परवा नहीं करने लगे।

इधर कुमार श्रेणिक तो सेठ इन्द्रदत्तके घर नंदश्रीके साथ नानाप्रकारके भोग भोगते हुवे सुखपूर्वक रहने लगे, उधर महाराज उपश्रेणिक अतिशय मनोहर, अनेक प्रकारकी उत्तमोत्तम शोभासे शोभित राजगृह नगरमें आनन्दपूर्वक अपना राज्य कर रहे थे। अचानक ही जब उनको यह पता लगा कि अब मेरी आयुमें बहुत ही कम दिन बाकी है-मेरा मरण अब जल्दी होनेवाला है तो शीघ्र ही उन्होंने चक्रवर्तीके समान उत्कृष्ट बड़े बड़े सामंतोंसे सेवित, विशाल राज्य चिलाती पुत्रको दे दिया

तथा राज्यकार्यसे सर्वथा ममतारहित होकर पारमार्थिक कार्योंमें चित्त लगाने लगे।

कुछ दिनके बाद आयुकर्मके समाप्त हो जानेपर महाराज उपश्रेणिकका शरीरांत हो गया। उनके मर जानेसे सारे नगरमें हाहाकार मच गया, पुरवासी लोग शोक-सागरमें गोता मारने लगे। रनवासकी रानियां भी महाराजका मरण समाचार सुन करुणाजनक रोदन करने लगीं। जितने सौभाग्यचिह्न हार आदिके थे सब उन्होंने तोड़कर फैंक दिये और महाराजके मरनेसे सारा जगत उन्हें अन्धकारमय सूझने लगा।

महाराज उपश्रेणिकके बाद रहा सहा भी अधिकार राजा चलातीको मिल गया। महाराज उपश्रेणिकके समान वह भी मगध देशका महाराजा कहा जाने लगा, किन्तु राजनीतिसे सर्वथा अनभिज्ञ राजा चलातीने सामंत, मंत्री, पुरवासी जनोंसे भले-प्रकार सेवित होनेपर भी राज्यमें अनेक प्रकारके उपद्रव करने प्रारम्भ कर दिये। कभी तो वह बिना ही अपराधके धनिकोंके धन जप्त करने लगा और कभी प्रजाको अन्य प्रकारके भयंकर कष्ट पहुँचाने लगा। जिनके आधारपर राज्य चल रहा था उन राजसेवकोंकी आजीविका भी उसने बन्द कर दी।

राज्यमें इस प्रकारका भयंकर अन्याय देख पुरवासी एवं देशवासी मनुष्य त्रस्त होने लगे और खुले मैदान उनके मुखसे ये ही शब्द सुननेमें आने लगे कि राजा चिलाती बड़ा पापी है, अन्यायी है और राज्य पालन करनेमें सर्वथा असमर्थ है। राजाका इस प्रकार नीच बर्ताव देख राजमंत्री भी दांतोंमें उँगली दबाने लगे।

राज्यको संभालनेके लिये उन्होंने अनेक उपाय सोचे किन्तु कोई भी उपाय उनको कार्यकारी नजर न पड़ा। अन्तमें विचार करते करते उन्हें कुमार श्रेणिककी याद आई। याद आते ही

चट उन्होंने यह सलाह की—राजा चलाती पापी, दुष्ट एवं राजनीतिसे सर्वथा अनभिज्ञ है, यह इतने विशाल राज्यको चला नहीं सकता इसलिये कुमार श्रेणिकको यहां बुलाना चाहिये और किसी रीतिसे उन्हें मगधदेशका राजा बनाना चाहिये।

समस्त पुरवासी एव मंत्री आदिक कुमारके गुणोंसे भली-भांति परिचित थे इसलिये यह उपाय सबको उत्तम मालूम हुवा एवं तदनुसार एक दूत जोकि राज्यमें अति चतुर था, शीघ्र ही कुमारके पास भेज दिया और व्योरेवार एक पत्र भी उसे लिखकर दे दिया। जहां कुमार श्रेणिक रहते थे, दूत उसी देशकी ओर कुछ दिन पर्यन्त मजल दरमंजल तयकर कुमारके पास जा पहुंचा। कुमारको देखकर दूतने विनयसे नमस्कार किया और उनके हाथमें पत्र देकर जबानी भी यह कह दिया—हे कुमार! अब तुम्हें शीघ्र मेरे साथ राजगृह नगर चलना चाहिये।

दूतके मुखसे ऐसे वचन सुनकर एवं पत्र बांच उनके वचनों-पर सर्वथा विश्वास कर, कुमार श्रेणिक अपने मनमें प्रसन्न हुवे। मारे हर्षके उनका शरीर रोमांचित हो गया तथा पत्र हाथमें लेकर वे सीधे सेठ इन्द्रदत्तके समीप चल दिये। वहां जाकर उन्होंने सेठ इन्द्रदत्तको नमस्कार किया और यह समाचार सुनाया—हे माननीय! राजगृहपुरसे एक दूत आया है उसने यह पत्र मुझे दिया है, इस समय वहां जानेके लिये शीघ्र आज्ञा दें। विना आपकी आज्ञाके मैं वहां जाना ठीक नहीं समझता।

यकायक कुमारके मुखसे ऐसे वचन सुन सेठ इन्द्रदत्त आश्चर्यसागरमें निमग्न हो गये। 'अब कुमार यहांसे चले जायेंगे' यह जान उन्हें बहुत दुःख हुवा किन्तु कुमारने उन्हें अनेक प्रकारसे आश्वासन दे दिया इसलिए वे शांत हो गये और उन्हें जबरन कुमारको जानेके लिये आज्ञा देनी पड़ी।

सेठ इन्द्रदत्तसे आज्ञा लेकर कुमार प्रियतमा नंदश्रीके पास गये। वहाने भी उन्होंने इस प्रकार अपनी आत्मकहानी कहनी

प्रारम्भ कर दी—हे प्रिये ! हे वल्लभे ! हे मनोहरे ! हे चंद्रमुखी ! हे गजगामिनि ! मेरे परम्परासे आया हुवा राज्य है, अचानक मेरे पिताके शरीरांत हो जानेसे मेरा भाई उस राज्यकी रक्षा कर रहा है। किन्तु प्रजा उसके शासनसे संतुष्ट नहीं है, इसलिये अब मुझे राजगृह जाना जरूरी है। हे सुन्दरी ! जबतक मैं वहां न पहुचूंगा, राज्यकी रक्षा भले प्रकार नहीं हो सकेगी। इस समय मैं तुझसे यह कहे जाता हूँ कि जबतक मैं तुझे न बुलाऊं कुमार अभयके साथ अपने पिताके घर ही रहना। राज्यकी प्राप्ति होनेपर तुझे मैं नियमसे बुलाऊंगा इसमें सदेह नहीं।

अचानक ही कुमारके ऐसे बचन सुन रानी नंदश्रीकी आंखोंसे टप टप आंसू गिरने लगे। मारे दुःखके, कमलके समान फूला हुवा भी उसका मुख कुम्हला गया और कुमारको कुछ भी जवाब न देकर वह निश्चल काष्ठकी पुतलीके समान खड़ी रह गई, किन्तु ऐसी दशा देख कुमारने उसे बहुत कुछ समझा दिया और संतोष देनेवाले प्रिय बचन कहकर शांत कर दिया।

इस प्रकार प्रियतमा नंदश्रीसे मिलकर कुमार वहांसे चल दिये। और राजगृही जानेके लिये तयार हो गये।

कुमार अब जारहे हैं, सेठ इन्द्रदत्तको यह पता लगा, उन्होंने कुमारको न मालूम पड़े इस रीतिसे पांच हजार बलवान योद्धा कुमारके साथ भेज दिया। एवं पांच हजार सुभटोंके साथ कुमार श्रेणिकने राजगृह नगरकी ओर प्रस्थान कर दिया। जिस समय वे मार्गमें जाने लगे उस समय उत्तमोत्तम फलोंके सूचक उन्हें अनेक शकुन हुवे। और मार्गमें अनेक वन उपवनोंको निहारते हुवे कुमार श्रेणिक मगधदेशके पास जा पहुंचे।

कुमार श्रेणिक मगधदेशमें आ गये यह समाचार सारे देशमें फैल गया। समस्त सामन्त, मंत्री एवं अन्यान्य देशवासी मनुष्य बड़े विनयभावसे कुमार श्रेणिकके पास आये और

भक्तिपूर्वक नमस्कार किया। कुछ समय वहां ठहर कर प्रेम-पूर्वक वार्तालाप कर कुमार फिर आगेको चल दिये। मेरु पर्वतके समान लम्बे चौड़े हाथी, अनेक बड़ेर रथ, और पयादे कुमारके आगमनके उत्सवमें सारा देश बाजोंकी आवाजसे गूँज उठा। एवं कुछ दिन और चलकर कुमार राजगृह नगरके निकट आ दाखिल हुवे।

इधर राजा चिलातीको यह पता लगा कि अब श्रेणिक यहां आगये हैं, उनके साथ विशाल सेना है, समस्त देशवासी और नगरवासी मनुष्य भी कुमार श्रेणिकके ही अनुयायी ही हो गये हैं, मारे भयके वह कांपने लगा। तथा अब मैं लड़कर कुमार श्रेणिकसे विजय नहीं पा सकता। यह भले प्रकार सोच विचार अपनी कुछ सम्पत्ति लेकर किसी किलेमें जा छिपा।

उधर सूर्यके समान प्रतापी, बड़े बड़े सामतोंसे सेवित, पुण्यात्मा, जिनके ऊपर क्षीरसमुद्रके समान सफेद चमर ढुल रहे हैं, जिनका यश चऊं ओर बन्दीजन गान कर रहे हैं, कुमार श्रेणिकने बड़े ठाटबाटसे नगरमें प्रवेश किया। नगरमें कुमारके घुसते ही बाजोंके गम्भीर शब्द होने लगे। बाजोंकी आवाज सुन जैसे समुद्रमें तरङ्ग बाहिर निकलती है, नगरकी स्त्रियां महाराजको देखनेके लिये घरोंसे निकल भगीं। कोई स्त्री अपने स्वामीको चौकेमें ही बैठा छोड़ उसे बिना ही भोजन पिरोसे कुमारको देखनेके लिये बाहर भगीं।

कोई स्त्री मठा बिलोड़ रही थी, कुमारके दर्शनकी लालसासे उसने मठा बिलोड़ना छोड़ दिया। कोई कोई तो कुमारके देखनेमें इतनी लालायित हो गई कि शृङ्गार करते समय उसने ललाटका तिलक आंखोंमें लगा लिया और आंखोंका काजल ललाटपर आंज लिया, एवं बिना देखे भाले ही बाहर भगीं, तथा किसी स्त्रीने शिरके भूषणको गलेमें पहिनकर गलेके भूषणको शिरमें पहिनकर ही कुमारके देखनेके लिये दौड़ना शुरू कर दिया और कोई

स्त्री हारको कमरमें पहिनकर और करधनीको गलेमें डाल कर ही दौड़ी। कोई स्त्री अपने काममें लग रही थी।

जिस समय सखियोंने उससे कुमारके देखनेके लिये आग्रह किया तो वह एकदम घर भगी, जल्दीमें उसे चोलीके उल्टे सीधेका भी ज्ञान नहीं रहा। वह उल्टी चोली पहिन कर ही कुमारको देखने लगी। तथा कोई स्त्री तो कुमारके देखनेके लिये इतनी बेसुध होगई कि अपने बालकको रोता हुआ छोड़कर दूसरे बालकको ही गोदमें लेकर घर भगी तथा कोई कोई स्त्री जो कि नितंबके भारसे सर्वथा चलनेके लिये असमर्थ थी उसने दूसरी स्त्रियोंके मुखसे ही कुमारकी तारीफ सुन अपनेको धन्य समझा। कोई वृद्धा जो कि चलनेके लिये सर्वथा असमर्थ थी, दूसरी स्त्रियोंसे यह कहने लगी—

ऐ बेटा! किसी रीतिसे मुझे भी कुमारके दर्शन करा दे, मैं तेरा यह उपकार कदापि नहीं भूलूंगी। तथा कोई कोई स्त्री तो कुमारको देख ऐसी मत्त हो गई कि कुमारके दर्शनकी फूलमें दूसरी स्त्रियोंपर गिराने लगी और जिस ओर कुमारकी सवारी जा रही थी बेसुध हो उसी ओर दौड़ने लगी। तथा किसी किसी स्त्रीकी ऐसी दशा हो गई कि एक समय कुमारको देख घर आकर भी वह फिर कुमारके देखनेके लिये घर भागी।

अनेक उत्तम स्त्रियां तो कुमारको देख ऐसा कहने लगी कि संसारमें वह स्त्री धन्य है जिसने इस कुमारको जना है, और अपने स्तनोंका दूध पिलाया है। तथा कोई कोई ऐसा कहने लगी-हे आली! यह बात सुननेमें आई है कि इन कुमारका विवाह वेणुतट नगरके सेठ इंद्रदत्तकी पुत्री नंदश्रीके साथ होगया है। संसारमें वह नंदश्री धन्य है। तथा कोई कोई यह भी कहने लगी कि कुमार श्रेणिकके सम्बन्धसे रानी नंदश्रीके अभय-कुमार नामका उत्तम पुत्र भी उत्पन्न हो गया है। इत्यादि

पुरवासी स्त्रियोंके शब्द सुनते हुवे तथा पुरवासियोंके मुखसे जय जय शब्दोंको भी सुनते हुवे तथा कुमार श्रेणिक, लीली पीली ध्वजा एवं तोरणोंसे शोभित राजमंदिरके पास जा पहुंचे।

राजमंदिरमें प्रवेशकर कमारने अपनी पूज्य माता आदिको भक्तिपूर्वक नमस्कार किया तथा अन्य जो परिचित मनुष्य थे उनसे भी यथायोग्य मिले भैंटे। कुछ दिन बाद मंत्रियोंकी अनुमतिपूर्वक कुमारका राज्याभिषेक किया गया। कुमार श्रेणिक अब महाराज श्रेणिक कहे जाने लगे तथा अनेक राजाओंसे पूजित, अतिशय प्रतापी, समस्त शत्रुओंसे रहित, महाराज श्रेणिक, मगध देशका नीतिपूर्वक राज्य करने लग गये।

इसप्रकार अपने पूर्वोपार्जित धर्मके महात्म्यसे राज्यविभूतिको पाकर समस्त जनोंसे मान्य, अनेक उत्तमोत्तम गुणोंसे भूषित, नीतिपूर्वक राज्य चलानेवाला, अतिशय देदीप्यमान शरीरके धारक महाराज श्रेणिक अतिशय आनन्दको प्राप्त हुए।

जीवोंका संसारमे यदि परममित्र है तो धर्म है। देखो, कहा तो महाराज श्रेणिकको राजगृह नगर छोड़कर सेठ इन्द्रदत्तके यहां रहना पड़ा था और कहां फिर उसी मगधदेशके राजा बन गये। इसलिये उत्तम पुरुषोंको चाहिये कि वे किसी अवस्थामें धर्मको न छोडे क्योंकि ससारमें मनुष्योंको धर्मसे उत्तम बुद्धिकी प्राप्ति होती है, धर्मसे ही अविनाशी सुख मिलता है। देवेन्द्र आदि उत्तम पदोंकी प्राप्ति भी धर्मसे ही होती है और धर्मकी कृपासे ही उत्तम कुलमें जन्म मिलता है।

इस प्रकार भविष्यत् कालमें होनेवाले भगवान श्री पद्मनाभके जीव महाराज श्रेणिकको राज्यकी प्राप्ति बतलानेवाला पांचवा सर्ग समाप्त हुवा।

छठवां सर्ग

कुमार अभयका राजगृहमें आगमन

केवलज्ञानकी कृपासे समस्त जीवोंको यथार्थ उपदेश देनेवाले परम दयालु, भले प्रकारसे पदार्थोंके स्वरूपको प्रकाशित करनेवाले, अन्तिम तीर्थंकर श्रीवर्द्धमानस्वामीको नमस्कार है।

इसके अनन्तर समस्त शत्रुओंसे रहित, प्रजाके प्रेमपात्र, अनेक उत्तमोत्तम गुणोंसे मंडित, वे महाराज श्रेणिक भलेप्रकार नीतिपूर्वक प्रजाका पालन करने लगे। उनके राज्य करते समय न तो राज्यमें किसी प्रकारकी अनीति थी और न किसी प्रकारका भय ही था किन्तु प्रजा अच्छी तरह सुखानुभव करती थी। पहिले महाराज बौद्धमतके सच्चे भक्त हो चुके थे, इसलिये वे उस समय भी बुद्धदेवका बराबर ध्यान करते रहते थे और बुद्धदेवकी कृपासे ही अपनेको राजा हुवा समझते थे।

किसी समय महाराज राजसिंहासनपर विराजमान होकर अपना राज्य कार्य कर रहे थे। अचानक ही एक विद्याधर जो अपने तेजसे समस्त भूमण्डलको प्रकाशमान करता था, सभामें आया और महाराज श्रेणिकको विनयपूर्वक नमस्कार कर यह कहने लगा—

हे देव! इसी जम्बूद्वीपकी दक्षिण दिशामें एक केरला नामकी प्रसिद्ध नगरी है। उस नगरीका स्वामी विद्याधरोंका अधिपति राजा मृगांक है। राजा मृगांककी रानीका नाम मालतीलता है जो कि समस्त रानियोंमें शिरोमणि, एवं रूपादि उत्तमोत्तम गुणोंकी खानि है और महाराणी मालतीलतासे उत्पन्न अनेक शुभलक्षणोंसे युक्त विलासवती नामकी उसके एक पुत्री है। किसी समय पुत्री विलासवतीको यौवनावस्थापन्न देख राजा

मृगांकको उसके लिये योग्य वरकी चिन्ता हुई। वे शीघ्र ही किसी दिगम्बर मुनिके पास गये और उनसे इस प्रकार विनयभावसे पूछा—

हे प्रभो! मुने! आप भूत, भविष्यत्, वर्तमान त्रिकालवर्ती पदार्थोंके भलेप्रकार जानकार हैं। संसारमें ऐसा कोई पदार्थ नहीं जो आपकी दृष्टिसे बाह्य हो। कृपाकर मुझे यह बतावें कि पुत्री विलासवतीका वर कौन होगा?

राजा मृगांकके ऐसे विनयभरे वचन सुन मुनिराजने कहा— राजन्! इसी द्वीपमें अतिशय उत्तम एक राजगृह नामका नगर है। राजगृह नगरके स्वामी, नीतिपूर्वक प्रजाका पालन करनेवाले, महाराज श्रेणिक हैं। नियमसे उन्हींके साथ यह पुत्री विवाही जायगी।

मुनिराजके ऐसे पवित्र वचन सुन, एवं उन्हें भक्तिपूर्वक नमस्कार कर, राजा मृगांक अपने घर लौट आये और हे महाराज श्रेणिक! तबसे राजा मृगांकने आपको देनेके लिये ही उस पुत्रीका दृढ़ संकल्प कर लिया। अनेकबार मनाई करनेपर भी हंसद्वीपका स्वामी राजा रत्नचूल यद्यपि उस पुत्रीके साथ जबरन विवाह करना चाहता है।

राजा मृगांकसे जबरन विलासवतीको छीन लेनेके लिये रत्नचूलने अपनी सेनासे चौतर्फा नगरीको भी घेर लिया है तथापि राजा मृगांक उसे पुत्री देना नहीं चाहते। मैंने ये बातें प्रत्यक्ष देखी हैं। मैं यह सब समाचार आपको सुनाने आया हूँ। अधिक समय तक मैं यहां ठहर भी नहीं सकता। अब आप जो उचित समझें सो करें।

विद्याधर जम्बुकुमारके वचन सुनते ही महाराज चुपचाप न बैठ सके। उन्होंने केरला नगरीको जानेके लिये शीघ्र ही

तैयारी करदी एवं सेनापतिको बुला कर सेना तैयार करनेके लिए आज्ञा भी देदी।

जम्बुकुमारका उद्देश यह न था कि महाराज श्रेणिक केरला नामकी नगरी चलें और न वह महाराजको लिवानेके लिये राजगृह आया ही था किन्तु उसका उद्देश केवल महाराजकी विवाह स्वीकारताका था। जिस समय उसने महाराजको सर्वथा चलनेके लिये तैयार देखा तो वह इस रीतिसे विनयसे कहने लगा—हे महाराज! कहां तो आप और कहां केरला नगरी? आप भूमिगोचरी हैं। वहां आपका जाना कठिन है, आप यहीं रहें। मुझे जल्दी जानेकी आज्ञा दें तथा ऐसा कहकर वह शीघ्र ही आकाश मार्गसे चल दिया और बातकी बातमें केरला नगरीमें जा दाखिल हुवा।

इधर महाराज श्रेणिकने भी केरला नगरी जानेके लिये प्रस्थान कर दिया एवं ये तो कुछ दिन मंजल दरमंजल कर विंध्याचलकी अटवीमें पहुँच कुरलाचलके पास ठहर गये। उधर विद्याधर जम्बुकुमारने केरला नगरीमें पहुँचकर रत्नचूलकी सेना ज्योंकी त्यों नगरीको घेरे हुये देखा और किसी कार्यके बहानेसे रत्न-चूलके पास जा उसने यह प्रतिपादन किया—

हे राजन् रत्नचूल! यह विलासवती तो मगधेश्वर महाराज श्रेणिकको दी जा चुकी है। आप न्यायवान होकर क्यों राजा मृगांकसे विलासवतीके लिये जोरावरी कर रहे हैं? आप सरीखे नरेशोंका ऐसा वर्ताव शोभाजनक नहीं।

रत्नचूलका काल तो शिरपर मचरा रहा था। भला वह नीति एवं अनीतिपर विचार करने कब चला? उसने जम्बूकुमारके वचनोंपर रत्तीपर भी ध्यान नहीं दिया और उल्टा नाराज होकर जम्बूकुमारसे लड़नेके तैयार हो गया। जम्बूकुमार भी किसी कदर कम न था, वह भी शीघ्र युद्धार्थ तैयार हो गया

और कुछ समय पर्यंत युद्ध कर जम्बूकुमारने रत्नचूलको बांध लिया, उसकी आठ हजार सेनाको काट पीटकर नष्ट कर दिया एवं उसे राजा मृगांकके चरणोंमें डार जो कुछ वृत्तांत हुआ था सारा कह सुनाया तथा यह भी कहा कि महाराज श्रेणिक भी केरला नगरकी ओर आ रहे हैं।

जम्बूकुमारका यह असाधारण कृत्य देख राजा मृगांक अति प्रसन्न हुवे। उन्होंने जम्बूकुमारकी बारम्बार प्रशंसा की एवं जम्बूकुमारकी अनुमतिपूर्वक राजा रत्नचूल एवं पांचसौ बिमानोंके साथ कन्या विलासवतीको लेकर राजगृहकी ओर प्रस्थान कर दिया।

महाराज श्रेणिक तो कुरलाचलकी तलहटीमें ही ठहरे थे। जिस समय राजा मृगांकके विमान कुरलाचलकी तलहटीमें पहुँचे तो जम्बुकुमारकी दृष्टि राजा श्रेणिकपर पड़ गई। महाराजको देख राजा मृगांक सबके साथ शीघ्र ही वहां उतर पड़े। उन सबने भक्तिभावसे महाराज श्रेणिकको नमस्कार किया और परस्पर कुशल पूछने लगे तथा कुशल पूछनेके बाद शुभ मुहूर्तमें कन्या तिलकवतीका महाराज श्रेणिकके साथ बिवाह भी होगया।

बिवाहके बाद राजा मृगांकने केरला नगरीकी ओर लौटनेके लिये आज्ञा मांगी एवं चलनेके लिये तैयार भी हो गया। महाराज श्रेणिकने उन्हें जाते देख उनके साथ बहुत कुछ हित जनाया और उन्हें सन्मानपूर्वक विदा कर दिया, तथा स्वयं भी विद्याधर जम्बूकुमारके साथ राजगृह आगये। राजगृह आकर महाराज श्रेणिकने विद्याधर जम्बूकुमारका बड़ा भारी सन्मान किया और नवोढ़ा तिलकवतीके साथ अनेक भोग भोगते हुवे वे सुखपूर्वक रहने लगे।

किसी समय महाराज आनन्दमें बैठे हुवे थे कि अकस्मात् उन्हें नंदिग्रामके निवासी बिप्र नन्दिनाथका स्मरण आया। महाराज श्रेणिकका जो कुछ पराभव उसने किया था, वह सारा

पराभव उन्हें साक्षात्सरीखा दिखने लगा। वे मनमें ऐसा विचार करने लगे—

देखो, नंदिनाथकी दुष्टता नीचता एवं निर्दयता! राजगृहसे निकलते समय जब मैं नंदिग्राममें जा निकला था, उस समय विनयसे मांगने पर भी उसने मुझे भोजनका सामान नहीं दिया था। यदि मैं चाहता तो उससे जबरन खाने पीनेके लिये सामान ले सकता था, किन्तु मैंने अपनी शिष्टतासे वैसा नहीं किया था और दीन वचन ही बोलता रहा था।

मुझे जान पड़ता है कि जब उसने मेरे साथ ऐसा क्रूरताका वर्ताव किया है, तब वह दूसरोंकी आबरू उतारनेमें कब चूकता होगा? राज्यकी ओरसे जो उसे दानार्थ द्रव्य दिया जाता है निगमसे उसे वही गटक जाता है, किसीको पाईभर भी दान नहीं देता। अब राज्यकी ओरसे उसे सदावर्त देनेका अधिकार दे रक्खा है उसे छीन लेना चाहिये और नंदिग्रामके ब्राह्मणोंको जो नंदिग्राम दे रक्खा है उसे वापिस लेलेना चाहिये।

मैं अब अपना बदला बिना लिये नहीं मानूंगा। नंदिग्राममें एक भी ब्राह्मणको नहीं रहने दूंगा तथा क्षणएक ऐसा विचार कर शीघ्र ही महाराज श्रेणिकने एक राज्यसेवक बुलाया और उसे कह दिया, जाओ अभी तुम नंदिग्राम चले जाओ और वहांके ब्राह्मणोंसे कह दो कि शीघ्र ही नंदिग्राम खाली कर दें।

इधर महाराजने तो नंदिग्रामके विप्रोंको निकालनेके लिये आज्ञा दी, उधर मंत्रियोंके कानतक भी यह समाचार पहुंचा। वे दौड़ते दौड़ते तत्काल ही महाराजके पास आये और विनयसे कहने लगे—

राजन्! आप यह क्या अनुचित काम करना चाहते हैं! इससे बड़ी भारी हानि होगी, पीछे आपको पछताना पड़ेगा।

आप भले प्रकार सोच विचार कर काम करें। मंत्रियोंके ऐसे वचन सुन महाराजके नेत्र और भी लाल हो गये। मारे क्रोधके उनके नेत्रोंसे रक्तकी धारासी बहने लगी और गुस्सेमें भरकर वे कहने लगे—

हे राजमंत्रियो! सुनो, नंदिग्रामके विप्रोंने मेरा बड़ा पराभव किया है। जिससमय मैं राजगृहसे निकल गया था, उस समय मैं नंदिग्राममें जा पहुंचा था। नंदिग्राममें पहुंचते ही भूखने मुझे बुरी तरह सताया। मुझे और तो वहां भूखकी निवृत्तिका कोई उपाय नहीं सूझा, मैं सीधा नंदिनाथके पास गया और मैंने विनयसे भोजनके लिये उससे कुछ सामान मांगा, किन्तु दुष्ट नंदिनाथने मेरी एक भी प्रार्थना न सुनी और वह एकदम मुझपर नाराज हो गया। दो चार गालियां भी दे मारीं।

मुझे उस समय अधिक दुःख हुवा था इसलिये अब मैं उनसे विना बदला लिये न छोड़ूंगा। उन्हें नंदिग्रामसे निकाल-कर मानूंगा। इसप्रकार महाराजके वचन सुनकर और महाराजका क्रोध अनिवार्य है यह भी समझकर मंत्रियोंने विनयसे कहा—

राजन्! आप इस समय भाग्यके उदयसे उत्तम पदमें विराजमान हैं। आप सबोंके स्वामी कहे जाते हैं, आपको कदापि अन्याय मार्गमें प्रवृत्त नहीं होना चाहिये। संसारमें जो राजा न्यायपूर्वक राज्यका पालन करते हैं उन्हें कीर्ति, धन आदिकी प्राप्ति होती है। उनके देश एवं नगर भी दिनोंदिन उन्नत होते चले जा रहे हैं।

हे प्रजापालक! अन्यायसे राज्यमें पापियोंकी संख्या अधिक बढ़ जाती है, देशका नाश हो जाता है, समस्त लोकमें प्रलय होना शुरू हो जाता है।

हे महाराज! जिस प्रकार किसान लोग खेतमें स्थित धान्यकी

बाढ़ आदि प्रयत्नोंसे रक्षा करते हैं, उसी प्रकार राजाको भी चाहिये कि वह न्यायपूर्वक बड़े प्रयत्नसे राज्यकी रक्षा करें।

हे दीनबन्धो! संसारमें राजाके न्यायवान होनेसे समस्त लोक न्यायवाला होता है।

यदि राजा ही अन्यायी होवे तो कभी भी उसके अनुयायी लोग न्यायवान नहीं हो सकते, वे अवश्य अन्याय-मार्गमें प्रवृत्त हो जाते हैं।

कृपानाथ! यदि आप नंदिग्रामके ब्राह्मणोंको नंदिग्रामसे निकालना ही चाहते हैं तो उन्हें न्यायमार्गसे ही निकालें। न्यायमार्गके बिना आश्रय किये आपको ब्राह्मणोंका निकालना उचित नहीं।

मंत्रियोंके ऐसे नीतियुक्त वचन सुन महाराज श्रेणिकका क्रोध शांत हो गया। कुछ समय पहिले जो महाराज ब्राह्मणोंको बिना विचारे ही निकालना चाहते थे वह विचार उनके मस्तकसे हट गया। अब उनके चित्तमें ये संकल्प विकल्प उठने लगे, यदि मैं उन ब्राह्मणोंको निकाल दूँगा तो लोग मेरी निंदा करेंगे। मेरा राज्य भी अनीति राज्य समझा जायगा इसलिये प्रथम ब्राह्मणोंको दोषी सिद्ध कर देना चाहिये पश्चात् उन्हें निकालनेमें कोई दोष नहीं तथा तदनुसार महाराजने ब्राह्मणोंको दोषी बनानेके अनेक उपाय सोचे।

उन सबमें प्रथम उपाय यह किया कि एक बकरा मंगवाया और कईएक चतुर सेवकोंको बुलाकर, एवं उन्हें बकरा सौंपकर यह आज्ञा दी कि जाओ इस बकरेको शीघ्र ही नंदिग्रामके ब्राह्मणोंको दे आओ। उनसे यह कहना कि यह बकरा महाराज श्रेणिकने भेजा है। इसे खूब खिलाया पिलाया जाय किन्तु इस बात पर ध्यान रखें-न तो यह लटने पावे और न आबाद ही होवे। यदि यह लट गया या आबाद हो गया तो तुमसे

नंदिग्राम छीन लिया जायगा और तुम्हें उससे जुदा कर दिया जायगा।

महाराजके ऐसे आश्चर्यकारी वचन सुन सेवकोंने कुछ भी तीन पांच न की। वे बकरेको लेकर शीघ्र ही नंदिग्रामकी ओर चल दिये तथा नंदिग्राममें पहुंचकर बकरा ब्राह्मणोंको सुपुर्द कर दिया और जो कुछ महाराजका सन्देश था वह भी साफ साफ कह सुनाया।

महाराजका यह विचित्र संदेशा सुन नंदिग्रामके ब्राह्मणोंके होश उड़ गये। वे अपने मनमें विचार करने लगे कि यह बलाय कहांसे आ पड़ी। महाराजका तो हमसे कोई अपराध हुवा नहीं है, उन्होंने हमारे लिये ऐसा संदेशा क्यों कर भेज दिया! हे ईश्वर! यह बात बड़ी कठिन आ अटकी। कमती बढ़ती खवानेसे या तो बकरा लट जायगा या मोटा हो जायगा। इसका एकसा रहना असंभव है। मालूम होता है अब हमारा अंत आगया है।

इधर ब्राह्मण तो ऐसा विचार करने लगे, उधर वेणुनटमें सेठ इन्द्रदत्तको यह पता लगा कि कुमार श्रेणिक अब मगध-देशके महाराज बन गये हैं, शीघ्र ही वे नदश्री और कुमार अभयको लेकर राजगृहकी ओर चल दिये और नंदिग्रामके पास आकर ठहर गये। सेठ इन्द्रदत्त आदि तो भोजनादि कार्यमें प्रवृत्त हो गये और नवीन पदार्थोंके देखनेके अति प्रेमी कुमार अभय, नंदिग्राम देखनेके लिये चल दिये।

उन्हें जाते देख परिवारके मनुष्योंने बहुत कुछ मनाई की किन्तु कुमारके ध्यानमें एक न आई। वे शीघ्र ही नंदिग्राममें दाखिल होगये। मध्य नगरमें पहुंचते ही देवसे उनकी मुलाकात नंदिनाथसे हो गई। उसे चितासे व्याकुल एवं म्लान देख कुमारने चट-चट पूछा।

हे विप्रोंके सरदार! आपका मुख क्यों फीका हो रहा है? आप किस उधेड़बुनमें लगे हुवे हैं? इस नगरमें सर्व मनुष्य चिंताग्रस्त ही प्रतीत होते हैं यह क्या बात है? कुमारके ऐसे उत्तम वचन सुन, और बचनोंसे उसे बुद्धिमान भी जान, नंदिनाथने विनम्र बचनोंमें उत्तर दिया—

महानुभाव! राजगृहके स्वामी महाराज श्रेणिकने एक बकरा हमारे पास भेजा है। उन्होंने यह कड़ी आज्ञा भी दी है कि— नंदिग्रामके निवासी विप्र इस बकरेको खूब खिलावें पिलावें किंतु यह बकरा एकसा ही रहे। न तो मोटा होने पावे और न लटने पावे। यदि यह बकरा लटगया अथवा पुष्ट होगया तो नंदिग्राम छीन लिया जायगा। हे कुमार! महाराजकी इस आज्ञाका पालन हमसे होना कठिन जान पड़ता है इसलिये इस गांवके निवासी हम सब ब्राह्मण चिंतासे व्यग्र हो रहे हैं।

नंदिनाथके ऐसे विनययुक्त वचन सुननेसे कुमार अभयका हृदय करुणासे गद्गद् होगया। उन्होंने इस कामको कुछ काम न समझ ब्राह्मणोंको इसप्रकार समझा दिया कि—हे विप्रो! आप इस कार्यके लिये किसी बातकी चिन्ता न करें। आप धैर्य रक्खे, आपके इस विघ्नके दूर करनेके लिये मैं भी उपाय सोचता हूं तथा ऐसा विश्वास देकर वे भी उस चिन्ताके दूर करनेका स्वयं उपाय सोचने लगे। कुमारकी बुद्धि तो अगम्य थी।

उक्त विघ्नके दूर करनेके लिये उन्हे शीघ्र ही उपाय सूझ गया। उन्होने शीघ्र ही ब्राह्मणोंको बुलाया और उनसे इसप्रकार कहा—हे विप्रो! तुम एक काम करो, बीच गांवमें एक खंभा गढ़वाओ और उससे कहींसे लाकर एक बाघ बांध दो। जिस-समय चरानेसे बकरा मोटा मालूम होता पड़े धीरेसे उसे बाघके सामने लाकर खड़ा करदो। विश्वास रक्खो इस रीतिसे

वह बकरा न बढ़ेगा और न घटेगा। कुमारकी युक्ति ब्राह्मणोंके हृदयमें जम गई।

उन्होने शीघ्र ही कुमारकी आज्ञानुसार यह काम करना प्रारम्भ कर दिया। प्रथम तो वे दिनभर खूब बकरेको चरावें और पश्चात् शामको उसे बाघके सामने ले जाकर खड़ा करदें। इस रीतिसे उन्होंने कई दिन तक किया तो बकरा वैसा ही बना रहा तथा जैसा राजगृह नगरसे आया था वैसा ही ब्राह्मणोंने जाकर उसे महाराजकी सेवामे हाजिर कर दिया।

विघ्नके टल जानेपर इधर ब्राह्मणोंने तो यह समझा कि कुमारकी कृपासे हमारा विघ्न टल गया, हम बच गये। वे वारम्वार कुमारकी प्रशंसा करने लगे तथा कुमार अभयके पास जाकर वे उनकी इस प्रकार स्तुति करने लगे—

हे दिव्य पुरुष! हे पुण्यात्मन्! हे समस्त जीवोंपर दया करनेवाले कुमार! यह हमारा भयङ्कर विघ्न आपकी कृपासे ही शांत हुवा है, आपके सर्वोत्तम बुद्धिबलसे ही इस समय हमारी रक्षा हुई है, आपके प्रसादसे ही इस समय आनन्दका अनुभव कर रहे है। आपने हमें अपना समझकर जीवनदान दिया है। यदि महाराजकी आज्ञाका पालन न होता तो न मालूम महाराज हमारी क्या दुर्दशा करते, हमें क्या दण्ड देते? हे कृपानाथ कुमार! हम आपके इस उपकारके बदलेमें क्या करें? हम तो सर्वथा असमर्थ हैं और आप समस्त लोकके विनाकारण बंधु हैं।

हे कुमार! जैसी आपके चित्तमें दया है, संसारमें वैसी दया कहीं नहीं जान पड़ती। हे महोदय! आप संसारमें अलौकिक सज्जन हैं, आप मेघके समान हैं क्योंकि जिस प्रकार मेघ परोपकारी, स्नेह (जल) युक्त, आर्द्र, एवं उन्नत होते हैं उसी प्रकार आप भी परोपकारी हैं। समस्त जनोंपर प्रीतिके करनेवाले

हैं। आपका भी चित्त दयासे भींगा हुआ है और आप जगमें पवित्र हैं।

हे हमारे प्राणदाता कुमार! आपकी सेवामें हमारी यह सविनय निवेदन है कि जबतक राजाका कोप शांत न हो, महाराज हमारे ऊपर सन्तुष्ट नहीं हों, आप इस नगरको ही सुशोभित करें। आप तबतक इस नगरसे कदापि न जांय। यदि आप यहांसे चले जायेंगे तो महाराज हमें कदापि यहां नहीं रहने देंगे।

इधर तो नंदिनाथ एवं अन्य विप्रोंकी इस प्रार्थनाने कुमार अभयके चित्तपर प्रभाव जमा दिया, उन्हें जबरन प्रार्थना स्वीकार करनी पड़ी। और ब्राह्मणोंपर दयाकर नंदिग्राममें कुछ दिन ठहरना भी निश्चित कर लिया। उधर जिस समय महाराजने बकरेको ज्योंका त्यों देखा तो वे गहरी चिंतामें पड़ गये। अपने प्रयत्नकी सफलता न देख उन्हें अति क्रोध आ गया।

वे सोचने लगे कि जब नंदिग्रामके ब्राह्मण इतने बुद्धिमान है तब उनको कैसे नंदिग्रामसे निकाला जाय? तथा क्षणएक ऐसा सोचकर शीघ्र ही उन्होंने फिर एक दूत बुलाया और उससे यह कहा—तुम अभी नंदिग्राम जाओ और वहांके निवासी ब्राह्मणोंसे कहो कि महाराजने यह आज्ञा दी है कि नंदिग्राम निवासी ब्राह्मण शीघ्र एक बावड़ी राजगृह नगर पहुंचा दें नहीं तो उनको कष्टका सामना करना पडेगा।

महाराजकी आज्ञा पाते ही दूत चला और नंदिग्राममें पहुँचकर शीघ्र ही उसने ब्राह्मणोंसे कहा कि हे विप्रो! महाराजने नन्दिग्रामसे एक बावड़ी राजगृह नगर मंगाई है। आप लोगोंको यह कड़ी आज्ञा दी है कि आप उसे शीघ्र पहुँचादें नहीं तो तुम्हें नगरसे जाना पड़ेगा।

दूतके मुखसे महाराजकी ऐसी कठिन आज्ञा सुन, नन्दिग्राम

निवासी विप्र दांतोंमें उंगली दबाने लगे। विचारने लगे कि अबके तो महाराजने कठिन समस्या उपस्थित की। बावडीका जाना तो सर्वथा असंभव है। मालूम होता है महाराजका कोप अनिवार्य है। अबके हमें नंदिग्राममें रहना कठिन जान पडता है तथा क्षण एक ऐसा विचार कर वे सब मिलकर कुमार अभयके पास गये और सारा समाचार उन्हें जाकर कह सुनाया।

ब्राह्मणोंके मुखसे बावड़ीका भेजना सुनकर, और नंदिग्राम-निवासी ब्राह्मणोंको चित्तसे प्रसन्न देखकर, कुमार अभयने उत्तर दिया कि हे विप्रो! यह कौन बड़ी बात है? आप क्यों इस छोटीसी बातके लिये चिंता करते हैं? आप किसी बातसे जरा भी न घबरावें। यह विघ्न शीघ्र दूर हुआ जाता है। आप एक काम करें।

आपके गांवमें जितने भर बैल एवं भैंसे हों उन सबको इकट्ठा करो। सबके कंधोंपर जूवा रखवा दो और नंदिग्रामसे राजगृह तक उनकी कतार लगादो। जिस समय महाराज अपने राजमंदिरमें गाढ़ निद्रामें सोते हों, बेधड़क हल्ला करते हुवे राजमंदिरमें घुस जाओ। और खूब जोरसे पुकार कर कहो नंदिग्रामके ब्राह्मण बावड़ी लाये हैं। जो उन्हें आज्ञा होय सो किया जाय। बस महाराजके उत्तरसे ही आपका यह विघ्न हट जायगा।

कुमारकी यह युक्ति सुन ब्राह्मणोंने गांवके समस्त बैल एवं भैंस एकत्रित किये। उनके कन्धोंपर जूवा रख दिया और उन्हें नंदिग्रामसे राजमंदिर तक जोत दिया। जिस समय महाराज गाढ़ निन्द्रामें बेसुध सो रहे थे तब राजमंदिरमें बड़े जोरोंसे हल्ला करना प्रारंभ कर दिया और महाराजके पास जाकर कहा कि महाराजाधिराज! नंदिग्रामके ब्राह्मण बावड़ी लाये है उन्हें जो आज्ञा हो सो करें।

उस समय महाराजके ऊपर निद्रादेवीका पूरा पूरा प्रभाव पड़ा हुआ था। निन्द्राके नशेमें उन्हें अपने तन बदनका भी होश हवाम नहीं था इसलिये जिस समय उन्होंने ब्राह्मणोंके वचन सुने, तो बेसुधमें उनके मुखसे धीरेसे येही शब्द निकल गये कि-जहांसे बावड़ी लाये हो वहींपर बावड़ी लेजाके रख दो। और राजमंदिरसे शीघ्र ही चले जाओ।

बस फिर क्या था, ब्राह्मण यह चाहते ही थे कि किसी रीतिसे महाराजके मुखसे हमारे अनुकूल वचन निकले। जिस समय महाराजसे उन्हें अनुकूल जवाब मिला तो मारे हर्षके उनका शरीर रोमांचित होगया। वे उछलते कूदते तत्काल ही नंदिग्रामको लौट गये और वहांपर पहुंचकर, विघ्नकी शांतिसे अपना पुनर्जीवन समझ, वे सुखसागरमें गोता मारने लगे तथा अभयकुमारके चातुर्य पर मुग्ध होकर उनके मुखसे खुले मैदान ये ही शब्द निकलने लगे कि कुमार अभयकी बुद्धि अत्युत्तम और आश्चर्य करनेवाली है। इनका हरएक विषयमें पांडित्य सबसे बढ़ चढ़ा है। सौजन्य आदि गुण भी इनके लोकोत्तर हैं इत्यादि।

इधर अपने भयंकर विघ्नकी शांति होजानेसे विप्र तो नंदिग्राममें सुखानुभव करने लगे, उधर राजगृह नगरमें महाराज श्रेणिककी निद्राकी समाप्ति होगई। उठते ही उनके मुहसे यही प्रश्न निकला कि-नंदिग्रामके ब्राह्मण जो बावड़ी लाये थे वह बावड़ी कहां है? शीघ्र ही मेरे सामने लाओ।

महाराजके वचन सुनते ही पहरेदारने जवाब दिया— महाराजाधिराज! नंदिग्रामके ब्राह्मण रातको बावड़ी उठाकर लाये थे। जिस समय उन्होंने आपसे यह निवेदन किया था कि बावड़ी कहाँ रख दी जाय? उस समय आपने यही जवाब दिया था कि "जहांसे लाये हो वहीं ले जाकर रख दो और

शीघ्र राज मंदिरसे चले जाओ" इसलिये हे कृपानाथ ! वे बावड़ीको पीछे ही लौटा ले गये।

पहरेदारके ये वचन सुन मारे क्रोधके महाराज श्रेणिकका शरीर भभकने लगा। वे बारबार अपने मनमें ऐसा विचार करने लगे—संसारमें जैसी भयंकर चेष्टा निद्राकी है वैसी भयंकर चेष्टा किसीकी नहीं। यदि जीवोंके सुखपर पानी फेरनेवाली है तो यह पिशाचिनी निद्रा ही है।

परमर्षियोने जो यह कहा है कि जो मनुष्य हितके आकांक्षी हैं, अपनी आत्माका हित चाहते है उन्हें चाहिये कि वे इस निद्राको अवश्य जीतें सो बहुत ही उत्तम कहा है क्योंकि जिस समय यह पिशाचिनी निद्रा जीवोंके अन्तरंगमे प्रविष्ट हो जाती है उस समय बेचारे प्राणी इसके वश हो अनेक शुभ अशुभ कर्म संचय कर डालते हैं और अशुभ कर्मोंकी कृपासे उन्हें नरकादि घोर दुःखोंका सामना करना पड़ता है।

वास्तवमें यह निद्रा क्षुधाके समान है, क्योंकि जिस प्रकार क्षुधाका जीतना कठिन है उसी प्रकार इस निद्राका जीतना भी अति कठिन है। क्षुधासे पीड़ित मनुष्यको जिस प्रकार यह विचार नहीं रहता कि कौन कर्म अच्छा है व कौन बुरा है ? संसारमे कौन वस्तु मुझे ग्रहण करनेयोग्य है व कौन त्यागनेयोग्य है ? उसी प्रकार निद्रापीड़ित मनुष्यको भी अच्छे बुरे एवं हेय उपादेयका विचार नहीं रहता एवं जैसा क्षुधापीड़ित मनुष्य पाप पुण्यकी कुछ भी परवाह नहीं करता, वैसे ही निद्रा पीड़ित मनुष्यको भी पाप पुण्यकी कुछ भी परवाह नहीं रहती। यह निद्रा एक प्रकारका भयंकर मरण है क्योंकि मरते समय कफके रुक जानेपर जैसा कण्ठमें घड़ घड़ शब्द होने लग जाता है, निद्राके समय भी उसी प्रकार घड़ घड़ शब्द होता है।

मरणकालमें संसारी जीव जैसी खाट आदिपर सोता है

उसी प्रकार निद्राकालमें भी बेहोशीसे खाट आदिपर सोता है। मरणकालमें भी जैसा मनुष्यके अंगपर पसीना झलक आता है वैसा निद्राके समय भी अंगपर पसीना आ जाता है। एवं मरण समयमें जिस प्रकार जीव जरा भी नहीं चलता किन्तु काष्ठकी पुतलीके समान बेहोश पड़ा रहता है।

इसलिये यह निद्रा अति खराब है। तथा क्षणएक ऐसा विचार कर देदीप्यमान शरीरसे शोभित, महाराज श्रेणिकने फिरसे सेवकोंको बुलाया और उनसे कहा कि जाओ और शीघ्र ही नंदिग्रामके ब्राह्मणोंसे कहो—महाराजने यह आज्ञा दी है कि नंदिग्रामके विप्र एक हाथीका वजन कर शीघ्र ही मेरे पास भेज दे।

महाराजकी आज्ञा पाते ही सेवक चला और नंदिग्राममें जाकर उसने ब्राह्मणोंसे, जो कुछ महाराजकी आज्ञा थी सब कह सुनाई। तथा यह भी कह सुनाया कि महाराजकी इस आज्ञाका पालन जल्दी हो नहीं तो आपको जबरन नंदिग्राम खाली करना पड़ेगा।

सेवकके मुखसे महाराजकी आज्ञा सुनते ही नंदिग्राम निवासी विप्रोंके मुख फीके पड़ गये। मारे भयके उनका गात्र कपने लग गया। वे अपने मनमें सोचने लगे कि बावड़ीका विघ्न टल जानेसे हमने तो यह सोचा था कि हमारे दुःखोंकी शांति होगई अब यह बलाय फिर कहांसे आ टूटी? तथा कुछ देर ऐसा विचार वे बुद्धिशाली कुमार अभयके पास गये और उनसे इस रीतिसे विनयपूर्वक कहा—

माननीय कुमार! अबके महाराजने बड़ी कठिन अटकाई है। अबके उन्होंने हाथीका वजन मांगा है। भला हाथीका वजन कैसे किस रीतिसे होसकता है? मालूम होता है महराज अब हमें छोड़ेंगे नहीं।

ब्राह्मणोंके ऐसे दीनतापूर्वक वचन सुन कुमारने उत्तर दिया कि–आप इस जरासी बातके लिये क्यों इतने घबड़ाते हैं। मैं अभी इसका प्रतीकार करता हूं तथा ब्राह्मणोंको इसप्रकार आश्वासन दे वे शीघ्र ही किसी तालाबके किनारे गये। तालाबके पास आकर उन्होंने एक नौका मंगाई और ब्राह्मणों द्वारा एक हाथी मंगाकर उस नावमें हाथी खड़ा कर दिया। हाथीके वजनसे जितना नावका हिस्सा डूब गया उस हिस्सेपर कुमारने एक लकीर खींच दी एवं हाथीको नावसे बाहिर कर उसमें उतने ही पत्थर भरवा दिये। जिस समय पत्थर और हाथीका वजन बराबर हो गया तो कुमारने उन पत्थरोंको भी नावसे निकलवा लिया तथा उन पत्थरोंकी बराबर दूसरे बड़े२ पत्थर कर महाराज श्रेणिककी सेवामें भिजवा दिये और नंदिग्रामके ब्राह्मणोंकी ओरसे यह निवेदन कर दिया कि—कृपानाथ! आपने जो हाथीका वजन मागा था सो यह लीजिये।

जिस समय महाराज श्रेणिकने हाथीके वजनके पत्थर देखे तो उनको बड़ा आश्चर्य हुवा। वे अपने मनमें विचारने लगे कि नंदिग्रामके ब्राह्मण अधिक बुद्धिमान हैं। उनका चातुर्य एवं पांडित्य ऊंचे दर्जेपर चढ़ा हुवा है। ये किसी रीतिसे जीते नहीं जा सकते तथा क्षणएक अपने मनमें ऐसा भलेप्रकार विचार कर महाराजने फिर सेवकोंको बुलाया और एक हाथ प्रमाणकी एक निखोल खैरकी लकड़ी उन्हें दे यह कहा—जाओ, इस लकड़ीको नंदिग्रामके ब्राह्मणोंको दे आओ। उनसे कहना कि महाराजने यह लकड़ी भेजी है। कौनसा तो इसका नीचा भाग है और कौनसा इसका ऊपरका भाग है? यह परीक्षाकर शीघ्र ही महाराजके पास भेज दो नहीं तो तुम्हें नंदिग्रामसे निकाल दिया जायगा।

महाराजकी आज्ञा पाते ही दूत राजगृह नगरसे चला और

नन्दिग्रामके ब्राह्मणोंको लकड़ी देकर उसने कहा—राजगृहके स्वामी महाराज श्रेणिकने यह लकड़ी भेजी है। इसका कौनसा तो अगला भाग है और कौनसा पिछला भाग है? शीघ्र ही परीक्षा कर भेज दो। यदि नहीं बता सको तो नन्दिग्राम छोड़कर चले जाओ।

दूतके मुखसे जब महाराजका यह सन्देशा सुननेमें आया तो नन्दिग्रामके ब्राह्मणोंके मस्तक घूमने लगे। वे सोचने लगे यह बलाय तो सबसे कठिन आकर टूटी। इस लकड़ीमें यह बताना बुद्धिके बाह्य है कि कौनसा भाग इसका पिछला है और कौनसा अगला है! इसका उत्तर जाना महाराजके पास कठिन है। अब हम किसी कदर नन्दिग्राममें नहीं रह सकते, तथा क्षणएक ऐसे संकल्प विकल्प कर अति व्याकुल हो वे कुमारके पास गये। महाराजका सारा सदेशा कुमारको कह सुनाया और वह खैरकी लकड़ी भी उनके सामने रख दी।

ब्राह्मणोंको म्लानचित्त देख और उस खैरकी लकड़ीको निहार कुमारने उत्तर दिया—आप महाराजकी इस आज्ञासे जरा न डरें। मैं अभी इसका प्रतीकार करता हू तथा सब ब्राह्मणोंको इस प्रकार दिलासा देकर कुमार किसी तालाबके किनारे गये। तालाबमें कुमारने लकड़ी डाल दी। जिस समय वह लकड़ी अपने मूल भागको आगे कर बहने लगी शीघ्र ही उन्होंने उसका पीछे आगेका भाग समझ लिया एवं भलेप्रकार परीक्षा कर किसी ब्राह्मणके हाथ उसे महाराज श्रेणिककी सेवामें भेज दिया। लकड़ीको ले ब्राह्मण राजगृह नगर गया और कुमारकी आज्ञानुसार उसने लकड़ीका नीचा ऊंचा भाग महाराजकी सेवामें विनयपूर्वक आ बताया।

जिससमय महाराजने लकड़ीको देखा तो मारे क्रोधसे उनका तन बदन जल गया। वे सोचने लगे-मैं ब्राह्मणों पर

दोष आरोपण करने लिये कठिनसे कठिन उपाय कर चुका। अभीतक ब्राह्मण किसी प्रकार दोषी सिद्ध नहीं हुवे हैं। नंदिग्रामके ब्राह्मण बड़े चालाक मालूम पड़ते हैं।

अब इनको दोषी बनानेके लिये कोई दूसरा उपाय सोचना चाहिये तथा क्षण एक ऐसा विचार कर उन्होंने फिर किसी सेवकको बुलाया और उसके हाथमें कुछ तिल देकर यह आज्ञा दो कि अभी तुम नंदिग्राम जाओ और वहांके ब्राह्मणोंको तिल देकर यह बात कहो कि महाराजने ये तिल भेजे हैं, जितने ये तिल हैं इनकी बराबर शीघ्र ही तेल राजगृह पहुंचा दो, नहीं तो तुम्हारे हकमें अच्छा न होगा।

महाराजकी आज्ञानुसार दूत नंदिग्रामकी ओर चल दिया और तिल ब्राह्मणोंको दे दिये तथा यह भी कह दिया कि जितने ये तिल हैं महाराजने उतना ही तेल मंगाया है। तेल शीघ्र भेजो नहीं तो नंदिग्राम छोड़ना पड़ेगा।

दूतके मुखसे ऐसे वचन सुन ब्राह्मण बड़े घबड़ाये। वे सीधे कुमार अभयके पास गये और विनयपूर्वक यह कहा—महोदय कुमार! महाराजने ये थोड़ेसे तिल भेजे हैं और इनकी बराबर ही तेल मांगा है। क्या करें? यह बात अति कठिन है। तिलोंके बराबर तेल कैसे भेजा जा सकता है? मालूम होता है अब महाराज छोड़ेंगे नहीं।

ब्राह्मणोंको इस प्रकार हताश देख कुमारने फिर उन्हें समझा दिया तथा एक दर्पण मंगाया और उस दर्पणपर तिलोंको पूरकर ब्राह्मणोंको आज्ञा दी कि जाओ इनका तेल निकलवा लाओ। जिस समय कुमारकी आज्ञानुसार ब्राह्मण तेल पेर कर ले आये तो उस तेलको कुमारने तिलोंकी बराबर ही दर्पणपर पूर दिया और महाराज श्रेणिककी सेवामें किसी मनुष्य द्वारा भिजवा दिया।

तिलोंके बराबर तेल देख महाराज चकित रह गये। फिर उनके हृदय-समुद्रमें विचार तरंगे उछलने लगीं। वे बारम्बार नंदिग्रामके ब्राह्मणोंके बुद्धिबलकी प्रशंसा करने लगे। अब महाराजको क्रोधके साथ साथ नंदिग्रामके ब्राह्मणोंकी बुद्ध परीक्षाका कौतुहलसा होगया। उन्होंने फिर किसी सेवकको बुलाया और उसे आज्ञा दी कि तुम अभी नंदिग्राम जाओ और ब्राह्मणोंसे कहो कि महाराजने भोजनके योग्य दूध मंगाया है। उनसे यह कह देना कि वह दूध गाय, भैंस आदि चौपायोंका न हो। और न किसी दुपायोंका हो तथा नारियल आदि पदार्थोंका भी न हो किन्तु इनसे अतिरिक्त हो, मिष्ट हो, उत्तम हो, और बहुतसा हो।

महाराजकी आज्ञानुसार दूत फिर नंदिग्रामको गया। महाराजने जैसा दूध लानेके लिये आज्ञा दी थी वही आज्ञा उसने नंदिग्रामके विप्रोंके सामने जाकर कह सुनाई और यह भी सुना दिया कि महाराजका क्रोध तुम्हारे ऊपर बढ़ता ही चला जाता है। महाराज आप लोगोंपर बहुत नाराज हैं। दूध शीघ्र भेजो नहीं तो तुम्हें नंदिग्राममें नहीं रहने देंगे।

दूतके मुखसे यह सन्देशा सुन ब्राह्मणोके मस्तक चक्कर खाने लगे। वे विचारने लगे कि दूध तो गाय, भैंस, बकरी आदिका ही होता है। इसके अतिरिक्त किसीका दूध आजतक हमने सुना ही नहीं है। महाराजने जो किसी अन्य ही चीजका दूध मंगाया है सो उन्हें क्या सूझी है? क्या वे अब हमारा सर्वथा नाश ही करना चाहते हैं? तथा क्षणएक ऐसा विचार कर वे अति व्याकुल हो दौड़ते२ कुमार अभयके पास गये और महाराजका सब सन्देशा कुमारके सामने कह सुनाया तथा कुमारसे यह भी निवेदन किया—हे महानुभाव कुमार! अबके महाराजकी आज्ञा बड़ी कठिन है। क्योंकि हो सकता है दूध तो गाय, भैंस, बकरी आदिका ही हो सकता है। इनसे अति-

रिक्तका दूध हो ही नहीं सकता। यदि हो भी तो वह दूध नहीं कहा जा सकता। महाराजने अब यह दूध नहीं मांगा है; हम लोगोंके प्राण मांगे हैं।

ब्राह्मणोंके वचन सुन कुमारने उत्तर दिया-आप क्यों घबड़ाते है? गाय, भैंस, बकरी आदिसे अतिरिक्तका भी दूध होता है। मैं अभी उसे महाराजाकी सेवामें भिजवाता हूँ। आप जरा धैर्य रक्खें। तथा ऐसा कहकर कुमारने शीघ्र ही कच्चे धान्योंकी बालें मगवाईं और उनसे गौके समान ही उत्तम दूध निकलवाकर कई घड़े भरकर तैयार कराये। एवं वे घड़े महाराज श्रेणिककी सेवामे राजगृह नगर भेज दिये।

दूधके भरे हुवे घड़ाओंको देख महाराज आश्चर्य-समुद्रमे गोता लगाने लगे। नंदिग्रामके विप्रोंके बुद्धिबलकी ओर ध्यान दे उन्हें दांतों तले ऊंगली दबानी पड़ी। वे बारबार यह कहने लगे कि नंदीग्रामके ब्राह्मणोंका बुद्धिबल है कि कोई बलाय है? मैं जिस चीजको परीक्षार्थ उनके पास भेजता हूं, फौरन वे उसका जवाब मेरे पास भेज देते हैं। मालूम होता है उनका बुद्धिबल इतना बढ़ा चढ़ा है कि उन्हें सोचने तककी भी जरूरत नहीं पड़ती।

अस्तु, अब मै उन्हें अपने सामने बुलाकर उनकी परीक्षा करता हू। देखें वे कैसे बुद्धिमान हैं? तथा क्षण एक ऐसा अपने मनमें दृढ़ निश्चय कर महाराजने शीघ्र ही एक सेवकको बुलाया और उससे यह कहा-तुम अभी नंदिग्राम जाओ और वहांके विप्रोंसे कहो-महाराजने यह आज्ञा दी है कि नंदिग्रामके ब्राह्मण एक ही मुर्गेको मेरे सामने आकर लड़ावें। यदि वे ऐसा न करें तो नंदिग्राम खाली कर चले जांय।

महाराजकी आज्ञा पाते ही दूत फिर चल दिया और नंदि-ग्राममें पहुंच उसने ब्राह्मणोंसे आकर यह कहा कि-आपलोगोंके

लिये महाराजने यह आज्ञा की है कि नंदिग्रामके ब्राह्मण राजगृह आवें और हमारे सामने एक ही मुर्गेको लड़ावें। यदि यह बात उनको नामंजूर हो तो, वे शीघ्र ही नंदिग्रामको खाली कर चले जांय।

दूतके वचन सुन ब्राह्मण फिर घबड़ाकर कुमार अभयके पास गये और महाराजका सारा संदेश उनके सामने निवेदन कर दिया। तथा यह भी कहा—महनीय कुमार! अबके महाराजने हमें अपने सामने बुलाया है। अबके हमारे ऊपर अति भयंकर विघ्न मालूम पड़ता है।

ब्राह्मणोंके ऐसे वचन सुन कुमारने उत्तर दिया—आप खुशीसे राजगृह नगर जांय। आप किसी बातसे घबड़ायें नहीं, वहां जाकर एक काम करें। मुर्गेको अपने सामने खड़ाकर एक दर्पण उसके सामने रखदें। जिस समय वह मुर्गा दर्पणमें अपनी तस्वीर देखेगा अपना वैरी दूसरा मुर्गा समझ वह फौरन लड़ने लग जायगा और आपका काम सिद्ध हो जायगा।

कुमारके मुखसे यह युक्ति सुनकर मारे हर्षके ब्राह्मणोंका शरीर रोमांचित हो गया। एक मुर्गा लेकर वे शीघ्र ही राजगृह नगरकी ओर चल दिये। राजमन्दिरमें पहुँचकर उन्होंने भक्ति-पूर्वक महाराजको नमस्कार किया तथा उनके सामने उन्होंने मुर्गा छोड़ दिया और उसके आगे एक दर्पण रख दिया। जिस समय असली मुर्गेने दर्पणमें अपनी तस्वीर देखी तो उसने उसे अपना वैरी असली मुर्गा समझा और वह चोंच मारकर उसके साथ अति आतुर हो युद्ध करने लग गया।

अकेले ही मुर्गेको युद्ध करते हुवे देख महाराज चकित रह गये। उन्होंने शीघ्र ही मुर्गेकी लड़ाई समाप्त करादी तथा ब्राह्मणोंको जानेके लिये आज्ञा देदी। जिस समय ब्राह्मण चले गये तब महाराजके मनमें फिर सोच उठा। वे विचारने लगे—

ब्राह्मण बड़े बुद्धिमान हैं। उनको अब किस रीतिसे दोषी बनाया जाय? कुछ समझमें नहीं आता तथा क्षण एक ऐसा विचार कर उन्होंने फिर किसी सेवकको बुलाया और उससे कहा कि शीघ्र नंदिग्राम जाओ और वहांके ब्राह्मणोंसे कहो—महाराजने एक बालूकी रस्सी मगाई है। शीघ्र तैयार कर भेजो, नहीं तो अच्छा न होगा।

महाराजकी आज्ञा पाते ही दूत नंदिग्रामकी ओर चल दिया तथा नंदिग्राममें पहुँचकर उसने ब्राह्मणोंके सामने महाराज श्रेणिकका सारा संदेशा कह सुनाया।

दूत द्वारा महाराजकी यह आज्ञा सुन ब्राह्मणोंके तो बिलकुल छक्के छूट गये। भागते-भागते कुमार अभयके पास पहुंचे तथा कुमार अभयके सामने सारा सन्देशा निवेदन कर उन्होंने कहा—पूज्य कुमार! अबके महाराजने यह क्या आज्ञा दी है? इसका हमें अर्थ ही नहीं मालूम हुआ। हमने तो आजतक न बालूकी रस्सी सुनी और न देखी।

ब्राह्मणों द्वारा महाराजकी आज्ञा सुन कुमारने उत्तर दिया—आप किसी बातसे न घबड़ाय। इसका उपाय यही है कि आप लोग अभी राजगृह नगर जांय। और महाराजके सामने यह निवेदन करें—

श्री राजाधिराज! आपके भण्डारमें कोई दूसरी बालूकी रस्सी हो तो कृपाकर हमें देवें जिससे हम वैसी ही रस्सी आपकी सेवामें लाकर हाजिर करदें। यदि महाराज इन्कार करें कि हमारे यहां वैसी रस्सी नहीं है, तो उनसे आप विनयपूर्वक अपने अपराधकी क्षमा मांग लीजिये और यह प्रार्थना कर दीजिये—हे महाराज! ऐसी अलभ्य वस्तुकी हमें आज्ञा न दिया करें। हम आपकी दीन प्रजा हैं।

कुमारके मुखसे यह युक्ति सुन ब्राह्मणोंको अति हर्ष हुआ।

वे मारे आनंदके उछलते कूदते शीघ्र ही राजगृह नगर आ पहुंचे। राजमंदिरमें प्रवेश कर उन्होंने महाराजको नमस्कार किया और विनयपूर्वक यह निवेदन किया—

श्री महाराज! आपने हमें बालूकी रस्सीके लिये आज्ञा दी है। हमें नहीं मालूम होता हम कैसी रस्सी आपकी सेवामें लाकर हाजिर करें। कृपया हमें कोई दूसरी बालूकी रस्सी मिले तो हम वैसी ही आपकी सेवामें हाजिर करदें, अपराध क्षमा हो।

विप्रोंकी बात सुन महाराजने उत्तर दिया—हे विप्रो! मेरे यहां कोई भी बालूकी रस्सी नहीं। बस फिर क्या था! महाराजके मुखसे शब्द निकलते ही ब्राह्मणोंने एक स्वर हो इस प्रकार निवेदन किया—

हे कृपानाथ! जब आपके भण्डारमें भी रस्सी नहीं है तो हम कहांसे बालूकी रस्सी बनाकर ला सकते हैं? प्रभो! कृपया हम पर ऐसी अलभ्य वस्तुके लिये आज्ञा न भेजा करें। आपकी ऐसी कठोर आज्ञा हमारा घोर अहित करनेवाली है। हम आपके तावेदार हैं, आप हमारे स्वामी हैं, तथा इस प्रकार विनयपूर्वक निवेदन कर विप्र राजमंदिरसे चले गये। किन्तु विप्रोंके विनय करने पर भी महाराजके कोपकी शांति न हुई। विप्रोंके चले जाने पर उन्हें फिर नंदिग्रामके अपमानका स्मरण आया, उनके शरीरमें फिर क्रोधकी ज्वाला धधकने लगी।

वे विचारने लगे कि ब्राह्मण किसी प्रकार दोषी नहीं बन पाये हैं। नंदिग्रामके ब्राह्मण बड़े चालाक मालूम पड़ते हैं। अस्तु, मैं अब उनके पास ऐसी आज्ञा भेजता हूं जिसका वे पालन ही न कर सकेंगे। तथा क्षणएक ऐसा विचार महाराजने शीघ्र ही एक दूत बुलाया और उसे यह आज्ञा दी कि तुम अभी नंदिग्राम जाओ और वहांके ब्राह्मणोंसे कहो कि महाराजने

यह आज्ञा दी है कि नंदिग्रामके ब्राह्मण एक कूष्मांड (पेठा) मेरे पास लावें। वह कूष्मांड घड़ामें भीतर हो, और घड़ाकी बराबर हो। कमती बढ़ती न हो, यदि वे इस आज्ञाका पालन न करें तो नंदिग्रामको छोड़ दें।

इधर महाराजकी आज्ञा पाकर दूत तो नंदिग्रामकी ओर रवाना हुआ। उधर जब ब्राह्मणोंको वालूकी रस्सी महाराजके यहांसे न मिली तो अपना विघ्न टल जानेसे वे खूब आनन्दसे नंदिग्राममें रहने लगे, और वारवार कुमार अभयकी बुद्धिकी तारीफ करने लगे। किन्तु जिस समय दूत फिरसे नंदिग्राम पहुँचा और ज्यों ही उसने ब्राह्मणोंके सामने महाराजकी आज्ञा कहनी प्रारम्भ की, सुनते ही ब्राह्मण घबड़ा गये। महाराजकी आज्ञाके भयसे उनका शरीर थरथर कांपने लगा।

वे अपने मनमें विचारने लगे—हे ईश्वर! यह बलाय फिर कहांसे आ टूटी। हम तो अभी महाराजसे अपना अपराध क्षमा कराकर आये हैं। क्या हमारे इतने विनयभावसे भी महाराजका हृदय दयासे न पसीजा? अब हम अपने बचनेका क्या और कैसा उपाय करें? तथा क्षणएक ऐसा विचार कर वे कुमारके सामने इस प्रकार रोदनपूर्वक चिल्लाने लगे।

हे वीरोंके शिरताज कुमार! अबके महाराजने हमारे ऊपर अति कठिन आज्ञा भेजी है। हे कृपानाथ! इस भयंकर विघ्नसे हमारी शीघ्र रक्षा करो। हम ब्राह्मणोंके इस भयंकर दुःखका जल्दी निपटारा करो। हे दीनबंधो! इस भयंकर कष्टसे आप ही हमारी रक्षा कर सकते हैं। आप ही हमारे दुःख-पर्वतके नाश करनेमें अखंड वज्र हैं।

महनीय कुमार! लोकमें जिसप्रकार समुद्रकी गंभीरता, मेरुपर्वतका अचलपना, देवजीतकी विद्वत्ता, सूर्यका प्रतापीपना, इन्द्रका स्वामीपना, चन्द्रमाकी मनोहरता, राजा रामचन्द्रकी

न्यायपरायणता, कामदेवकी सुन्दरता आदि बातें प्रसिद्ध हैं, उसीप्रकार आपकी कुशलता और विद्वत्ता प्रसिद्ध है। स्वामिन्! हमारे ऊपर प्रसन्न हूजिये। हमें बच बचाइये। इस समय हम घोर चितासे व्यथित होरहे हैं। जीवननाथ! हम सब लोगोंका जीवन आपके ही आधार है। त्रिलोकमें आपके समान हमारा कोई बंधु नहीं।

ब्राह्मणोंको इसप्रकार करुणापूर्वक रुदन करते हुये देख कुमार अभयका चित्त करुणासे गद्गद होगया। उन्होंने गंभीरतापूर्वक ब्राह्मणोंसे कहा! विप्रो! आप क्यों इस न-कुछ बातके लिये इतना घबड़ाते हैं? मैं अभी इसका उपाय करता हूं। जबतक मैं यहांपर हूं तबतक आप किसी प्रकारसे राजाकी आज्ञाका भंग न करें। तथा विप्रोंको इसप्रकार समझाकर कुमार अभयने एक घड़ा मंगाया और उसमें बेल सहित कूष्मांडफलको रख दिया। अनेक प्रयत्न करनेपर कई दिन बाद कूष्मांड घड़ेके बराबर बढ़ गया और कुमारने घड़े सहित ज्योंका त्यों उसे महाराजकी सेवामें भिजवा दिया एवं वे आनन्दसे रहने लगे।

महाराजने जैसा कूष्मांड मांगा था वैसा ही उनके पास पहुंच गया। अबके कूष्मांड देखकर तो महाराजके सोचका पारावार न रहा। वे बारम्बार सोचने लगे—हैं! यह बात क्या है? क्या नंदिग्रामके ब्राह्मण ही इतने बुद्धिमान हैं या इनके पास कोई और ही मनुष्य बुद्धिमान रहता है? नंदिग्रामके ब्राह्मणोंका तो इतना पांडित्य नहीं हो सकता क्योंकि जबसे इनको राज्यकी ओरसे स्थिर आजीविका मिली है तबसे ये लोग निपट अज्ञानी होगये हैं। इनकी समझमें साधारणसे साधारण भी बात आती ही नहीं फिर इनके द्वारा मेरी बातोंका जवाब देना तो बहुत ही कठिन ही बात है।

और जब मैंने नंदिग्रामके ब्राह्मणोंके पास भेजे हैं एवं सबका

जवाब मुझे बुद्धिपूर्वक ही मिला है, इसलिये यही निश्चय होता है कि नंदिग्राममें अवश्य कोई असाधारण बुद्धिका धारक ब्राह्मणोंसे अन्य ही मनुष्य है। जिस पांडित्यसे मेरी बातोंका जवाब दिया गया है, न मालूम वह पांडित्य इन्द्रदेवका है! या चन्द्रदेवका है! अथवा सूर्यदेव या यक्षराजका है? नंदिग्रामके ब्राह्मणोंका तो किसी प्रकार वैसा पांडित्य नहीं होसकता। अस्तु, यदि नंदिग्रामके ब्राह्मण ही इतने बुद्धिमान् हैं तो अभी मैं उनकी बुद्धिकी फिर परीक्षा किये लेता हूँ तथा इसप्रकार क्षणएक अपने मनमें पक्का निश्चय कर महाराजने शीघ्र ही कुछ शूरवीर योद्धाओंको बुलाया और उन्हें यह आज्ञा दी कि तुम लोग अभी नंदिग्राम जाओ और नंदिग्राममें जो अधिक बुद्धिमान हो शीघ्र ही तलाशकर आकर कहो।

महाराजकी आज्ञा पाते ही योद्धाओंने शीघ्र ही नंदिग्रामकी ओर गमन कर दिया तथा नंदिग्रामके मनोहर वनमें वे अपनी भूखकी शांतिके लिये ठहर गये।

वह वन अति मनोहर वन था। उसमें अगहर अनार, नारंगी, संतरा, जमनी, कंकेली, केला, लौंग आदि उत्तमोत्तम फल वृक्षोंपर फलते थे। नींबू आदि सुगन्धित फलोंकी सुगन्धिसे सदा वह वन व्याप्त रहता था। उसके ऊँचेर वृक्षोंपर कोयल आदि पक्षीगण अपने मनोहर शब्दोंसे पथिकके मनको हरण करते थे और केतकी वृक्षोंपर भ्रमर गुञ्जार करते थे। इसलिये हमेशा नंदिग्रामके बालक उस वनमें क्रीडार्थ आया जाया करते थे।

रोजकी तरह उस दिन भी बालक क्रीडार्थ वनमें आये। दैवयोगसे उस दिन विप्रोंके बालकोंके साथ कुमार अभय भी थे। वे सबके सब हँसते खेलते किसी जमनीके वृक्षपर चढ़ गये और आनन्दसे आमन फलोंको खाने लगे। बालकोंको इस प्रकार जमनीके पेड़पर चढे राजसेवकोंने देखा तथा वे सब 'यह समझ

कि हम इन बालकोंसे कुछ फल लेकर अपनी भूख शांत करेंगे' शीघ्र ही उस वृक्षकी ओर झुक पड़े।

इधर कुमार अभयने जब राजसेवकोंको अपनी ओर आते हुये देखा तो वे तो अन्य बालकोंसे यह कहने लगे कि देखो भाई! ये राजसेवक अपनी ओर आ रहे हैं। तुममेंसे कोई भी इनके साथ बातचीत न करें। जो कुछ जवाब सवाल करना सो मैं ही इनके साथ करूंगा और उधर राजसेवक उसवृक्षके नीचे चट आ कूदे और बालकोंसे कुछ फलोंके लिये उन्होंने प्रार्थना भी की।

राजसेवकोंकी फलोंके लिये प्रार्थना सुन कुमार अभयने सोचा— यदि इनको योंही फल देदिये जांयगे तो कुछ मजा न आवेगा, इनको छकाकर फल देना ठीक होगा। इसलिये प्रार्थनाके बदलेमें उन्होंने यही जवाब दिया—

राजसेवको! तुमने फल मांगे सो ठीक है। जितने फलोंकी तुम्हें इच्छा हो, उतने ही फल दे सकता हूं किन्तु यह कहो तुम ठण्डे फल लेना चाहते हो या गरम? क्योंकि मेरे पास फल दोनों तरहके हैं।

कुमारके ऐसे विचित्र वचन सुन समस्त राजसेवक एक दूसरेका मुंह ताकने लगे। उन्होंने विचारा कि क्या केवल गरम और केवल ठण्डे भी फल होते हैं?

हमें तो आजतक यह बात सुननेमें नहीं आई कि फल गरम भी होते हैं। जितने फल हमने खाये हैं सब ठण्डे ही खाये हैं और ठण्डे ही सुने हैं। एक वृक्षपर गरम और ठण्डे दो प्रकारके फल हों यह सर्वथा विरुद्ध है। इसलिये कुमार जो दो प्रकारके फल कह रहे हैं सो इनका कथन सर्वथा अयुक्त जान पड़ता है तथा क्षण एक ऐसा दृढ़ निश्चय कर, और कुमारको कुछ उत्तर देना जरूर है, यह समझ उन्होंने कहा—

महोदय कुमार ! हमें आपके वचन अति प्रिय मालूम पड़ते हैं। कृपाकर लाइये हमें ठण्डे ही फल दीजिये। राजसेवकोंके वे वचन सुन कुमारने कुछ फल तोड़े और उन्हें आपसमें घिसकर बालूमें दूर पटक दिया और कह दिया—देखो फल वे पड़े हैं। उठा लो।

कुमारकी आज्ञा पाते ही जिधर फल पड़े थे, राजसेवक उसी ओर दौड़े। ज्योंही उन्होंने बालूसे फल उठाकर फूंकना चाहा त्योंही कुमारने कहा—देखो! फल हुशियारीसे फूंकना, ये फल गरम हैं, जो बिना विचारे फूंका तो तुम्हारी सब डाढ़ी मूंछ पजल जांयगी।

कुमारके ऐसे वचन सुनते ही राजसेवक अपने मनमें बड़े लज्जित हुवे। वे बारबार टकटकी लगाकर कुमारकी ओर देखने लगे। कुमारकी इस चतुरताको देखकर राजसेवकोंने निश्चय कर लिया कि हो न हो यही सबमें चतुर जान पड़ता है। महाराजकी बातोंका उत्तर भी इसीने दिया होगा! तथा कुमारकी रूपसंपत्ति उन्होंने देख यह भी निश्चय कर लिया कि यह कोई अवश्य राजकुमार है।

यह ब्रह्मण बालक नहीं हो सकता क्योंकि जितने भर बालक यहांपर हैं सबमें तेजस्वी प्रतापी एवं राजलक्षणोंसे मंडित यही जान पड़ता है। उपस्थित बालकोंमें इतना तेज किसीके चेहरेपर नहीं जितना इस बालकके चेहरेपर दिखाई देता है। एवं किसीसे यह भी निश्चयकर कि कुमार महाराज श्रेणिकका पुत्र अभयकुमार है, राजसेवकोंने नंदिग्राम जानेका विचार यहीं समाप्त कर दिया। वे लज्जित एवं आनंदित हो राजगृहकी ओर ही लौट पड़े और महाराजको नमस्कार कर कुमार अभयकी जो जो चेष्टा उन्होंने देखी थी सब कह सुनाई।

सेवकों द्वारा कुमार अभयका समस्त वृत्तान्त सुन, उन्हें

बुद्धिमान एवं रूपवान भी निश्चयकर, महाराज श्रेणिकको अति प्रसन्नता हुई। मारे आनंदके उनके नेत्रोंसे आनंदाश्रु झरने लगे। मुख कमलके समान विकसित होगया तथा वे विचार करने लगे कि:-मेरा अनुमान कदापि असत्य नहीं हो सकता। मुझे दृढ़ विश्वास था।

नंदिग्रामके ब्राह्मणोंकी बुद्धि ऐसी विशाल नहीं हो सकती। जरूर उनके पास कोई न कोई चतुर मनुष्य होना चाहिये। भला सिवाय कुमार अभयके इतनी बुद्धिकी तीक्ष्णता किसमें हो सकती है? तथा क्षण एक ऐसा विचार कर उन्होंने कुमार अभयको बुलानेके लिये कुछ राजसेवकोंको बुलाया और उनको आज्ञा दी कि तुम अभी नंदिग्राम जाओ और कुमार अभयसे कहो कि महाराजने आपको बुलाया है तथा यह भी कहना कि आपके लिये महाराजने यह भी आज्ञा दी है कि—

कुमार न तो मार्गसे आवे और न उन्मार्गसे आवे, न दिनमें आवे, न रातमें आवे, भूखे भी न आवे, अफरे पेट भी न आवे, न किसी सवारीमें आवे और न पैदल आवे किन्तु राजगृह नगर शीघ्र ही आवे।

महाराजकी आज्ञा पाते ही सेवक शीघ्र ही नंदिग्रामकी ओर चल दिये, एवं कुमारके पास पहुंच उन्हें भक्तिपूर्वक नमस्कार कर महाराजका जो कुछ संदेशा था, सब कुमारको कह सुनाया!

अबके महाराजने कुमार अभयके ऊपर भी कठिन संदेशा भटकाया है और उन्हें राजगृह नगर बुलाया है। यह समाचार सारे नंदिग्राममें फैल गया। समाचार सुनते ही समस्त ब्राह्मण हाहाकार करने लगे, भांति भांतिके संकल्प विकल्पोंने उनके चित्तको अपना स्थान बना लिया। क्षण क्षण अब उनके मनमें यह चिंता सताने लगी कि अब हम किसी रीतिसे बच नहीं

सकते । अबतक जो हमारे जीवनकी रक्षा हुई है, सो इसी कुमारकी असीम कृपासे हुई है। यदि यह कुमार न होता तो अबतक सबका हमारा विध्वंस हो गया होता । अबके राजाने कुमारको बुलाया यह बड़ा अनर्थ किया ।

हे ईश्वर ! हमने किस भवमें ऐसा प्रबल पाप किया था जिसका फल हम दुःख ही दुःख भोग रहे हैं। ईश्वर ! अब तो हमारी रक्षा कर । तथा इस प्रकार चिल्लाते हुये वे समस्त ब्राह्मण कुमार अभयकी सेवामें गये और उच्च स्वरसे उनके सामने रोने लगे। विप्रोंकी ऐसी दुःखित अवस्था देख कुमारने कहा—

ब्राह्मणो ! आप क्यों इतना व्यर्थ खेद करते हो ? राजाने जिस आज्ञासे मुझे बुलाया है मैं वैसे ही जाऊंगा। मैं आप लोगोंका पूरा२ ख्याल रक्खूंगा, किसी तरहकी आप चिंता न करें तथा विप्रोंको इस प्रकार धैर्य बंधाकर कुमारने शीघ्र ही एक रथ मंगवाया और उसके मध्यमें एक छींका बंधवाकर तैयार करवा दिया ।

जिस समय दिन समाप्त होगया । दिनका अन्त रातका प्रारम्भ सध्याकाल प्रगट होगया, कुमारने राजगृहकी ओर रथ हंकवा दिया। चलते समय रथका एक (पहिया) मार्गमें चलाया गया और दूसरा उन्मार्गमें । कुमारने चलते समय (हरिमंथक) चनाका भोजन किया एवं छींकेपर सवार हो कुमार अनेक विप्रोंके साथ आनन्दपूर्वक राजगृह नगर आ पहुंचे ।

महाराज श्रेणिकके पुत्र कुमार अभय राजगृह आ गये, यह समाचार सारे नगरमें फैल गया । समस्त पुरवासी लोग कुमारके दर्शनार्थ राजमार्ग पर एकत्रित हो गये। नगरकी स्त्रियां कुमारको टकटकी लगाकर देखने लगीं। कुमारके आगमन उत्सवमें सारा नगर बाजोंसे गूंजने लग गया। बंदीगण कुमारकी विरदावली

बखानने लगे और पुरवासी लोग कुमारको देख उनकी भांति भांति रीतिसे प्रशंसा करने लगे।

इस प्रकार राजमार्गसे आते हुवे, पुरवासीजनोंसे भलीभांति स्तुत, कुमार अभय राजमंदिरके पास आ पहुंचे। रथसे उतर कुमारने अपने नाना इन्द्रदत्तके साथ राजसभामें प्रवेश किया और सभामें महाराजको सिंहासन पर विराजमान देख अति विनयसे नमस्कार किया, महाराजके चरण छुवे एवं प्रेमपूर्वक वचनालाप करने लगे। कुमारके साथ नंदिग्रामके विप्र भी थे। महाराजसे उनका अपराध क्षमा कराया, उन्हें अभयदान दिला सतुष्ट किया एवं उन्हें आनंदपूर्वक नंदिग्राममें रहनेके लिये आज्ञा दे दी।

कुमारके इस विनयवर्तावसे एवं लोकोत्तर चातुर्यसे महाराज श्रेणिकको अति प्रसन्नता हुई। कुमारकी विना तारीफ किये उनसे न रहा गया। वे इस प्रकार कुमारकी प्रशंसा करने लगे—हे कुमार! जैसा ऊँचे दर्जेका पांडित्य आपमें मौजूद है वैसा पांडित्य कहींपर नहीं। महाभाग! बकरा, बावड़ी, हाथी, काष्ठ, तेल, दूध, बालूकी रस्सी, कूष्मांड, रातदिन आदि रहित गमन इत्यादि प्रश्नोंके जवाबका सामर्थ्य आपकी बुद्धिमें ही था। भला ऐसी विशाल बुद्धि अन्य मनुष्यमें कहांसे हो सकती है? इत्यादि अनेक प्रकारसे कुमार अभयकी तारीफ कर महाराजने उनके साथ अधिक स्नेह बताया।

दोनों पिता पुत्र अनेक उत्तमोत्तम पुरुषोंकी कथा कहने लगे। आपसमें वार्तालाप करते हुवे, एक स्थानमें स्थित, दोनों महानुभावोंने सूर्य-चन्द्रमाकी उपमाको धारण किया। महाराज [illegible]ने सेठ इन्द्रदत्तका भी अति सम्मान किया एवं मधुरभाषी, सोच विचार कर कार्य करनेवाले कुमार और महाराज आनन्द-पूर्वक राजगृह नगरमें सुखानुभव करने लगे।

धर्मका माहात्म्य अचिन्तनीय है क्योंकि इसकी कृपासे संसारमें जीवोंको उत्तमोत्तम बुद्धिकी प्राप्ति होती है, उत्तम संगति मिलती है। तेजस्वीपना, सन्मान, गम्भीरपना, आदि उत्तमोत्तम गुणोंकी प्राप्ति भी धर्मसे ही होती है।

महाराज श्रेणिक एवं कुमार अभयने पूर्वभवमें कोई अपूर्व धर्म संचय किया था इसलिये उन्हें इस जन्ममें गंभीरता, शूरता, उदारता, बुद्धिमत्ता, तेजस्वीपना, सम्मान, रूपवानपना आदि उत्तमोत्तम गुणोंकी प्राप्ति हुई। इसलिये उत्तम पुरुषोंको चाहिये कि वे हरएक अवस्थामें इस परम प्रभावी धर्मका अवश्य आराधन करें।

इस प्रकार भविष्यकालमें होनेवाले श्री पद्मनाभ तीर्थंकरके भवांतरके जीव महाराज श्रेणिकके चरित्रमें कुमार अभयका राजगृहमें आगमनका वर्णन करनेवाला छठवाँ सर्ग समाप्त हुआ।

सातवां सर्ग

अभयकुमारकी उत्तम बुद्धिका वर्णन

ज्ञानरूपी भूषणके धारक, तीनोंलोकके मस्तकपर विराजमान श्री सिद्धभगवानको उनके गुणोंकी प्राप्त्यर्थ मैं मस्तक झुकाकर नमस्कार करता हूं।

अनंतर इसके महाराज श्रेणिकने रानी नंदश्रीको नंदिग्रामसे बुला महादेवीका पद प्रदान किया-उसे पटरानी बनाया तथा कुमार अभयको युवराज पद दिया। कुमार अभयका बुद्धिबल और तेजस्वीपना देख समस्त सामंतोंकी सम्मतिपूर्वक महाराजने उन्हें सेनापतिका पद भी दे दिया। एवं बुद्धदेवके गुणोंमें दत्तचित्त महाराज श्रेणिकने किसी बौद्ध संन्यासीको गुरु बनाया और उसकी आज्ञानुसार वे आनंदपूर्वक चतुरार्यमय तत्त्वकी पूजन करने लगा तथा अपने राज्यको निष्कंटक राज्य बना कुमार अभयके साथ लोकोत्तर सुखका अनुभव करने लगे।

कुमार अभय अतिशय बुद्धिमान थे। बुद्धिपूर्वक राज्य कार्य करनेसे उनका चातुर्य और यश समस्त संसारमें फैल गया। कुमारकी न्यायपरायणता देख समस्त प्रजा मुक्तकण्ठसे उनकी तारीफ करने लगी एवं कुमारकी नीति-निपुणतासे राज्यमें किसी प्रकारकी अनीति नजर न आने लगी। मगधदेशकी प्रजा आनंदपूर्वक रहने लगी।

मगधदेशमें महान् सम्पत्तिका धारक कोई सुभद्रदत्त नामका सेठ निवास करता था। उसकी दो स्त्रियां थीं। सुभद्रदत्तकी बड़ी स्त्रीका नाम वसुदत्ता था और उसकी दूसरी स्त्री जो अतिशय रूपवती थी, वसुमित्रा थी। उन दोनोंमें वसुदत्ताके कोई संतान न थी, केवल छोटी स्त्री वसुमित्राको एक बालक था।

कदाचित् घरमें विपुल धन रहनेपर भी सेठ सुभद्रदत्तको धन कमानेकी चिन्ता हुई। वे शीघ्र ही अपनी दोनों स्त्री और पुत्रके साथ विदेशको निकल पड़े। अनेक देशोंमें घूमते घूमते वे राजगृह नगर आये और वहांपर सुखपूर्वक धनका उपार्जन करने लगे और आनन्दपूर्वक रहने लगे।

दुर्दैवकी महिमा अपार है, संसारमें जो घोरसे घोर दुःखका सामना करना पड़ता है, इसीकी कृपा है। इस निर्दयी दुर्दैवको किसीपर दया नहीं। सेठ समुद्रदत्त आनन्दपूर्वक निवास करते थे। अचानक ही उन्हें कालने आ दबाया। समुद्रदत्तको जबरन पुत्र स्त्रियोंसे स्नेह छोड़नां पड़ा। समुद्रदत्तके मरनेके बाद उनकी स्त्रियोंको अपार दुःख हुवा किन्तु क्या किया जाय? दुर्दैवके सामने किसीकी भी तीन पांच नहीं चलती।

जबतक सेठ सुभद्रदत्त जीये तबतक तो वसुदत्ता एव वसुमित्रामें गाढ़ प्रेम था। सुभद्रदत्तके सामने यह विचार स्वप्नमें भी नहीं आता था कि कभी इन दोनोंमें झगड़ा होगा, सेठजीके मरणके उपरांत ये उनकी बुरी तरह मिट्टी पलीत करेंगी। पुत्रके ऊपर भी उन दोनोंका बराबर प्रेम था।

पुत्रकी खास माँ वसुमित्रा जिस प्रकार पुत्रपर अधिक प्रेम रखती उससे अधिक वसुदत्ताका था। यहां तक कि समान रीतिसे पुत्रके लालन-पालन करनेसे किसीको यह पता भी नहीं लगता था कि पुत्र वसुदत्ताका है या वसुमित्राका? बालकको भी कुछ पता नहीं लगता था।

वह दोनोंको ही अपनी मां मानता था किन्तु ज्यों ही सेठ सुभद्रदत्तका शरीरांत हुवा वसुदत्ता और वसुमित्रामें झगड़ा होना आरम्भ हो गया। कभी उन दोनोंकी लड़ाई धनके लिये होने लगी तो कभी पुत्रके लिये। वसुदत्ता तो यह कहती थी यह पुत्र

मेरा है और उसकी बातको काटकर वसुमित्रा यह कहती थी यह पुत्र मेरा है।

गांवके सेठ साहूकारोंने भी यह बात सुनी। वे सेठ सुभद्र-दत्तकी आबरूका ख्याल कर उनके घर आये। सेठ साहूकारोंने बहुत कुछ उन स्त्रियोंको समझाया। उन्हें सेठ सुभद्रदत्तकी प्रतिष्ठाका भी स्मरण दिलाया किन्तु उन मूर्खा स्त्रियोंके ध्यान पर एक बात न चढ़ी। धन सम्बन्धी झगड़ा छोड़ वे पुत्रके लिये अधिक झगड़ा करने लगीं। पुत्रका झगड़ा देख सेठ साहूकारोंकी नाकमें दम आ गया। वे जरा भी इस बातका फैसला न कर सके कि यह पुत्र वास्तवमें किसका था? तथा इस रीतिसे उन दोनों स्त्रियोंमें दिनोंदिन द्वेष वृद्धिगत होता चला गया।

कदाचित् उन स्त्रियोंके मनमें न्याय सभामें आकर न्याय करानेकी इच्छा हुई। उन्हें इसप्रकार दरबारमें जाते देख फिर गांवके बड़े२ मनुष्य सेठ सुभद्रदत्तके घर आये। उन्होंने फिर स्त्रियोंको इस रीतिसे समझाया—देखो, तुम बड़े घरानेकी स्त्रियां हो, तुम्हारा कुल उत्तम है, तुम्हें इस न कुछ बातके लिये दरबारमें जाना नहीं चाहिये।

यदि तुम दरबारमें विना विचारे चली जाओगी तो समस्त लोक तुम्हारी निन्दा करेगा, तुम्हें निर्लज्ज कहेगा, एवं तुम्हें पीछे कुछ पछताना पड़ेगा, किन्तु उन मूर्खा स्त्रियोंने एक न मानी। निर्लज्ज हो वे सीधी दरबारको चलदीं और महाराजके सामने जो कुछ उन्हें कहना था, साफ साफ कह सुनाया।

स्त्रियोंकी यह विचित्र बात सुन महाराज श्रेणिक चकित रह गये। उन्होंने वास्तवमें यह पुत्र किसका है, इस बातके जाननेके लिये अनेक उपाय सोचे किन्तु कोई उपाय सफल न काम पड़ा। उन्होंने स्त्रियोंको बहुत कुछ समझाया, लड़ाई

करनेके लिये भी रोका, किंतु उन स्त्रियोंने एक न मानी। महाराजने जब स्त्रियोंका हठ विशेष देखा, समझाने पर भी जब वे न समझीं तब उन्होंने शीघ्र ही युवराज कुमार अभयको बुलाया और जो हकीकत उन स्त्रियोंकी थी सारी कह सुनाई।

महाराजके मुखसे स्त्रियोंका यह विचित्र विवाद सुन कुमारको भी दांततले उंगली दबानी पड़ी, किंतु उपायसे अति कठिन भी काम अति सरल हो जाता है, यह समझ उन्होंने उपाय करना प्रारम्भ कर दिया।

कुमारने उन दोनों स्त्रियोंको अपने पास बुलाया। प्रिय वचन कह उन्हें अधिक समझाने लगे, किंतु वह पुत्र वास्तवमें किसका था, स्त्रियोंने पता न लगने दिया। किसी समय कुमारने एक एक कर उन्हें एकांतमें भी बुलाकर पूछा किंतु वे दोनों स्त्रियां पुत्रको अपना अपना ही बतलाती रहीं। विवाद शांतिके लिये कुमारने और भी अनेक उपाय किये किंतु फल कुछ भी न निकला। अंतमें उनको गुस्सा आ गई, उन्होंने बालक शीघ्र ही जमीनपर रखवा लिया और अपने हाथमें एक तलवार ले, उसे बालकके पेटपर रख कुमारने स्त्रियोंसे कहा—स्त्रियो! आप घबड़ायें न, मैं अभी इस बालकके दो टुकड़े कर आपका फैसला किये देता हूँ। आप एक एक टुकड़ा ले अपने अपने घर चली जांय।

मातृस्नेहसे बढ़कर दुनियामें स्नेह नहीं। चाहे पुत्र कुपुत्र हो जाय, माता कुमाता नहीं होती। कुपुत्र भले ही उनके लिये किसी कामका न हो माता कभी भी उसका अनिष्ट चिंतन नहीं करती। सदा माताका विचार यही रहता है। चाहे मेरा पुत्र कुछ भी न करे किंतु मेरी आंखोंके सामने प्रतिसमय बना रहे। इसलिये जिस समय सेठानी वसुमित्राने कुमार अभयके वचन सुने, मारे भयके घबड़ाई और कांपने लगी। पुत्रके टुकड़े सुन

उसके नेत्रोंसे अविरल अश्रुओंकी धारा बहने लगी। उसने शीघ्र ही विनयपूर्वक कुमारसे कहा—

महाभाग कुमार! इस दीन बालकके आप टुकड़े न करें, आप यह बालक वसुदत्ताको देदें। यह बालक मेरा नहीं वसुदत्ताका ही है। वसुदत्ताका इसमें अधिक स्नेह है। बालककी वही माता है। वसुमित्राके ऐसे वचन सुन कुमारने झट जान लिया कि इस बालककी मां वसुमित्रा ही है तथा समस्त मनुष्योंके सामने यह बात प्रगट कर कुमारने सेठानी वसुमित्राको बालक दे दिया और वसुदत्ताको राज्यसे निकाल छोड़ दिया। इस प्रकार अपने बुद्धिबलसे नीतिपूर्वक राज्य करनेवाले कुमार अभयने महाराज श्रेणिकका राज्य धर्मराज्य बना दिया और कुमार आनंदपूर्वक रहने लगे।

इसी अवसरमें अतिशय सच्चरित्र कोई बलभद्र नामका गृहस्थ अयोध्यामें निवास करता था। उसकी स्त्री जो कि अतिशय रूपवती, चन्द्रमुखी, तन्वंगी, कठिनस्तनि, पिकवैनी अति मनोहरा थी, भद्रा थी। उसी नगरमें अतिशय धनवान एक वसंत नामका क्षत्रिय भी रहता था। उसकी स्त्रीका नाम माधवी था किन्तु वह कुरूपा अधिक थी। कदाचित् भद्रा अपने मकानकी छतपर खड़ी थी।

दैवयोगसे वसंतकी दृष्टि भद्रापर पड़ी। भद्राकी खूबसूरती देख वसंत पागलसा होगया। सारी हुशियारी उसकी किनारा कर गई, कामदेवके तीक्ष्ण बाण वसंतके शरीरको भेदन करने लग गये। क्रमशः दिनोंदिन काम-जनित संताप बढ़ता ही चला गया। दाहकी शांतिके लिये उसने चन्दनरस, चन्द्रकिरण, कमल, कपूर, ठण्डा शीतल जल आदि अनेक पदार्थोंका सेवन किया किन्तु उसकी दाहकी शांति किसी प्रकार कम न हुई, किंतु [illegible] और भी अधिक [illegible]

जाती है उसी प्रकार शीतलजल कुसुमाला मलयचंदन आदिसे उस वल्लू बसंतका मन्मथ संताप दिनोंदिन बढ़ता ही चला गया। भद्राके बिना उसे समस्त संसार शून्य ही शून्य प्रतीत होने लगा। सोते उठते बैठते उसके मुखसे भद्रा शब्द ही निकलने लगा। भद्राकी चिंतामें सारी भूख प्यास बसन्तकी एक ओर किनारा कर गई।

कदाचित् अवसर पाकर बसन्तने एक चतुर दूती बुलाई और अपनी सारी आत्मकहानी उसे कह सुनाई एवं शीघ्र ही उसे अपना सन्देशा कह भद्राके पास भेज दिया। बसन्तकी आज्ञानुसार दूती शीघ्र ही भद्राके पास गई। भद्राको देख दूतीने उसके साथ प्रबल हितैषिता दिखाई एवं मधुर शब्दोंमें उसे इस प्रकार समझाने लगी—

भद्रे! संसारमें तू रमणीरत्न है, तेरे समान रूपवती स्त्री दूसरी नहीं, किन्तु खेद है कि जैसी तू रूपवती, गुणवती, चतुरा है, वैसा ही तेरा पति कुरूपवान, निर्गुण एवं मूर्ख किसान है। प्यारी बहिन! अति कुरूप बलभद्रके साथ, मैं तेरा संयोग अच्छा नहीं समझती।

मुझे विश्वास है कि बलभद्र सरीखे कुरूप पुरुषसे तुझे कदापि सन्तोष नहीं होता होगा। तुम सरीखी सुन्दर किसी दूसरी स्त्रीका यदि इतना बदसूरत पति होता तो वह कदापि उसके साथ नहीं रहती, उसे सर्वथा छोड़कर चली जाती। न मालूम तू क्यों इसके साथ अनेक क्लेश भोगती हुई रहती है। दूतीकी ऐसी मीठी बोलीने भद्राके चित्त पर कुछ असर डाल दिया। भोली भद्रा दूतीकी बातोंमें आगई, वह दूतीसे कहने लगी—

बहिन! मैं क्या करूं? स्वामी तो मुझे ऐसा ही मिला है। मेरे भाग्यमें तो यही पति था, मुझे रूपवान पति मिलता कहांसे? तथा ऐसा कह भद्राका मुख भी कुछ म्लान, दोनोंका

भद्राकी ऐसी दशा देख दूती अति प्रसन्न हुई किन्तु अपनी प्रसन्नता प्रगट न कर वह भद्राको इस प्रकार समझाने लगी—

भद्रे बहिन ! तू क्यों इतना व्यर्थ विषाद करती है। इसी नगरीमें एक वसन्त नामका क्षत्रिय पुरुष निवास करता है। वसन्त अति रूपवान, गुणवान एवं धनवान है। वह तेरे ऊपर मोहित भी है, तू उसके साथ आनन्दसे भोगोंको भोग। तुझ सरीखी रूपवतीके लिये संसारमें कोई चीज दुर्लभ नहीं।

दूतीके ऐसे वचन सुन भद्राके मुंहमें तो पानी आगया। उस मूर्खाने यह तो समझा नहीं कि इस दुष्ट वर्तावसे क्या हानियां होंगी। वह शीघ्र ही वसन्तके घर आनेके लिये राजी होगई तथा दाव पा किसी दिन वसन्तके घर चली भी गई और उसके साथ भोग विलास करने शुरू कर दिये।

व्यसनका चसका बुरा होता है। भद्राको व्यसनका चसका बुरा पड़ गया। वह अपने भोले पतिको बातोंमें लगा प्रतिदिन वसन्तके घर जाने लगी। वसन्त पर अभिमान कर उसने अपने पतिका अपमान करना भी प्रारम्भ कर दिया। अनेक प्रकारकी कलह करना भी उसने घरमें शुरू कर दी और अपने सामने किसीको वह बड़ा भी नहीं समझने लगी।

भद्राका पति बलभद्र किसान था। कदाचित् भद्राको कार्यवश खेत पर जाना पड़ा। दैवसे भद्राकी भेंट मुनि गुणसागरसे मार्गमें होगई। मुनि गुणसागरको अति रूपवान, सूर्यके समान तेजस्वी, युवा, एवं अनेक गुणोंके भण्डार देख भद्रा कामसे व्याकुल होगई। कामके गाढ नशेमें आकर उसको यह भी न सूझा कि यह कौन महात्मा है ? वह शीघ्र ही कामसे व्याकुल हो मुनि-राजके सामने बैठ गई और कामजन्य विकारोंको प्रकट करती हुई इसप्रकार कहने लगी—

स्वामी ! यह तो आपका उत्तम रूप ? और यह अवस्था एवं सौंदर्य ? आपको इस अवस्थामें किसने दीक्षाकी शिक्षा दे दी ? इस समय आप क्यों यह शरीर सुखानेवाला तप कर रहे हैं ? इस समय तप करनेसे सिवाय शरीर सूखनेके दूसरा कोई फायदा नहीं हो सकता। इस समय तो आपको इन्द्रिय संबंधी भोग भोगने चाहिये। जिस मनुष्यने संसारमें जन्म धारण कर भोगविलास नहीं किया उसने कुछ भी नहीं किया।

मुने ! यदि आप मोक्षको जानेके लिये तप ही करना चाहते हैं तो कृपाकर वृद्ध अवस्थामें करना। इससमय आपकी बारी उम्र है, आपका मुख चन्द्रमाके समान उज्ज्वल एवं मनोहर है, आपका रूप भी अधिक उत्तम है, इसलिये आपकी सेवामें यही मेरी सविनय प्रार्थना है कि आप किसी रमणीके साथ उत्तमोत्तम भोग भोगें और आनन्दपूर्वक किसी नगरमें निवास करें।

मुनिराज गुणसागर तो अवधिज्ञानके धारक थे। भला वे ऐसी निकृष्ट भद्रा सरीखी स्त्रियोंकी बातोंमें कब आनेवाले थे ? जिस समय मुनिराजने भद्राके वचन सुने–शीघ्र ही उन्होंने भद्राके मनके भावको पहिचान लिया एवं वे उसे आसन्नभव्या समझ इसप्रकार उपदेश देने लगे—

बाले ! तू व्यर्थ रागके उत्पन्न करनेवाले कामजन्य विकारोंको मत कर। क्या इस प्रकारके दुष्ट विकारोंसे तू अपना परम पावन शीलव्रत नष्ट करना चाहती है ? क्या तू इस बातको नहीं जानती कि शील नष्ट करनेसे किन किन पापोंकी उत्पत्ति होती है ? शीलके न धारण करनेसे किन२ घोर दु:खोंका सामना करना पड़ता है ? भद्रे ! जो जीव अपने शीलरूपी भूषणकी रक्षा नहीं करते वे अनेक पापोंका उपार्जन करते हैं, उन्हें नरक आदि दुर्गतियोंमें जाना पड़ता है एवं वहांपर कठिनसे कठिन दु:ख भोगने पड़ते हैं तथा भद्रे ! शीलके न धारण करनेसे संसारमें

भयंकर वेदनाओंका सामना करना पड़ता है। कुशीली जीव अज्ञानी जीव कहे जाते हैं। उनके कुल नष्ट हो जाते हैं। चारों ओर उनकी अपकीर्ति फैल जाती है और अपकीर्ति फैलने पर शोक संताप आदि व्यथाएं भी उन्हें सहनी पड़ती हैं।

इससमय यदि तू संसारमें सुख चाहती है और तुझे रमणीरत्न बननेकी अभिलाषा है तो तू शीघ्र ही इस खोटे शीलका परित्याग करदे, उत्तम शीलव्रतमें ही अपनी बुद्धि स्थिर कर, अपने चंचल चित्तको कुमार्गसे हटाकर सुमार्गमें आ। एवं अपने पवित्र पतिव्रतधर्मका पालन कर। बाले ! जो स्त्रियां संसारमें भलेप्रकार अपने पतिव्रतधर्मकी रक्षा करती हैं उनके लिये अति कठिन बात भी सर्वथा सरल होजाती है। अधिक क्या कहा जाय, पतिव्रतधर्म पालन करनेवाली स्त्रियोंका संसार भी सर्वथा छूट जाता है। उन्हें किसी प्रकारकी मुसीबतका सामना नहीं करना पड़ता।

महामुनि गुणसागरके उपदेशका भद्राके चित्तपर पूरा प्रभाव पड़ गया। कुछ समय पहले जो भद्राका चित्त कुशीलमें फंसा हुआ था, वह शीलव्रतकी ओर लहराने लगा। मुनिराजके वचन सुननेसे भद्राका चित्त मारे आनंदके व्याप्त होगया। शरीरमें रोमांच खड़े होगये, एवं गद्गद कंठसे उसने मुनिराजसे निवेदन किया।

प्रभो ! मेरे चित्तकी वृत्ति कुशीलकी ओर झुकी हुई है यह बात आपको कैसे मालूम हो गई ? किसीने आपसे कहा भी नहीं ! कृपाकर इस दासीपर अनुग्रह कर शीघ्र बताइये।

भद्राके ऐसे वचन सुन मुनिराजने उत्तर दिया—भद्रे ! तेरे चारित्रके विषयमें मुझसे किसीने भी कुछ नहीं कहा किंतु मेरी आत्माके अन्दर ऐसा उत्तम ज्ञान विराजमान है, जिस ज्ञानके

उससे मैंने तेरे मनका अभिप्राय समझ लिया है। ज्ञानकी शक्ति अपूर्व है इस बातमें तुझे जरा भी सन्देह नहीं करना चाहिये।

मुनिराजके ज्ञानकी अपूर्व महिमा सुन भद्राको अति आनंद हुआ। मुनिराजकी आज्ञानुसार जिस शीलसे देवेन्द्र नरेन्द्र आदि उत्तमोत्तम पद प्राप्त होते हैं वह शीलव्रत शीघ्र ही उसने धारण कर लिया एवं समस्त मुनियोंमें उत्तम जीवोंको कल्याण मार्गका उपदेश देनेवाले, मुनिराज गुणसागरको नमस्कार कर वह शीघ्र ही अपने घर आ गई।

उत्तम उपदेशका फल भी उत्तम ही होता है। बसंतकी बातोंमें फसकर जो भद्राने वसन्तको अपना लिया था और अपने पतिका अनादर करना प्रारम्भ कर दिया था भद्राकी वह प्रकृति अब न रही। पापसे भयभीत हो भद्राने बसंतका अब सर्वथा सम्बन्ध तोड़ दिया। उस दिनसे वसन्त उसकी दृष्टिमें काला भुजंग सरीखा झलकने लगा।

अब वह अपने पतिकी तन मनसे सेवा करने लगी। अपने स्वामीके साथ स्नेहपूर्वक वर्ताव करने लगी। भद्राका जैन धर्म पर भी अगाध प्रेम हो गया। अपने सुखका महान कारण जैन धर्म ही उसे जान पड़ने लगा तथा जैन धर्मपर उसकी यहांतक गाढ़ भक्ति हो गई कि उसने अपने पतिको भी जैनी बना लिया। एवं वे दोनों दम्पति आनन्दपूर्वक अयोध्यानगरीमें रहने लगे।

भद्राने जिस दिनसे शीलव्रतको धारण कर लिया उस दिनसे वह वसन्तके घर झांकी तक नहीं। इस रीतिसे जब कई दिन बीत गये, बसन्तको बिना भद्राके बड़ा दुःख हुआ। वह विचारने लगा—भद्रा! अब मेरे घर क्यों नहीं आती? जो वह कहती थी सो ही मैं करता था। मैंने कोई उसका अपराध भी तो नहीं किया। तथा क्षणएक ऐसा विचारकर उसने भद्राके समीप एक दूती भेजी।

दूतीके द्वारा बसन्तने बहुत कुछ भद्राको लोभ दिखाये। अनेक प्रकारके अनुनय भी किये, किन्तु भद्राने दूतीकी बात तक भी न सुनी। मौका पाकर बसंत भी भद्राके पास आया। किंतु भद्राने बसन्तको भी यह जबाब दे दिया कि मैं अब शीलव्रत धारण कर चुकी, अपने स्वामीको छोड़कर मैं परपुरुषकी प्रतिज्ञा ले चुकी। अब मैं कदापि तेरे साथ विषयभोग नहीं कर सकती। भद्राकी यह बात सुन जब बसंत उसे धमकी देने लगा और उसके साथ व्यभिचारार्थ कड़ाई करने लगा, तब भद्राने साफ शब्दोंमें यह जबाब दे दिया—रे बसन्त! तू पापी नीच नराधम व्रतहीन है। मेरे चाहे प्राण भी चले जावे। मैं अब तेरा मुंह तक न देखूंगी। अब तू मेरे लिये अभिलाषा छोड़, अपनी स्त्रीमें सन्तोष कर।

भद्राको इस प्रकार अपने व्रतमें दृढ़ देख बसन्तकी कुछ भी पेश न चली। वह पागल सरीखा हो गया। वह मूर्ख विचारने लगा–भद्राको यह व्रत किसने दिया? अब मैं भद्राको अपनी आज्ञाकारिणी कैसे बनाऊँ? क्या इससे हठसे दासी बनाऊं? या किसी मन्त्रसे बनाऊँ? क्या करूं?

पापी बसन्त ऐसा अधम विचार कर ही रहा था कि अचानक ही एक महाभीम नामका मंत्रवादी अयोध्यामें आ पहुँचा। सारे नगरमें मंत्रवादका हल्ला हो गया। बसन्तके कान तक भी यह बात पहुंची। मंत्रवादीका आगमन सुन बसन्त शीघ्र ही उसके पास आया और भोजन आदिसे बसन्तने उसकी यथेष्ठ सेवा की।

जब कई दिन इसी प्रकार सेवा करते बीत गये और मंत्रवादीको जब अपने ऊपर बसन्तने प्रसन्न देखा तो उसने अपना सारा हाल मंत्रवादीको कह सुनाया और विनयसे बहु-रूपिणी विद्याके लिये याचना भी की।

वसन्तकी मंत्रके लिये प्रार्थना सुन एवं उसकी सेवासे संतुष्ट होकर मंत्रवादी महाभीमने उसे विधिपूर्वक मन्त्र दे दिया। तथा मन्त्र लेकर वसन्त किसी वनमें चला गया, और उसे सिद्ध करने लगा। दैवयोगसे अनेक दिन बाद मन्त्र सिद्ध हो गया। अब मंत्रबलसे वह छोटे बड़े शरीर धारण करने लगा, एवं अनेक प्रकारकी चेष्टाएं करनी भी उसने प्रारम्भ करदीं।

कदाचित् उसके शिरपर फिर भद्राका भूत सवार हो गया। किसी दिन वह अचानक ही मुर्गाका रूप धारण कर बलभद्रके घरके पास चिल्लाने लगा। मुर्गाकी आवाजसे यह समझ कि सवेरा हो गया, अपने पशुओंको लेकर बलभद्र तो अपने खेतकी ओर रवाना हो गया और उस पापी वसन्तने मुर्गाका रूप बदल शीघ्र ही बलभद्रका रूप धारण किया और धृष्टता पूर्वक बलभद्रके घरमें घुस गया।

सुशीला भद्राकी दृष्टि नकली बलभद्रपर पड़ी, चाल ढालसे उसे चट मालूम हो गया कि यह मेरा पति बलभद्र नहीं तथा उसने गाली देना भी शुरू करदी, किन्तु उस नकली बलभद्रने कुछ भी परवा न की। यह निर्लज्ज किवाड़ बन्दकर जबरन उसके घरमें घुस पड़ा। नकली बलभद्रका इस प्रकार धृष्टतापूर्वक वर्ताव देख भद्रा चिल्लाने लगी।

नकली बलभद्र एवं भद्राका झगड़ा भी बड़े जोरशोरसे होने लगा। झगड़ेकी आवाज सुन पासपड़ोसी सब भद्राके घर आकर इकट्ठे हो गये। असली बलभद्रके कानतक भी यह बात पहुँची। वह भी दौड़तार शीघ्र अपने घर आया और अपने समान दूसरा बलभद्र देख आपसमें झगड़ा करने लगे।

दोनों बलभद्रोंकी चाल, ढाल, रूप, रङ्ग देख पासपड़ोसी मनुष्योंके होश उड़ गये। सबके सब दांतों तले उंगली दबाने

लगे, तथा अनेक उपाय करने पर भी उनको जरा भी इस बातका पता न लगा कि इन दोनोंमें असली बलभद्र कौन है ?

जब पुरवासी मनुष्योंसे असली बलभद्रका फैसला न हो सका तो वे दोनों बलभद्रोंको लेकर राजगृह कुमार अभयकी शरणमें आये और उनके सामने सब समाचार निवेदन कर दोनों बलभद्रोंको खड़ा कर दिया।

दोनों बलभद्रोंकी शकल रूप रङ्ग एकसा देख कुमार अभय भी घबराने लगे। असली बलभद्रके जाननेके लिये उन्होंने अनेक उपाय किये, किन्तु जरा भी उन्हें असली बलभद्रका पता न लगा। अन्तमें सोचते सोचते उनके ध्यानमें एक विचार आया। दोनों बलभद्रोंको बुला उन्हें शीघ्र ही एक कोठेमें बद कर और भद्राको सभामें बुला कर एवं एक तुम्बी अपने सामने रखकर दोनों बलभद्रोंसे कहा—

सुनो भाई दोनों बलभद्रो ! तुम दोनोंमेंसे कोठेके छिद्रसे न निकलकर जो इस तुम्बीके छिद्रसे निकलेगा वही असली बलभद्र समझा जायगा और उसे ही भद्रा मिलेगी।

कुमारकी यह बात सुन असली बलभद्रको तो बड़ा दुःख हुआ। विश्वास होगया कि भद्रा अब मुझे नहीं मिल सकती, क्योंकि मैं तूंबीके छेदसे निकल नहीं सकता, किंतु जो नकली बलभद्र था कुमारके वचनसे मारे हर्षके उसका शरीर रोमांचित होगया। उसने चट तूम्बीके छिद्रसे निकल आनंदपूर्वक भद्राका हाथ पकड़ लिया।

नकली बलभद्रकी यह दशा देख सभाभवनमें बड़े जारशोरसे हल्ला होगया। सबके मुखसे यही शब्द निकलने लगे कि यही नकली बलभद्र है। असली बलभद्र तो कोठरीके भीतर बैठा है, एवं अपनी विचित्र बुद्धिसे कुमार अभयने नकली बलभद्रको

मार पीटकर नगरसे बाहिर भगा दिया और असली बलभद्रको कोठेसे बाहर निकाल एवं उसे भद्रा देकर अयोध्या आनेकी आज्ञा दी।

इस प्रकार पक्षपात रहित न्याय करनेसे कुमार अभयकी चारों ओर कीर्ति फैल गई। उनकी न्याय-परायणता देख समस्त प्रजा मुक्तकंठसे तारीफ करने लगी एवं कुमार अभय आनन्दसे राजगृहमें रहने लगे।

किसी समय महाराज श्रेणिककी अंगूठी किसी कूवेमें गिर गई। कूवेमें अंगूठी गिरी देख महाराजने शीघ्र ही कुमार अभयको बुलाया और यह आज्ञा दी:—

प्रिय कुमार! अंगूठी सूखे कूवेमें गिर गई है, विना किसी बांस आदिकी सहायताके शीघ्र अंगूठी निकाल कर लाओ।

महाराजकी आज्ञा पाते ही कुमार शीघ्र ही कूवेके पास गये। कहींसे गोवर मंगाकर कुमारने कूवेमें गोवर डलवा दिया। जिससमय गोवर सूख गया कूवेको मुंहतक पानीसे भरवा दिया। ज्योंही बहतार गोवर कूवेके मुंहतक आया, गोवरमें छिपटी अंगूठी भी कूवेके मुंहपर आगई, तथा उस अंगूठीको लेकर महाराजकी सेवामें ला हाजिर की। कुमारका यह विचित्र चातुर्य देख महाराज अति प्रसन्न हुवे।

कुमारका अद्भुत चातुर्य देख सब लोग कुमारके चातुर्यकी प्रशंसा करने लगे। अनेकगुणोंसे शोभित कुमार अभयको चतुर जान महाराज श्रेणिक भी कुमारका पूरा पूरा सन्मान करने लगे और उनको बात बातमें कुमार अभयकी तारीफ करनी पड़ी। इसप्रकार अनेक प्रकारके नवीन २ काम करनेका कौतूहली, महाराज श्रेणिक आदि उत्तमोत्तम पुरुषोंद्वारा मान्य, नीतिमार्ग पर चलनेवाला, समस्त दोषोंकर रहित, बृहस्पतिके समान प्रज्ञाके

शिक्षा देनेवाला, [illegible], अपने बुद्धिबलसे अति कठिन कार्यको भी सरल करनेवाला, सूर्यके समान तेजस्वी राजकुमारोंमें विराजमान युवराज अभयकुमार सबको आनंद देने लगे।

संसारमें जीवोंको यदि सुख प्रदान करनेवाली है तो वह उत्तम बुद्धि ही है, क्योंकि इसीकी कृपासे मनुष्य सर्वोंका शिरोमणि बन जाता है। उत्तम बुद्धिवाले मनुष्यका राजा भी पूरा २ सन्मान और आदर करते हैं। बड़े२ सज्जन पुरुष उसकी विनयभावसे सेवा करने लग जाते हैं। तथा उत्तम बुद्धिकी कृपासे अच्छे२ नीति आदि गुण भी उस मनुष्यमें अपना स्थान बना लेते हैं।

इसप्रकार भविष्यत् कालमें होनेवाले श्री पद्मनाभ तीर्थंकरके भवांतरके जीव महाराज श्रेणिकके पुत्र अभयकुमारकी उत्तम बुद्धिका वर्णन करनेवाला सातवां सर्ग समाप्त हुआ।

आठवां सर्ग

महाराजा श्रेणिकका चेलनाके साथ विवाह-वर्णन

अपने पवित्र ज्ञानसे समस्त जीवोंका अज्ञानांधकार मिटानेवाले, निर्मल ज्ञानके दाता, मुनियोंमें उत्तम मुनि श्री उपाध्याय परमेष्ठीको अंग उपांग सहित समस्त ध्यानकी सिद्धिके लिये मैं मस्तक झुकाकर नमस्कार करता हूं।

उस समय अयोध्यापुरीमें कोई भरत नामका पुरुष निवास करता था, भरत चित्रकलामें अति निपुण था। कदाचित् उसके मनमें यह अभिलाषा हुई कि यद्यपि मैं अच्छी तरह चित्रकला जानता हूं, किन्तु कोई ऐसा उपाय होना चाहिये कि लेखनी हाथमें लेते ही आपसे आप पटपर चित्र खींच जावे, मुझे विशेष परिश्रम करना न पड़े। उस समय उसे और तो कोई तरकीब न सूझी, अपनी अभिलाषाकी पूर्तिके लिये उसने पद्मावती देवीकी आराधना करनी शुरू करदी। दैवयोगसे कुछ दिन बाद देवी भरतपर प्रसन्न होगई और उसने प्रत्यक्ष ही भरतसे कहा—

भक्त भरत! मैं तेरे ऊपर प्रसन्न हूं, जिस वरकी तुझे इच्छा हो मांग, मैं देनेके लिये तैयार हूँ। देवीके ऐसे वचन सुन भरत अतिप्रसन्न हुआ, और विनयभावसे उसने इस प्रकार देवीसे निवेदन किया—

माता! यदि तू मुझपर प्रसन्न है और मुझे वर देना चाहता है तो मुझे यही वर दे कि जिस समय मैं लेखनी हाथमें लेकर बैठूं, उस समय आपसे आप मनोहर चित्र पटपर अंकित हो जाय, मुझे किसी प्रकारका परिश्रम न उठाना पड़े।

देवीने भरतका निवेदन स्वीकार किया, तथा भरतको इस

प्रकार अभिलाषित वर दे, देवी तो अन्तर्लीन हो गई, और भरत अपने वरकी परीक्षार्थ किसी एकांत स्थानमें बैठ गया। ज्यों ही उसने पट सामने रख लेखनी हाथमें ली, त्यों ही बिना परिश्रमके आपसे आप पटपर चित्र खिंच गया। चित्रको अनायास पटपर अंकित देख भरतको अति प्रसन्नता हुई।

अपने वरको सिद्ध समझ वह अयोध्यासे निकल पड़ा एवं अनेक देश, पुर, ग्रामोंमें अपने चित्रकौशल्यको दिखाता हुआ, कठिन चित्रोंको अनायास खींचता हुआ, अपने चित्रकर्म चातुर्यसे बड़े बड़े राजाओंको भी मोहित करता हुआ वह भरत आनन्दपूर्वक समस्त पृथ्वीमण्डलपर घूमने लगा।

अनेक पुर एवं ग्रामोंसे शोभित, वन उपवनोंसे मंडित भांति२ के धान्योंसे विराजित एक सिन्धुदेश है। सिन्धुदेशमें अनुपम राजधानी विलासपुरी है। विलासपुरीके स्वामी नीति-पूर्वक प्रजाका पालन करनेवाले अनेक विद्वानोंसे मण्डित महाराज चेटक थे। महाराज चेटककी पटरानीका नाम सुभद्रा था जोकि मृगनयनी चन्द्रमुखी, कृशांगी और कठिन एवं उन्नत स्तनोंको धारण करनेवाली थी। राजा चेटककी पटरानी सुभद्रासे उत्पन्न मनोहरा १, मृगावती २, वसुप्रभा ३, प्रभावती ४, ज्येष्ठा ५, चेलना ६, व चंदना ७ ये सात कन्यायें थीं। ये सातों ही कन्या अति मनोहर थीं, भले प्रकार जैनधर्मकी भक्त थीं, स्त्रियोंके प्रधान २ गुणोंसे मण्डित एवं उत्तम थीं। सातों कन्याओंके रूप सौंदर्य देख राजा चेटक एवं महाराणी सुभद्रा अति प्रसन्न रहते थे। कन्यायें भी भांति भांतिके कलाकौशलोंसे पिता माताको सदा सन्तुष्ट करतीं रहतीं थीं।

कदाचित् भ्रमण करता करता चित्रकार भरत इसी विलास-नगरीमें आ पहुंचा। उसने सातों कन्याओंका शीघ्र ही चित्र अंकित किया एवं उसे महाराज चेटककी सभामें जा हाजिर किया

और महाराजके पूछे जानेपर उसने अपना परिचय भी दे दिया।

अति चतुरतासे पटपर अंकित कन्याओंका चित्र देख राजा चेटक अति प्रसन्न हुये। भरतकी चित्रविषयक कारीगारी देख महाराज बार बार भरतकी प्रशंसा करने लगे और उचित पारितोषिक दे राजा चेटकने भरतको पूर्णतया सन्मानित भी किया।

किसी समय महाराजकी प्रसन्नताके लिये भरतने उन सातों कन्याओंका चित्र राजद्वारमें अंकितकर दिया और उसे भांति भांतिके रंगोंसे रंगीन कर अति मनोहर बना दिया। चित्रकी सुघड़ाई देख समस्त नगरनिवासी उस चित्रको देखने आने लगे और उन सात कन्याओंका वैसा ही चित्र नगरनिवासियोंने अपने अपने द्वारोंपर भी खींच लिया एवं कन्याओंके चित्रसे अपनेको धन्य समझने लगे।

संसारमें जो लोग सात माता कहकर पुकारते हैं और उनकी भक्तिभावसे पूजा करते हैं सो अन्य कोई सात माता नहीं, इन्हीं कन्याओंको बिना समझे सात माता मान रक्खा है। यह सात माताका मिथ्यात्व उसी समयसे जारी हुवा है। संसारमें अब भी कई स्थानोंपर यह मिथ्यात्व प्रचलित है।

सातों कन्याओंमें राजा चेटककी चार कन्याएँ विवाहिता थीं। प्रथम कन्याका विवाह नाथवंशीय कुण्डलपुरके स्वामी महाराज सिद्धार्थके साथ हुवा था। द्वितीय कन्या मृगावती नाथवंशीय वत्सदेशमें कौशांबीपुरीके स्वामी महाराज नाथके साथ विवाही गई थी तथा तृतीय कन्या जोकि वसुप्रभा थी उसका विवाह राजा चेटकने सूर्यवंशीय दशार्ण देशमें हेरकच्छपुरके स्वामी राजा दशरथको दी थी एवं चतुर्थ कन्या प्रभावतीका विवाह कच्छदेशमें रोरुकपुरके स्वामी महाराज महातुरके साथ होगया था। बाकी बची तीन कन्याएं कुमारी ही थीं।

कदाचित् ज्येष्ठा आदि वे तीनों कन्यायें चित्रकार भरतके पास गई और उन सबमें बड़ी कुमारी ज्येष्ठाने हंसी हंसीमें चित्रकारसे कहा—भरत! हम जब तुझे उत्तम चित्रकार समझें कि, कुमारी चेलनाका जैसा रूप है वैसा ही इसका चित्र खिंचकर तू हमें दिखावे।

कुमारी चेलनाका वस्त्ररहित चित्र खींचना भरतके लिये कौन बड़ी बात थी? ज्योंही उसने ज्येष्ठाके वचन सुने, चट अपने सामने पट रखकर हाथमें लेखनी लेली और पद्मावती देवीके प्रसादसे जैसा कुमारी चेलनाका रूप था तथा जो जो उसके गुप्त अंगोंमें तिल आदि चिह्न थे वे ज्योंके त्यों चित्रमें आगये तथा चौखटा वगैरहसे उस चित्रको अति मनोहर बनाकर, शीघ्र ही उसने ज्येष्ठाको दे दिया।

कुमारी चेलनाके चित्रको लेकर प्रथम तो ज्येष्ठा अति प्रसन्न हुई किन्तु ज्यों ही उसकी दृष्टि गुप्तस्थानोंमें रहे हुये तिल आदि चिह्नों पर पड़ी, वह एकदम आश्चर्यसागरमें डूब गई। अब बारबार उसके मनमें ये संकल्प विकल्प उठने लगे कि बाह्य अंगोंके चिह्नोंकी तो बात दूसरी है, इस चित्रकारको गुह्य अंगोंके चिह्नोंका कैसे पता लग गया? न मालूम यह चित्रकार कैसा है?

इधर ज्येष्ठा तो ऐसा विचार कर रही थी, उधर किसी जासूसको भी इस बातका पता लग गया। वह शीघ्र ही भागता भागता महाराजके पास गया और चित्रकारकी सारी बातें महाराज चेटकसे आ कर कहीं।

जासूसके मुखसे यह वृत्तांत सुन राजा चेटक अति कुपित हो गये। कुछ समय पहिले जो राजा चेटक चित्रकार भरतको उत्तम समझते थे वही विचार, चित्रकार जासूसके वचनोंसे उन्हें काच सुवर्ण सरीखा भान पड़ने लगा।

वे विचारने लगे—बड़े खेदकी बात है कि इस नालायक चित्रकारने कुमारी चेलनाका गुप्त स्थानमें स्थित चिह्न कैसे जान लिया ? मैं नहीं जान सकता यह बात क्या हो गई । अथवा ठीक ही है—स्त्रियोंका चरित्र सर्वथा विचित्र है। बड़े बड़े देव भी इसका पता नहीं लगा सकते । अखण्ड ज्ञानके धारक योगी भी स्त्रियोंके चरित्रके पते लगानेमें हैरान हैं तब न कुछ ज्ञानके धारक हम कैसे उनके चरित्रकी सीमा पा सकते हैं ? हाय ! मालूम होता है इस दुष्ट चित्रकारने भोलीभाली कन्या चेलनाके साथ कोई अनुचित काम कर डाला । कुलको कलंकित करनेवाले इस दुष्ट भरतको अब शीघ्र ही सिन्धु देशसे निकाल देना चाहिये । अब क्षणभर भी इसे विशालापुरीमें रहने देना ठीक नहीं ।

इधर महाराज तो चित्रकारके विषयमें यह विचार करने लगे, उधर चित्रकारको कहींसे यह पता लग गया कि महाराज चेटक मुझपर कुपित हो गये हैं, मेरा पूरा पूरा अपमान करना चाहते हैं, वह शीघ्र ही मारे भयके अपना झोली डण्डा ले वहांसे धर भागा और कुछ दिन मंजल दरमंजल तय कर राजगृह नगर आगया ।

राजगृह नगरमें आकर उसने फिरसे चेलनाका चित्रपट बनाया और बड़े विनयसे महाराज श्रेणिकको सभामें आकर उसे भेंट कर दिया ।

महाराज उस समय मगधदेशके अनेक बड़े बड़े पुरुषोंके साथ सिंहासनपर विराजमान थे । उनके चारों ओर कामिनी चमर ढोल रहीं थीं, बन्दीजन उनका यशोगान कर रहे थे । ज्योंही महाराजकी दृष्टि चेलनाके चित्रपर पड़ी, एकदम महाराज चकित रह गये । चेलनाकी मुठवक तसवीर देख उनके मनमें अनेक प्रकारके संकल्प विकल्प उठने लगे । वे विचारने लगे—

इस चेलनाका केशपाश ऐसा जान पड़ता है मानों कामी

पुरुषोंके लिये वह अद्‌भुत जाल है अथवा यों कहिये चूड़ा-मणियुक्त यह केशवेश नहीं है किंतु उत्तम रत्नयुक्त, समस्त जीवोंको भय करनेवाला यह काला नाग है एवं जैसा चन्द्रमा युक्त आकाश शोभित होता है उसी प्रकार गांगेय तिलकयुक्त चेलनाका यह ललाट है और यह जो भ्रूभंगसे इसके ललाटपर ओंकार बन गया है वह ओंकार नहीं है, जगद्विजयी कामदेवका बाण है तथा गायन जिस प्रकार मृगको परवश बना देता है उसी प्रकार इसका कटाक्षविक्षेप कामीजनोंको परवश करनेवाला है।

अहा! इस चेलनाके कानोंमें जो ये दो मनोहर कुण्डल हैं सो कुण्डल नहीं किन्तु इसकी सेवार्थ दो सूर्य चन्द्र हैं। मृगनयनी इस चेलनाके ये कमलके समान फूले हुए नेत्र ऐसे जान पड़ते हैं मानो कामीजनोंको वश करनेवाले मत्र हैं। इस मृगाक्षी चेलनाका मुख तो सर्वथा आकाश ही जान पड़ता है क्योंकि आकाशमें जैसी बादलकी ललाई, चन्द्र आदिकी किरणें एवं मेघकी ध्वनि रहती है वैसी ही इसके मुखमें पानकी तो ललाई है। दांतोंकी किरण चद्रकिरण हैं और इसकी मधुर ध्वनि मेघ-ध्वनि मालूम पड़ती है।

इसकी यह तीन रेखाओंसे शोभित, सोनेके रगकी मनोहर ग्रीवा है। मालूम होता है कोयलने जो जो कृष्णत्व धारण किया है और पुर छोड़ वनमें बसी है सो इस चेलनाके कठके शब्द श्रवणसे ही ऐसा किया है। इस चेलनाके दो स्तन ऐसे जान पड़ते हैं मानों वक्षस्थल रूपी वनमें दो अति मनोहर पर्वत ही हैं। मालूम होता है नहीं तो रोमावलीरूपी तालाबमें कामदेव रूपी हस्ती गोता लगाये बैठा है नहीं तो रोमावलीरूपी भ्रमर पंक्ति कहांसे आई?

इसके कमलके समान कोमल कर अति मनोहर दीख पड़ते

हैं। कटिभाग भी इसका अधिक पतला है। ये इसके कोमल चरणोंमें स्थित नुपुर इसके चरणोंकी विचित्र ही शोभा बना रहे हैं! नहीं मालूम होता ऐसी अतिशय शोभायुक्त यह चेलना क्या कोई किन्नरी है या विद्याधरी है? किंवा रोहिणी है? अथवा कमल निवासिनी कमला है? वा यह इन्द्राणी अथवा कोई मनोहर देवी है अथवा इतनी अधिक रूपवती यह नाग-कन्या वा कामदेवकी प्रिया रति है? अथवा ऐसी तेजस्विनी यह सूर्यकी स्त्री है तथा इस प्रकार कुछ समय अपने मनमें भलेप्रकार विचार कर चेलनाके रूपपर मोहित होकर, महाराजने शीघ्र ही भरत चित्रकारको अपने पास बुलाया और उससे पूछा—

कहो भाई, यह अति सुन्दरी चेलना किस राजाकी तो पुत्री है? किस देश एवं पुरका पालक वह राजा है। क्या उसका नाम है? यह कन्या हमें मिल सकती है या नहीं? यदि मिल सकता है तो किस उपायसे मिल सकती है? ये सब बातें खुलासा रीतिसे शीघ्र मुझे कहो। महाराज श्रेणिकके ऐसे लालसा-भरे वचन सुन भरतने उत्तर दिया—

कृपानाथ! यह कन्या राजा चेटक सिंधु देशमें विशालापुरीका पालन करनेवाला है। यह कन्या आपको मिल तो सकता है किन्तु राजा चेटकका प्रण है कि वह सिवाय जैनीके अपनी कन्या दूसरे राजाको नहीं देता। चेटक जैन धर्मका परम भक्त है इसलिये यदि आप इस कन्याको लेना चाहते हैं तो आप उसके अनुकूल ही उपाय करें।

भरतके ऐसे वचन सुन महाराज, विचार-सागरमें गोता मारने लगे। वे सोचने लगे—यदि राजा चेटकका यह प्रण है कि जैन राजाके अतिरिक्त दूसरेको कन्या न देना तो यह कन्या हमें मिलना कठिन है क्योंकि हम जैन नहीं।

यदि युद्धमार्गसे इसके साथ जबरन विवाह किया जाय तो

भी सर्वथा अनुचित एवं नीतिविरुद्ध है और विवाह इसके साथ करना जरूरी है, क्योंकि ऐसी सुन्दरी की दूसरी जगह मिलनेवाली नहीं किंतु किस उपायसे कन्या मिलेगी, यह कुछ ध्यानमें नहीं आता तथा ऐसा अपने मनमें विचार करते-करते महाराज बेहोश हो गये। चेलना बिना समस्त जगत उन्हें अन्धकारमय प्रतीत होने लगा। यहांतक कि चेलनाकी प्राप्तिका कोई उपाय न समझ उन्होने अपना मस्तक तक भी धुनडाला!

महाराजको इस प्रकार चिंता-सागरमें मग्न एवं दुःखित सुन कुमार अभय उनके पास आये। महाराजकी विचित्र दशा देख कुमार अभय भी चकित रह गये। कुछ समय बाद उन्होंने महाराजसे नम्रतापूर्वक निवेदन किया—

पूज्य पिता! मैं आपका चित्त चितासे अधिक व्यथित देख रहा हूं। मुझे चिंताका कारण कोई भी नजर नहीं आता। पूज्यपाद! प्रजाकी ओरसे आपको चिंता हो नहीं सकती, क्योंकि प्रजा आपके अधीन और भले प्रकार आज्ञा पालन करनेवाली है। कोषबल एव सैन्यबल भी आपको चिन्तत नहीं बना सकता क्योंकि न आपके खजाना कम है और न सेना ही। किसी शत्रुके लिये भी चिन्ता करना आपको अनुचित है क्योंकि आपका कोई भी शत्रु नजर नहीं आता, शत्रु भी मित्र हो रहे हैं।

पूज्यवर! आपकी स्त्रियां भी एकसे एक उत्तम हैं। पुत्र आपकी आज्ञाके भले प्रकार पालक और दास हैं। इसलिये स्त्री-पुत्रोंकी ओरसे भी आपका चित्त चिन्तित नहीं हो सकता। इनके अतिरिक्त और कोई चिन्ताका कारण प्रतीत नहीं होता फिर आप क्यों ऐसे दुःखित हो रहे हैं। कृपाकर शीघ्र ही अपनी चिन्ताका कारण मुझे कहें। मैं भी यथासाध्य उसके दूर करनेका प्रयत्न करूंगा।

कुमार अभयके ऐसे विनयभरे वचन सुन प्रथम तो महाराजने कुछ भी जवाब न दिया। वे सर्वथा चुपकी साध गये, किन्तु जब उन्होंने कुमारका आग्रह विशेष देखा तब वे कहने लगे—

प्यारे पुत्र! चित्रकार भरतने मुझे चेलनाका यह चित्र दिया है। जिस समयसे मैंने चेलनाकी तसवीर देखी है मेरा चित्त अति चंचल हो गया है। इसके विना यह विशाल राज्य भी मुझे जीर्णतृण सरीखा जान पड़ रहा है। इसके पिताकी यह कड़ी प्रतिज्ञा है कि सिवाय जैन राजाके दूसरेको कन्या न देना, इसलिए इसकी प्राप्ति मुझे अति कठिन जान पड़ती है। अब इस कन्याकी प्राप्तिके लिये प्रयत्नशील होना चाहिये, विना इसके मेरा सुखी होना कठिन है।

पिताके ऐसे वचन सुन कुमारने कहा—माननीय पिता! इस जरासी बातके लिए आप इतने अधीर न हों। मैं अभी इसके लिये उपाय करता हूं, यह कौन बड़ी बात है! तथा महाराजको इस प्रकार आश्वासन दे कुमारने शीघ्र ही पुरके बड़े-बड़े जैनी सेठ बुलाये, और उनसे अपने साथ चलनेके लिये कहा, तथा कुमारकी आज्ञानुसार वे सब कुमारके साथ चलनेके लिये राजी भी हो गये।

जब कुमारने यह देखा कि सब सेठ मेरे साथ चलनेके लिये तैयार है, उन्होंने शीघ्र ही महाराज श्रेणिकसे जानेके लिये आज्ञा मांगी तथा हीरा पन्ना मोती माणिक आदि जवाहिरात और अन्य अन्य उपयोगी पदार्थ लेकर, एवं समस्त सेठोंके मुखिया सेठ बनकर कुमार अभयने शीघ्र ही सिंधुदेशकी ओर प्रयाण कर दिया।

मायाचारी संसारमें विचित्र पदार्थ है। जिस मनुष्य पर इसकी कृपा हो जाती है उसके लिये संसारमें बड़ासे बड़ा अहित

करना भी सुलभ होजाता है। मायाचारी निर्भय हो झट अनर्थ कर बैठता है। कुमारने ज्योंही राजगृह नगर छोड़ा मायाके वे भी बड़े भारी सेवक हो गये। मार्गमें जिस नगरको वे बड़ा नगर देखें फौरन वहांपर ठहर जावें और अन्य सेठोंके साथ कुमार भलेप्रकार भगवानकी पूजा करें। एवं त्रिकाल सामायिक और पंचपरमेष्ठी स्तोत्रका पाठ भी करें। क्या मजाल थी जो कोई जरा भी भेद जान जाय!

इस प्रकार समस्त पृथ्वीमडलपर अपने जैनत्वको प्रसिद्ध करते हुवे कुमार कुछ दिन बाद विशालानगरीमें जा पहुंचे और वहांके किसी बागमें ठहर कर खूब जोर शोरसे जिनेद्र भगवानके पूजा महत्म्यको प्रकट करने लगे।

कुछ समय बागमें आरामकर कुमारने उत्तमोत्तम रत्नोंको चुना और कुछ जैन सेठोंको लेकर वे शीघ्र ही राजा चेटककी सभामें गये। महाराज चेटककी सभामें प्रवेशकर कुमारने राजाको विनयभावसे नमस्कार किया तथा उनके सामने भेंट रखकर, उनके साथ मधुर२ वचनालाप कर अपनेको जैनी प्रकट करते हुए कुमारने प्रार्थना की—

राजाधिराज! हम लोग जौंहरी बचे हैं। अनेक देशोंमें भ्रमण करते करते यहां आपहुंचे हैं। हमारी इच्छा है कि हम इस मनोहर नगरमें कुछ दिन ठहरें। हमारे पास मकानका कोई प्रबंध नहीं, कृपाकर आप इस राजमंदिरके पास हमें किसी मकानमें ठहरनके लिये आज्ञा दें।

कुमारका ऐसा अद्भुत वचनालाप एवं विनय व्यवहार देख राजा चेटक अति प्रसन्न हुवे। उन्होंने बिना सोचे समझे ही कुमारको राजमंदिरके पास रहनेकी आज्ञा देदी और कुमार आदिका हृदयसे ज्यादा सन्मान किया।

अब क्या था! राजाकी आज्ञा पाते ही कुमारने शीघ्र ही

अपना सामान राजमंदिरके समीप किसी महलमें मंगा लिया एवं उस मकानमें मनोहर चैत्यालय बनाकर आनन्दपूर्वक बड़े समारोहसे जिन भगवानकी पूजा करनी आरंभ करदी। कभी तो कुमार बड़े बड़े मनोहर स्तोत्रोंमें भगवानकी स्तुति करने लगे और कभी उन सेठोंके साथ जिनेंद्र भगवानकी पूजा करनी आरंभ कर दी।

कभी कभी कुमारको पूजा करते ऐसा आनन्द आगया कि वे बनावटी तौरसे भगवानके सामने नृत्य भी करने लगे और कभी उत्तमोत्तम शब्द करनेवाले बाजे बजाना भी उन्होंने प्रारंभ कर दिये एव कभी कुमार त्रेसठशलाका पुरुषोंके चरित्र वर्णन करनेवाले पुराण वांचने लगे। जिससमय ये समस्त, भगवानकी पूजा स्तुति आदि कार्य करते थे बराबर उनकी आवाज रनवासमें जाती थी, राजमंदिरकी स्त्रियां साफ रीतिसे इनके स्तोत्र आदिको सुनती थीं और मन ही मन इनकी भक्तिकी अधिक तारीफ करती थीं।

किसी समय महाराज चेटककी ज्येष्ठा आदि पुत्रियोंके मनमें इस बातकी इच्छा हुई कि चलो इनको जाकर देखें। ये बड़े भक्त जान पड़ते हैं। प्रतिदिन भावभक्तिसे भगवानकी पूजा करते हैं। तथा ऐसा दृढ़ निश्चय कर वे अपनी सखियोंके साथ किसी दिन कुमार अभय द्वारा बनाये हुवे चैत्यालयमें गईं। और वहां पर चमर चांदनी झालर घण्टा आदि आदि पदार्थोंसे शोभित चैत्यालय देख अति प्रसन्न हुईं तथा कुमार आदिको भगवानकी भक्तिमें तत्पर देख कहने लगीं—

आप लोग श्री जिनदेवकी भक्तिभावसे पूजन एवं स्तुति करते हैं इसलिये आप धन्य हैं। इस पृथ्वीतलपर आप लोगोंके समान न तो कोई भक्त दीख पड़ता और न ज्ञानवान एवं स्वरूपवान भी दीख पड़ता है। कृपाकर आप कहें—कौन तो

आपका देश है ? कौन उस देशका राजा है ? वह किस धर्मका पालन करनेवाला है ? क्या उसकी वय है ? कैसी उसकी सौभाग्य विभूति है ? एवं कौन कौन गुण उत्तमतया मौजूद हैं। राजकन्याओंके मुखसे ऐसे वचन सुन कुमार अभयने मधुर वचनमें उत्तर दिया—

राजकन्याओ ! यदि आपको हमारा सविस्तार हाल जाननेकी इच्छा है तो आप ध्यानपूर्वक सुनें, मैं कहता हूं। अनेक प्रकारके ग्राम पुर एवं बाग बगीचोंसे शोभित, ऊँचे ऊँचे जिनमंदिरोंसे व्याप्त, असंख्याते मुनि एवं यतियोंका अनुपम विहार स्थान, देश तो हमारा मगधदेश है।

मगधदेशमें एक राजगृह नगर है, जो राजगृह नगर बड़े बड़े सुवर्णमय कलशोंसे शोभित; अपनी ऊँचाईसे आकाशको स्पर्श करनेवाले, सूर्यके समान देदीप्यमान अनेक धनिकोंके मंदिर एवं जिनमंदिरसे व्याप्त है। और जहांकी भूमि भांतिभांतिके फलोंसे मनुष्योंके चित्त सदा आनन्दित करती रहती है। उस राजगृह नगरके हम रहनेवाले हैं। राजगृह नगरके स्वामी जो नीतिपूर्वक प्रजा पालन करनेवाले हैं, महाराज श्रेणिक हैं।

राजा श्रेणिक जैनधर्मके परम भक्त हैं अभी उनकी अवस्था छोटी है एवं अनेक गुणोंके भण्डार हैं।

राजकन्याओ ! हम लोग व्यापारी हैं छोटीसी उम्रमें हम चारों ओर भूमण्डल घूम चुके। हरएक कलामें नैपुण्य रखते हैं। हमने अनेक राजाओंको देखा किन्तु जैसी जिनेन्द्रकी भक्ति रूप, गुण, तेज, महाराज श्रेणिकमें विद्यमान है वैसा कहीं पर नहीं क्योंकि ऐसा तो उनका प्रताप है कि जितने भी उनके शत्रु थे, सब अपने मनोहर मनोहर नगरोंको छोड़कर वनमें रहने लगे।

कोषदल भी जैसा महाराज श्रेणिकका है शायद ही किसीका

होगा। हाथी घोड़े पयादे आदि भी उनके समान किसीके भी नहीं। अब हम कहांतक कहैं। धर्मात्मा गुणी प्रतापी जो कुछ हैं सो महाराज श्रेणिक ही हैं।

कुमारके मुखसे महाराज श्रेणिकको ऐसा उत्तम सुन ज्येष्ठा आदि समस्त कन्यायें अति प्रसन्न हुयीं। अब महाराज श्रेणिकके साथ विवाह करनेके लिये हरएकका जी ललचाने लगा। कुमारकी तारीफसे कन्याओंको महाराज श्रेणिकके गुणोंसे परतन्त्र बना दिया। अब वे चुपचाप न रह सकीं। उन्होने शीघ्र ही विनय-पूर्वक कुमारसे कहा—

प्रिय वणिक सरदार! ऐसे उत्तम वरकी हमें किस रीतिसे प्राप्ति हो? न जाने हमारे भाग्यसे इस जन्ममें हमारा कौन वर होगा?

श्रेष्ठिवर्य! यदि किसी रीतिसे आप वहां हमें ले चलें तो मगधेश हमारे पति हो सकते है, दूसरी रीतिसे उनका पति होना असम्भव है, क्योंकि कहां तो महाराज श्रेणिक, और हम कहां? कृपाकर आप कोई ऐसी युक्ति सोचिये जिसमें मगधेश ही हमारे स्वामी हों। याद रखिये जबतक महाराज श्रेणिक हमें न मिलेंगे तबतक न तो हम संसारमें सुखी रह सकेंगी और न हमें निद्रा ही आवेगी। विशेष कहांतक कहा जाय? महाराज श्रेणिकके वियोगमें अब हमें संसार दुःखमय ही प्रतीत होने लगेगा।

कन्याओंके ऐसे लालसाभरे वचन सुन कुमार अति प्रसन्न हुवे। अपने कार्यकी सिद्धि जान मारे हर्षके उनका शरीर रोमाचित हो गया। कन्याओंको आश्वासन दे शीघ्र ही उन्हें वहांसे चम्पत किया और अपने महलसे राजमन्दिर तक कुमारने शीघ्र ही एक सुरंग तैयार करानेकी आज्ञा देदी।

कुछ दिन बाद सुरंग तैयार हो गई। कुमारने सुरंगके

भीतर अपने महलसे राजमहल तक एक रस्सी बंधवा दी और गुप्त रीतिसे कन्याओंके पास भी यह समाचार भेज दिया।

कुमारकी यह युक्ति देख कन्याऐं अति प्रसन्न हुईं। किसी समय अवसर पाकर उन तीनों कन्याओंने सुरंगमे जानेका पूरा२ इरादा कर लिया और वे सुरंगके पास आ गईं किन्तु ज्योंही तीनों सुरंगमें घुसीं सुरंगमें अन्धेरा देख ज्येष्ठा और चन्दना तो एकदम घबड़ा गई। उन्होंमें सोचा—हमें इस मार्गसे जाना योग्य नहीं। क्योंकि प्रथम तो इसमें गाढ़ अन्धकार है इसलिये जाना कठिन है, द्वितीय यदि हमारे पिता सुनेंगे तो हमपर अधिक नाराज होंगे, इसलिये ज्येष्ठा तो अपनी मुद्रिकाका बहाना कर वहांसे लौट आई और चन्दना हारका बहाना करा घर लौटी। अकेली बिचारी चेलना रह गई उसको कुमारने शीघ्र ही खींच लिया और उसे रथमें बिठाकर तत्काल राजगृहनगरकी ओर प्रयाण कर दिया।

विशालानगरीसे जब रथ कुछ दूर निकल आया, कुमारी चेलनाको अपने माता-पिताकी याद आई। वह उनकी याद कर रोदन करने लगी किन्तु कुमार अभयने उसे समझा दिया जिससे उसका रोदन शांत हो गया। एवं वे समस्त महानुभाव कुछ दिन बाद आनन्द पूर्वक मगधदेशमें आ पहुँचे।

किसी दूतके मुखसे महाराजको यह पता लगा कि कुमार आ रहे हैं उनके साथ कुमारी चेलना भी है, शीघ्र ही बड़ी विभूतिसे वे कुमारके सामने आये। कुमारके मुखसे उन्होंने सारा वृत्तांत सुना, कुमारको छातीसे लगा महाराज अति प्रसन्न हुवे।

कुमारके साथ जो अन्यान्य सज्जन थे उनके साथ भी महाराजने अधिक हित दर्शाया। जिस समय मृगनयनी चन्द्रवदनी कुमारी चेलना पर महाराजकी दृष्टि गई तो उस समय तो महाराजके

हर्षका पारावार न रहा। दरिद्रो पुरुष जैसे निधिको देख एक विचित्र आनंदानुभव करने लगता है, चेलनाको देख महाराजकी भी उस समय वैसी ही दशा हो गई।

इस प्रकार कुछ समय वार्तालाप कर सबोंने राजगृह नगरमें प्रवेश किया। महाराजकी आज्ञानुसार कुमारी चेलना सेठ इंद्रदत्तके घर उतारी गई। किसी दिन शुभ मुहर्त एवं लग्नमें महाराजका विवाह हो गया। विवाहके समय समस्त दिशाओंको बधिर करनेवाले बाजे बजने लगे। बन्दीजन महाराजकी उत्तमोत्तम पद्योंमें स्तुति करने लगे।

महाराजके विवाहसे नगर-निवासियोंको अति प्रसन्नता हुई। चेलनाके विवाहसे महाराजने भी अपने जन्मको सफल समझा। विवाहके बाद महाराजने बडे गाजेबाजेके साथ रानी चेलनाको पटरानीका पद दिया। एव राजमदिरमें किसी उत्तम मकानमें रानी चेलनाको ठहराकर प्रीतिपूर्वक महाराज उसके साथ भोग भोगने लगे।

कभी तो महाराजको चेलनाके मुखसे कथा कौतूहल सुन परम सन्तोष होने लगा। कभी महाराजको रानी चेलनाकी हसिनीके समान गति एवं चन्द्रके समान मुख देख अति प्रसन्नता हुई। कभी महाराज चेलनाके हास्योत्पन्न मुखसे सुखी होने लगे। कभी कभी महाराजको रतिजन्य सुख सुखी करने लगा और कभी चेलनाके प्रति अँगकी सुघड़ाई महाराजको सुखी करने लगी।

जिस समय राजा रानी पासमें बैठते थे, उस समय इनमें और इन्द्र इन्द्राणीमें कुछ भी भेद देखनेमें नहीं आता था। ये आनदपूर्वक इन्द्र इन्द्राणीके समान ही भोगविलास करते थे।

रानी चेलना एवं राजा श्रेणिकके शरीर ही भिन्न थे, किन्तु मन उनका एक ही था, लोग ऐसे आपसी घनिष्ट प्रेम देख

दोनोंको सुखकी जोड़ी कहते थे और बराबर दोनोंके पुण्यफलकी प्रशंसा करते थे।

भाग्यकी महिमा अनुपम है। देखो कहां राजा चेटककी पुत्री चेलना और कहां जिनधर्म रहित महाराज श्रेणिक? कहां तो सिन्धुदेशमें विशालापुरी और कहां राजगृह नगर? तथा कहां तो कुमार अभय द्वारा चेलनाका हरण और कहां महाराज श्रेणिकके साथ संयोग?

इसलिये मनुष्यको अपने भाग्यका भी अवश्य भरोसा रखना चाहिये। क्योंकि भाग्यमें पूर्णतया फल एवं अफल देनेकी शक्ति मौजूद है। जीवोंको शुभ भाग्यके उदयसे परमोत्तम सुख मिलते हैं और दुर्भाग्यके उदयसे उन्हें दुःखोंका सामना करना पड़ता है—नरकादि गतियोंमें जाना पड़ता है।

इसप्रकार भविष्यत् कालमें होनेवाले तीर्थंकर पद्मनाभके जीव महाराज श्रेणिकके चरित्रमें चेलनाके साथ विवाह वर्णन करनेवाला आठवां सर्ग समाप्त हुआ।

नवमां सर्ग

राजा श्रेणिकको मुनिराजका समागम

कृतकृत्य समस्त कर्मोंसे रहित होनेके कारण परम पूजनीक सम्यग्दर्शनादि तीनों रत्नत्रयसे भूषित श्री सिद्ध भगवान हमारी रक्षा करें।

इसके अनन्तर रानी चेलना आनन्दपूर्वक महाराज श्रेणिकके साथ भोग भोग रही थी। अचानक ही जब उसने यह देखा कि महाराज श्रेणिकका घर परम पवित्र जैनधर्मसे रहित है। महाराजके घरमें हिंसाको पुष्ट करनेवाले, तीन मूढता सहित, ज्ञान, पूजा आदि आठ अभिमान युक्त, एवं उभय लोकमें दुःख देनेवाले बौद्धधर्मका अधिकतर प्रचार है, तो उसे अति दुःख हुवा। वह सोचने लगी

हाय! पुत्र अभयकुमारने बुरा किया। मेरे नगरमें छलसे जैनधर्मका वैभव दिखा मुझ भोलीभालीको ठग लिया। क्योंकि जिस घरमें श्री जिनधर्मकी भलेप्रकार प्रवृत्ति है, उनके गुणोंका पूर्णतया सत्कार है, वास्तवमें वही घर उत्तम घर है, किन्तु जहां जिनधर्मकी प्रवृत्ति नहीं है वह घर कदापि उत्तम नहीं हो सकता। वह मानिंद पक्षियोंके घोसलेके हैं।

यदि मैं महाराज श्रेणिकके इस अलौकिक वैभवको देख अपने मनको शांत करूं सो भी ठीक नहीं क्योंकि परभवमें मुझे इससे घोरतर दुःखोंकी ही आशा है। अथवा मैं अपने मनको इस रीतिसे बहलाऊं कि महाराज श्रेणिकके घरमें मुझे अनन्यलभ्य भोग भोगनेमें आ रहे हैं, यह भी अनुचित है, क्योंकि ये भोग मानिंद भयंकर भुजंगके मुझे परिणाममें दुःख ही देंगे। भोगोंका फल नरक तिर्यंच आदि गतियोंकी प्राप्ति है।

नरकमें मुझे अवश्य ही आना पड़ेगा। एवं वहां पर घोरतर वेदनाओंका सामना करना पड़ेगा। संसारमें धर्म होवे व धन न होवे तो धर्मके सामने धनका न होना तो अच्छा किन्तु बिना धर्मके अतिशय मनोहर, सांसारिक सुखका केन्द्र, चक्रवर्तीपना भी अच्छा नहीं।

संसारमें मनुष्य विधवापनेको बुरा कहते हैं। किन्तु यह उनकी बड़ी भारी भूल है। विधवापना सर्वथा बुरा नहीं। क्योंकि पति यदि सन्मार्गगामी हो और वह मर जाय तब तो विधवापना बुरा किन्तु पति जीता हो और वह मिथ्यामार्गी हो तो उस हालतमें विधवापना सर्वथा बुरा नहीं है। संसारमें बांझ रहना अच्छा, भयंकर वनका निवास भी उत्तम, अग्निमें जलकर और विष खाकर मर जाना भी अच्छा तथा अजगरके मुखमें प्रवेश और पर्वतसे गिरकर मर जाना भी अच्छा, एवं समुद्रमें डूबकर मर जानेमें भी कोई दोष नहीं, किन्तु जिनधर्म-रहित जीवन अच्छा नहीं।

पति चाहे अन्य उत्तमोत्तम गुणोंका भण्डार हो, यदि वह जिनधर्मी न हो तो किसी कामका नहीं। क्योंकि कुमार्गगामी पतिके सहवाससे उसके साथ भोग भोगनेसे दोनों जन्ममें अनेक प्रकारके दुःख ही भोगने पड़ते हैं। हाय! बड़ा कष्ट है। मैंने पूर्वभवमें ऐसा कौनसा घोर पाप किया था जिससे इस भवमें मुझे जैन धर्मसे विमुख होना पड़ा। हाय! अब मेरा एक प्रकारसे जैन धर्मसे सम्बन्ध छूटसा ही गया। हे दुर्दैव! तूने कब कबके मुझसे बदले लिये।

पुत्र अभयकुमार! क्या मुझे भोली बातोंमें फसाकर ऐसे घोर संकटमें डालना आपको योग्य था? अथवा कवियोंने जो स्त्रियोंको अबला कहकर पुकारा है सो सर्वथा ठीक है। ये बिचारी वास्तवमें अबला ही हैं। बिना समझे बूझे ही दूसरोंकी बात पर झट विश्वास कर बैठती हैं और पीछे पछताती हैं।

दीनबन्धो ! जो मनुष्य प्रियवचन बोल दूसरे भोले जीवोंको ठग लेते हैं, संसारमें कैसे उनका भला होगा ? फुसलाकर दूसरोंको ठगनेवाले संसारमें महापातकी गिने जाते हैं तथा ऐसा चिरकाल पर्यंत विचारकर रानी चेलनाने मौन धारण कर लिया। एवं एकांत स्थानमें बैठ करुणाजनक रुदन करने लगी। रानी चेलनाकी ऐसी दशा देख समस्त सखियां घबड़ा गयीं।

चेलनाकी चिन्ता दूर करनेके लिये उन्होंने अनेक उपाय किये किन्तु कोई भी उपाय सफल न दीख पड़ा। यहां तक कि रानी चेलनाने सखियोंके साथ बोलना भी बंद कर दिया। वह बार२ अपने जीवनकी निन्दा करने लगी। जिनेन्द्र भगवानकी मानसिक पूजा और उनके स्तवनमें उसने अपना मन लगाया। एवं इस दुःखसे जब जब उसे अपने माता पिताकी याद आई तो वह रोने भी लगी।

रानी चेलनाकी चिन्ताका समाचार महाराज श्रेणिकके कान तक पहुंचा, अति व्याकुल हो वे शीघ्र ही चेलनाके पास आये। चेलनाका मौन धारण देख उन्हें अति दुःख हुआ। रानी चेलनाके सामने वे विनयभावसे इसप्रकार कहने लगे—

प्रिये ! आज तुम्हारी यह अचानक दशा क्योंकर हो गई ? जब जब मैं तुम्हारे मन्दिरमें आता था, मैं तुमको सदा प्रसन्न ही देखता था। मैंने आजतक कभी तुम्हारे चित्तपर ग्लानि न देखी। और उस समय तुम मेरा पूरा२ सन्मान भी करती थी, आज तुमने मेरा सन्मान भी बिसार दिया। आजतक मैंने तुम्हारा कोई कहना भी न टाला।

जिस समय मैं तुम्हारा किसी कामके लिये आग्रह देखता था, फौरन करता था तथापि यदि मुझसे तुम्हारी अवज्ञा हो तो क्षमा करो, अब तुम्हारी अवज्ञा न की जायगी। मैं तुम्हारा अब कहना मानूंगा। यदि राजमंदिरमें किसीने तुम्हारा अपराध

किया है, तुम्हारी आज्ञा नहीं मानी है, तो भी मुझे कहो; मैं अभी उसे दंड देनेके लिये तैयार हूँ।

शुभे! मुझसे थोड़ीसी तो बातचीत करो। मैं तुम्हारी ऐसी दशा देखनेके लिये सर्वथा असमर्थ हूँ। तुम्हारी इस अवस्थाने मुझे अर्धमृतक बना दिया है। तुम्हें मैं अपने आधे प्राण समझता हूँ। तू मेरे जीवनरूपी घरके लिये विशाल स्तम्भ है। शुभानने! तेरी दुःखमय अवस्था मुझे भी दुःखमय ही प्रतीत हो रही है। पूर्णचन्द्रानने! तू शीघ्र अपने दुःखका कारण कह। शीघ्र ही अपनी मनोमलिनता दूर कर! और जल्दी प्रसन्न हो।

महाराज श्रेणिकके ऐसे मनोहर वचन सुनकर भी प्रथम तो रानी चेलनाने कुछ भी जवाब न दिया, किन्तु जब उसने महाराजका प्रेम एवं आग्रह अधिक देखा तब वह कहने लगी—

जीवननाथ! इस समय जो आप मुझे चितायुक्त देख रहे हैं इस चिन्ताका कारण न तो आप हैं और न कोई दूसरा मनुष्य है। इस समय मुझे चिंता किसी दूसरे ही कारणसे हो रही है। तथा वह कारण मेरा जैनधर्मका छूट जाना है।

कृपानाथ! जबसे मैं इस राजमंदिरमें आई हूं एक भी दिन मैंने इसमें निर्ग्रंथ मुनिको नहीं देखा! राजमंदिरमें उत्तम धर्मकी ओर किसीकी दृष्टि नहीं। मिथ्याधर्मका अधिकतर प्रचार है। सब लोग बौद्धधर्मको ही अपना हितकारी धर्म मान रहे हैं, किंतु यह उनकी बड़ी भारी भूल है। क्योंकि यह धर्म नहीं कुधर्म है। जीवोंको कदापि इसमें सुख नहीं मिल सकता। रानी चेलनाके ऐसे वचन सुन महाराज अति प्रसन्न हुवे। उन्होंने इसप्रकार गंभीर वचनोंमें रानीके प्रश्नका उत्तर दिया—

प्रिये! तुम यह क्या ख्याल कर रही हो? मेरे राजमंदिरमें सद्धर्मका ही प्रचार है। दुनियामें यदि धर्म है तो यही है।

यदि जीवोंको सुख मिल सकता है तो इसी धर्मकी कृपासे मिल सकता है। देख! मेरे सच्चे देव तो भगवान बुद्ध हैं। भगवान बुद्ध समस्त ज्ञान विज्ञानोंके पारगामी हैं! इनसे बढ़कर दुनियामें कोई देव उपास्य और पूज्य नहीं।

जो उत्तम पुरुष हैं, अपनी आत्माके हितके आकांक्षी हैं उन्हे भगवान बुद्धकी ही पूजा भक्ति एवं स्तुति करनी चाहिये क्योंकि हे प्रिये! भगवान बुद्धकी ही कृपासे जीवोंको सुख मिलते हैं और इन्हीको कृपासे स्वर्ग मोक्षकी प्राप्ति होती है। महाराजके मुखसे इस प्रकार बौद्धधर्मकी तारीफ सुन रानी चेलनाने उत्तर दिया—

प्राणनाथ! आप जो बौद्धधर्मकी इतनी तारीफ कर रहे हैं सो बौद्धधर्म इतनी तारीफके लायक नहीं। उससे जीवोंका जरा भी हित नहीं हो सकता। दुनियामें सर्वोत्तम धर्म जैनधर्म ही है। जैन धर्म छोटे बडे सब प्रकारके जीवोंपर दयाके उपदेशसे पूर्ण है। इसका वर्णन केवली भगवानके केवलज्ञानमें हुआ है। जो भव्य जीव इस परम पवित्र धर्मकी भक्तिपूर्वक आराधना करता है, नियमसे उसे आराधनाके अनुसार फल मिलता है। तथा हे कृपानाथ! इस जैनधर्ममें क्षुधा तृषा आदि अठारह दोषोंसे रहित, समस्त प्रकारके परिग्रहोंसे विनिर्मुक्त, केवलज्ञानी एवं जीवोंको यथार्थ उपदेश दाता तो आप्त कहा गया है। और भलेप्रकार परीक्षित जीव अजीव आस्रव आदि सात तत्व कहे हैं।

प्रमाण नय निक्षेप आदि संयुक्त इन सप्ततत्वोंका वर्णन भी केवली भगवानकी दिव्य ध्वनिसे हुआ है। ये सातों तत्व कथंचित् नित्यत्व और कथंचित् अनित्यत्व इत्यादि अनेक धर्म-स्वरूप हैं। यदि एकांत रीतिसे ये सर्वतत्व सर्वथा नित्य और अनित्य ही माने जायें तो इनके स्वरूपका भले प्रकार परिज्ञान नहीं हो सकता।

और हे स्वामिन्! जो साधु निर्ग्रंथ, उत्तम क्षमा, उत्तम मार्दव आदि उत्तमोत्तम गुणोंके धारी, मिथ्या अन्धकारको हटानेवाले, राग, द्वेष, मोह आदि शत्रुओंके विजयी, बाह्य अभ्यन्तर दोनों प्रकारके तपसे विभूषित भले प्रकार परीषहोंको सहन करनेवाले एवं नग्न दिगम्बर हैं वे इस जैनागममें गुरु माने गये हैं। तथा हे प्रभो! जिससे किसी प्रकारके जीवोंके प्राणोंको त्रास न हो ऐसा इस जैनसिद्धांतमें अहिंसा परमधर्म माना गया है। इसी धर्मकी कृपासे जीवोंका कल्याण हो सकता है।

दयासिंधो! यह थोड़ासा जैनधर्मका स्वरूप मैंने आपके सामने निवेदन किया है। इसका विस्तारपूर्वक वर्णन सिवाय भगवान केवलीके दूसरा कोई नहीं कर सकता। अब आप ही कहें ऐसे परम पवित्र धर्मका किस रीतिसे परित्याग किया जा सकता है? मेरा विश्वास है कि जो जीव इस जैनधर्मसे विमुख एवं घृणा करनेवाले हैं, वे कदापि भाग्यशाली नहीं कहे जा सकते।

रानी चेलनाके मुखसे इस प्रकार जैनधर्मका स्वरूप श्रवण कर महाराज निरुत्तर हो गये। उन्होंने और कुछ न कहकर महारानीसे यही कहा—प्रिये! जो तुम्हें श्रेयस्कर मालूम पड़े वही काम करो किन्तु अपने चित्तपर किसी प्रकारकी ग्लानि न लाओ। मैं यह नहीं चाहता कि तुम किसी प्रकारसे दुःखित रहो।

महाराजके मुखसे ऐसा अनुकूल उत्तर पा रानी चेलना अति प्रसन्न हुई। अब रानी चेलना निर्भय हो जैनधर्मका आराधन करने लगी। कभी तो रानी चेलनाने भक्तिभावसे भगवानकी पूजन करनी प्रारम्भ कर दी और कभी वह अष्टमी चतुर्दशी आदि पर्वोंमें उपवास और रात्रिजागरण भी करने लगी। तथा नृत्य और उत्तमोत्तम गद्यपद्यमय गायनोंसे भी उसने भगवानकी स्तुति करनी प्रारम्भ कर दी।

जैन शास्त्रोंका वह प्रतिदिन स्वाध्याय करने लगी। रानी चेलनाको इस प्रकार धर्मपर आरूढ़ देख समस्त रनवास उसके धर्मात्मापनेकी तारीफ करने लगा। यहांतक कि गिनतीके ही दिनोंमें रानी चेलनाने समस्त राजमन्दिर जैनधर्ममय कर दिया।

कदाचित् बौद्ध साधुओंको यह पता लगा कि रानी चेलना जैनधर्मकी परम भक्त है, राजमन्दिरको उसने जैनधर्मका परम भक्त बना दिया और नगर एवं देशमें वह जैनधर्मके प्रचारार्थ शक्तिभर प्रयत्न कर रही है, वे शीघ्र ही दौड़ते दौड़ते राजा श्रेणिकके पास आये और क्रोधमें आकर महाराज श्रेणिकसे इस प्रकार कहने लगे—

राजन्! हमने सुना है कि रानी चेलना जैन धर्मकी परम भक्त है। वह बौद्ध धर्मको एक घृणित धर्म मानती है, बौद्ध धर्मको धरातलमें पहुँचानेके लिये वह पूरा पूरा प्रयत्न भी कर रही है। यदि यह बात सत्य है तो आप शीघ्र ही इसके प्रतिकारार्थ कोई उपाय सोचें, नहीं तो बड़े भारी अनर्थकी सम्भावना है।

बौद्ध गुरुओंके ऐसे वचन सुन महाराजने और तो कुछ भी जबाव न दिया, केवल यही कहा—पूज्यवरो! रानीको मैं बहुत कुछ समझा चुका, उसके ध्यानमें एक भी बात नहीं आती। कृपाकर आप ही उसके पास जांय और उसे समझावें। यदि आप इस बातमें विलम्ब करेंगे तो याद रखिये बौद्ध धर्मकी अब खैर नहीं। अवश्य रानी बौद्ध धर्मको जड़से उड़ानेके लिये पूरा२ प्रयत्न कर रही है।

महाराजके ऐसे वचनोंने बौद्ध गुरुओंके चित्तपर कुछ शांतिका प्रभाव डाल दिया। उन्हें इस बातसे सर्वथा दिलजमई हो गई कि चलो राजा तो बौद्धधर्मका भक्त है तथा उन्होंने शीघ्र ही राजासे कहा—

राजन्! आप खेद न करें। हम अभी रानीको आकर समझाते हैं। हमारे लिये यह बात कौन कठिन है? क्योंकि हम पिटकत्रय आदि अनेक ग्रंथोंके भले प्रकार ज्ञाता हैं, हमारी जिह्वा सदा अनेक शास्त्रोंका रंगस्थल बनी रहती है। और भी अनेक विद्याओंके हम पारगामी हैं तथा ऐसा कहकर वे शीघ्र ही रानी चेलनाके पास आये और इसप्रकार उपदेश देने लगे—

चेलने! हमने सुना है कि तू जैन धर्मको परम पवित्र धर्म समझती है और बौद्ध धर्मसे घृणा करती है सो यह तेरा विचार सर्वथा अयोग्य है। तू यह निश्चय समझ कि संसारमें जीवोंका हित करनेवाला है तो बौद्धधर्म ही है, जैन धर्मसे कदापि जीवोंका कल्याण नहीं हो सकता। देख! ये जितने दिगम्बर मतके अनुयायी साधु हैं सो पशुके समान हैं, क्योंकि पशु जिसप्रकार नग्न रहता है उसी प्रकार ये भी नग्न फिरते रहते हैं। आहारके न मिलनेसे पशु जैसा उपवास करता है इसी प्रकार ये भी आहारके अभावसे उपवास करते हैं तथा पशुके समान ये अविचारित और ज्ञान विज्ञान रहित भी हैं।

और हे रानी! दिगम्बर साधु जैसे इस भवमें दीन दरिद्री रहते हैं, परजन्ममें भी इनकी यही दशा रहती है, परजन्ममें भी इन्हें किसी प्रकारके वस्त्र भोजनोंकी प्राप्ति नहीं होती। वर्तमानमें जो दिगम्बर मुनि क्षुधा तृषा आदिसे व्याकुल दीखते हैं, परजन्ममें भी नियमसे ये ऐसे ही व्याकुल रहेंगे इसमें कोई सन्देह नहीं।

तथा हे रानी! क्षेत्रमें बीज बोनेपर जैसा तदनुरूप फल उत्पन्न होता है उसी प्रकार समस्त संसारी जीवोंकी दशा है। वे जैसा कर्म करते हैं नियमसे उन्हें भी वैसा ही फल मिलता है। याद रक्खो, यदि तुम इन भिक्षुक दरिद्र दिगम्बर मुनियोंकी सेवा शुश्रूषा करोगी तो तुम्हें भी इन्हींके समान परभवमें दरिद्र एवं भिक्षुक होना पड़ेगा।

इसलिये अनेक प्रकारके भोग भोगनेवाले, वस्त्र आदि पदार्थोंसे सुखी, बौद्ध साधुओंकी ही तू भक्तिपूर्वक सेवा कर। इन्हें ही अपना हितैषी मान जिससे परभवमें भी तुझे अनेक प्रकारके भोग भोगनेमें आवें। पतिव्रते! अब तुझे चाहिये कि तू शीघ्र ही अपने चित्तसे जैन मुनियोंकी भक्ति निकाल दे। बुद्धिमान् लोग कल्याण मार्गगामी होते हैं। सच्चा कल्याणकारी मार्ग भगवान बुद्धका ही है। बौद्धगुरुओंका ऐसा उपदेश सुन रानी चेलनासे न रहा गया तथा बड़ी गम्भीरता एवं सभ्यतासे उसने शीघ्र ही पूछा—

बौद्ध गुरुओ! आपका उपदेश मैंने सुना किन्तु मुझे इस बातका सदेह रह गया कि आप यह बात कैसे जानते हैं कि दिगम्बर मुनियोंकी सेवासे परभवमें क्लेश भोगने पड़ते हैं, दीन दरिद्र होना पड़ता है, और बुद्ध गुरुओंकी सेवासे यह एक भी बात नहीं होती? बौद्ध गुरुओंकी सेवासे मनुष्य परभवमें सुखी रहते है? इत्यादि कृपाकर मुझे शीघ्र कहें।

रानीके इन वचनोंको सुन बौद्ध गुरुओंने कहा–चेलने! तुम्हें इस बातमें सन्देह नहीं करना चाहिये। हम सर्वज्ञ हैं। पर–भवकी बात बताना हमारे सामने कोई बड़ी बात नहीं। हम विश्वभरकी बातें बता सकते हैं। बौद्धगुरुओंके ऐसे वचन सुन रानी चेलनाने कहा—

बौद्ध गुरुओ! यदि आप अखण्ड ज्ञानके धारक सर्वज्ञ हैं तो मैं कल आपको भक्तिपूर्वक भोजन कराकर आपके मतको ग्रहण करूगी। आप इस विषयमें जरा भी सन्देह न करें।

रानीके मुखसे ये वचन सुन बौद्धगुरुओंको परम संतोष हो गया। हर्षितचित्त हो वे शीघ्र ही महाराजके पास आये और सारा समाचार महाराजको कह सुनाया। बौद्ध गुरुओंके मुखसे रानीका इस प्रकार विचार सुन महाराज भी अति प्रसन्न

हुये। उन्हें भी पूरा विश्वास हो गया कि अब रानी जरूर बौद्ध बन जायगी तथा रानीकी भांति भांतिसे प्रशंसा करते हुये महाराज शीघ्र ही उसके पास गये और उसके मुखपर भी इस प्रकारकी प्रशंसा करने लगे—

प्रिये! आज तुम धन्य हो कि गुरुओंके उपदेशसे तुमने बौद्धधर्म धारण करनेकी प्रतिज्ञा करली। शुभे! तुम ध्यान रक्खो, बौद्धधर्मसे बढ़कर दुनियांमें कोई भी धर्म हितकारी नहीं। आज तेरा जन्म सफल हुआ। अब तुम्हें जिस बातकी अभिलाषा हो शीघ्र कहो, मैं अभी उसे पूर्ण करनेके लिये तैयार हूं तथा इस प्रकार कहते कहते महाराजने रानी चेलनाको उत्तमोत्तम पदार्थ बनानेकी शीघ्र ही आज्ञा दे दी।

महाराजकी आज्ञा पाते ही रानी चेलनाने शीघ्र ही भोजन करना प्रारम्भ कर दिया। लाडू खाजे आदि उत्तमोत्तम पदार्थ तत्काल तैयार हो गये। जिस समय महाराजने देखा कि भोजन तैयार है शीघ्र ही उन्होंने बड़े विनयसे गुरुओंको बुलावा भेज दिया और राजमंदिरमें उनके बैठनेके स्थानका शीघ्र प्रबन्ध भी करा दिया।

गुरुगण इस बातकी चिंतामें बैठे ही थे कि कब निमंत्रण आवे और कब हम राजमंदिरमें भोजनार्थ चलें। ज्योंहि निमंत्रण समाचार पहुँचा कि शीघ्र ही सबोंने अपने वस्त्र पहिने और राजमंदिरकी ओर चल दिये।

जिस समय राजमंदिरमें प्रवेश करते रानी चेलनाने उन्हें देखा तो उनका बड़ा भारी सन्मान किया व उनके गुणोंकी प्रशंसा की एवं जब वे बौद्धगुरु अपने अपने स्थानोंपर बैठ गये तब रानी चेलनाने नम्रतासे उनका पादप्रक्षालन किया तथा उनके सामने उत्तमोत्तम सुवर्णमय थाल रखकर भांति-भांतिके लाडू, खीर, श्रीखंड राजाओंके खाने योग्य भात, मूंगके लाडू

इत्यादि स्वादिष्ट पदार्थोंको परोस दिया और भोजनके लिये प्रार्थना भी कर दी।

रानीकी प्रार्थना सुनते ही गुरुओंने भोजन करना प्रारम्भ कर दिया। कभी तो वे खीर खाने लगे और कभी उन्होंने लाडूओंपर हाथ जमाया। भोजनको उत्तम एवं स्वादिष्ट समझे वे मन ही मन अति प्रसन्न होने लगे और बारबार रानीकी प्रशंसा करने लगे।

जिस समय रानीने बौद्ध गुरुओंको भोजनमें अति मग्न देखा तो शीघ्र ही उसने अपनी प्रिय दासीको बुलाया और यह आज्ञा दी कि तू अभी राजमन्दिरमें दरवाजे पर जा और गुरुओंके बायें पैरोंके जूते लाकर शीघ्र उनके छोटे-छोटे टुकड़े कर मुझे दे।

रानीकी आज्ञा पाते ही दूती चलदी। उसने वहांसे जूता लाकर और उनके महीन टुकड़े कर शीघ्र ही रानीको देदिये। तथा रानीने उन्हें शीघ्र ही किसी निकृष्ट छांछमें डाल दिया एवं उनमें खूब मसाला मिलाकर शीघ्र ही थोड़ा-थोड़ाकर गुरुओंके सामने परोस दिया।

जिस समय मधुर भोजनोंसे उनकी तबियत अकुला गई तब उन्होंने यह समझा कि कोई अद्‌भुत चटपटी चीज है, शीघ्र ही उन छाछमिश्रित टुकड़ोंको खागये। एवं भोजनके अंतमें रानी द्वारा दिये तांबूल इलायची आदि चीजोंको खाकर और सबके सब रानीके पास आकर इस प्रकार उसे उपदेश देने लगे—

सुन्दरि! देख, तेरी प्रार्थनासे हम सबोंने राजमन्दिरमें आकर भोजन किया है। अब तू शीघ्र ही बौद्धधर्मको धारण कर शीघ्र ही अपनी आत्मा बौद्धधर्मकी कृपासे पवित्र बना। अब तुझे जैनधर्मसे सर्वथा सम्बन्ध छोड़ देना चाहिये।

बौद्ध गुरुओंका ऐसा उपदेश सुन रानीने विनयसे उत्तर दिया—श्रीगुरुओ! आप अपने स्थानोंपर आकर विराजें, मैं

आपके यहां आऊंगी और वहींपर बौद्धधर्म धारण करूंगी। इस विषयमें आप जरा भी संदेह न करें।

रानी चेलनाके ऐसे विनयवचन सुन वे सब गुरु अति प्रसन्न हुए और अपने मठोंको चल दिये।

जिस समय वे दरवाजेपर आये और ज्योंही उन्होंने अपने बांये पैरके जूतोंको न देखा वे एकदम घबड़ा गये। आपसमें एक दूसरेका मुंह ताकने लगे एवं कुछ समय इधर उधर अन्वेषण कर वे शीघ्र ही रानीके पास आये और रानीसे जूतोंकी बावत कहा एवं रानीको डपटने भी लगे कि तुझे गुरुओंके साथ हंसी नहीं करनी चाहिये।

बौद्ध गुरुओंका यह चरित्र देख रानी हंसने लगी। उसने शीघ्र ही उत्तर दिया—गुरुओ! आप तो इस बातकी डींग मारते थे कि हम सर्वज्ञ हैं, अब आपका वह सर्वज्ञपना कहां जाता रहा? आप ही अपने ज्ञानसे जानें कि आपके जूते कहां है? रानीके ऐसे वचन सुन बौद्धगुरु बड़े छके। उनके चेहरोंसे प्रसन्नता तो कोसों दूर किनारा कर गई। अब रानीके सामने उनसे दूसरा तो कोई बहाना न बन सका किंतु लाचारीसे यही जवाब देना पड़ा—

सुन्दरि! हम लोगोंमें ऐसा ज्ञान नहीं कि हम इस बातको जान लें कि हमारे जूते कहां है। कृपाकर आप ही हमारे जूते बता दीजिये।

बौद्धगुरुओंके ऐसे वचन सुन रानी चेलनाका शरीर क्रोधके भभक उठा। कुछ समय पहिले जो वह अपने पवित्र धर्मकी निन्दा सुन चुकी थी, उस निन्दाने उसे और भी क्रोधित बना दिया। बौद्धगुरुओंको बिना जवाब दिये उससे नहीं रहा गया। वह कहने लगी—

बौद्धगुरुओ ! जब तुम जिनधर्मका स्वरूप नहीं जानते तो तुम्हें उसकी निन्दा करना सर्वथा अनुचित था। बिना समझे बोलनेवाले मनुष्य पागल कहे जाते हैं। तुम लोग कदापि गुरुपदके योग्य नहीं हो किन्तु भोलेभाले प्राणियोंके वंचक, असत्यवादी, मायाचारी एवं पापी हो।

रानीके मुखसे ऐसे कटुक वचन सुनकर भी बौद्ध गुरुओंके मुखसे कुछ भी जवाब न निकला। वे बारबार उनसे यही प्रार्थना करने लगे—कृपया आप हमारे जूते देदें कि जिससे हम आनंदपूर्वक अपने अपने स्थानपर चले जांय। इस प्रकार बौद्धधर्मगुरुओंकी जब प्रार्थना विशेष देखी तो रानीने जवाब दिया—

बौद्धगुरुओ! आपकी चीज आपके ही पास है और इस समय भी वह आपके ही पास है। आप विश्राम रक्खें, आपकी चीज किसी दूसरेके पास नहीं। रानी चेलनाके ये वचन सुन तो बौद्ध गुरु बड़े बिगड़े। वे कुपित हो इस प्रकार रानीसे कहने लगे—

रानी, यह तू क्या कहती है! हमारी चीज हमारे पास है, भला बता तो वह चीज कहां है? क्या हमने उसे चबाली! तुझे हम साधुओंके साथ कदापि ऐसा व्यवहार नहीं करना चाहिये। गुरुओंके ऐसे वचन सुन रानीने जवाब दिया—

गुरुओ! आप घबड़ायें न, यदि आपकी चीज आपके पास होगी तो मैं अभी उसे निकाल कर देती हूँ। रानीके इन वचनोंने बौद्ध साधुओंको बुद्धिहीन बना दिया। वे बार बार सोचने लगे कि यह रानी क्या कहती है? यह बात क्या हो गई? मालूम होता है इस निर्दय रानीने हमें जूतोंका भोजन करा दिया तथा ऐसा विचार करते करते उन्होंने शीघ्र ही क्रोधसे वमन कर दिया।

फिर क्या था? जूतोंके टुकडे तो उनके पेटमें अभी विराज-

मान ही थे। ज्योंही वमनमें उन्होंने जूतोंके टुकड़े देखे उनके सारे होश किनारा कर गये। अब वे बारबार रानीकी निन्दा करने लगे, तथा रानी द्वारा किये हुवे पराभवसे लज्जित एवं राजमन्दिरमें अति अनादरको पा, वे चुपचाप अपने अपने स्थानोंको चले गये। रानीके सामने उनके ज्ञानकी कुछ भी तीन पांच न चली।

कदाचित् राजगृह नगरमें एक विशाल बौद्ध साधुओंका संघ आया। संघके आगमनका समाचार एवं प्रशंसा महाराजके कानोंमें भी पड़ी। महाराज अति प्रसन्न हो शीघ्र ही रानी चेलनाके पास गये और उन साधुओंकी प्रशंसा करने लगे—

प्रिये! मनोहरे! हमारे गुरु अतिशय ज्ञानी हैं। तपकी उत्कृष्ट मामाको प्राप्त हैं। समस्त संसार उनके ज्ञानमें झलकता है और परम पवित्र हैं। मनोहरे! जब कोई उनसे किसी प्रकारका प्रश्न करता है तो वे ध्यानमें अतिशय लीन होनेके कारण बड़ी कठिनतासे उसका जवाब देते हैं। एव वास्तविक तत्वोंके उपदेशक हैं और देदीप्यमान शरीरसे शोभित हैं। महाराजके मुखसे इस प्रकार बौद्ध साधुओंकी प्रशंसा सुन रानी चेलनाने विनयसे उत्तर दिया—

कृपानाथ! यदि आपके गुरु ऐसे पवित्र एवं ध्यानी हैं तो कृपाकर मुझे भी उनके दर्शन कराइये, ऐसे परम पवित्र महात्माओंके दर्शनसे मैं भी अपने जन्मका पवित्र करूगी, आप इस बातका विश्वास रक्खें, यदि मेरी निगाहपर बौद्धधर्मका सचापन जमगया और वे साधु सच्चे निकले तो मैं तत्काल बौद्धधर्मको धारण कर लूंगी।

मुझे इस बातका कोई आग्रह नहीं कि मैं जैन धर्मकी ही भक्त बनी रहूं, परन्तु बिना परीक्षा किये दूसरेके कथन मात्रसे मैं जैन धर्मका परित्याग नहीं कर सकती। क्योंकि हेयोपादेयके

जानकार जो मनुष्य बिना समझे बूझे दूसरेके कथनमात्रसे उत्तम मार्गको छोड़ दूसरे मार्ग पर चल पड़ते हैं वे शक्तिहीन मूर्ख कहे जाते हैं और किसी प्रकार भी वे अपनी आत्माका कल्याण नहीं कर सकते।

महाराणीके ऐसे निष्पक्ष वचनोंसे महाराजको रानीका चित्त कुछ बौद्ध धर्मकी ओर खिंचा हुवा दिख पड़ा। रानीके कथनानुसार उन्होंने शीघ्र ही मण्डप तैयार कराया। और वह ग्रामके बाहिर बातकी बातमें बनकर तैयार हो गया।

मण्डप तैयार होने पर इधर बौद्ध गुरुओंने तो मण्डपमें समाधि लगाई। दृष्टि बन्द कर, श्वास रोककर, काष्ठकी पुतलीके समान वे बैठ गये। उधर रानीको भी इस बातका पता लगा। वह शीघ्र पालकी तैयार कराकर उनके दर्शनार्थ आई। एवं किसी बौद्धगुरुसे बौद्धधर्मकी बाबत जाननेके लिये वह प्रश्न भी करने लगी—

रानीके प्रश्नको भलेप्रकार सुनकर भी किसी भी बौद्धगुरुने उत्तर नहीं दिया किन्तु पास ही एक ब्रह्मचारी बैठा था उसने कहा—मातः! यह समस्त साधुवृन्द इस समय ध्यानमें लीन हैं। समस्त साधुओंकी आत्मा इस समय सिद्धालयमें विराजमान हैं। देह युक्त भी इस समय ये सिद्ध हैं इसलिये इन्होंने आपके प्रश्नका जवाब नहीं दिया है।

ब्रह्मचारीके ऐसे वचन सुन रानी चेलनाने और तो कुछ भी जवाब न दिया, उन्हें मायाचारी समझ, मायाको प्रकट करनेके लिये उसने शीघ्र ही मण्डपमें आग लगा दी और उनका दृश्य देखनेके लिये एक ओर खड़ी हो गई एवं कुछ समय बाद राजमन्दिरमें आ गई।

फिर क्या था? अग्नि लगते ही बौद्धगुरुओंका ध्यान न जानें यहां किनारा कर गया। कुछ समय पहिले जो निश्चल

ध्यानारूढ़ बैठे थे वे अब इधर उधर व्याकुल हो दौड़ने लगे और रानीका सारा कृत्य उन्होंने महाराजको आ सुनाया।

बौद्धगुरुओंके ये वचन सुन अबके तो महाराज कुपित हो गये। वे यह समझे कि रानीने बड़ा अनुचित काम किया, शीघ्र ही उसके पास आये और इस प्रकार कहने लगे—

सुन्दरि! मण्डपमें जाकर तूने यह अति निंद्य एवं नीच काम क्यों कर दिया! अरे! यदि तेरी बौद्धधर्म पर श्रद्धा नहीं है, बौद्ध साधुओंको तू ढोंगी समझती है तो तू उनकी भक्ति न कर। यह कौन बुद्धिमानी थी कि मण्डपमें आग लगा तूने उन बिचारोंके प्राण लेने चाहे?

कांते! जो तू अपनेको जैनी समझ जैन धर्मकी डींग मार रही है सो यह तेरी डींग अब सर्वथा व्यर्थ मालूम पड़ती है क्योंकि जैनसिद्धान्तमें धर्म दयाप्रधान माना गया है। दया उसीका नाम है जो एकेंद्रियसे पंचेंद्रियपर्यंत जीवोंकी प्राणरक्षा की जाय किन्तु [illegible] इस दुष्ट बर्तावसे उस दयामय धर्मका पालन कहां हो सक[illegible] तूने एकदम पंचेन्द्रिय जीवोंके प्राण विघातके लिये [illegible] बाड़ा, यह बड़ा अनर्थ किया। अब तेरा "हम[illegible], [illegible] जैन हैं" यह कहना आलाप मात्र है। इस [illegible]ओंमेंसे तुझे कोई जैनी नहीं बतला सकता। महाराजको इस [illegible] करती [illegible]पित देख रानी चेलनाने बड़ी विनय एवं शांति[illegible] शीघ्र ही [illegible]निवेदन किया—

कृपा[illegible]त:! आप[illegible] क्षमा करें। मैं एक विचित्र आख्यायिका सु[illegible] करने [illegible]पया ध्यानपूर्वक सुनें और मेरा इस कार्यमें कि[illegible]ीके [illegible] हुआ उसपर विचार करें।

[illegible] पहुँचाई [illegible] मनोहर मनोहर गांवोंसे शोभित, धनिक: एवं [illegible]ई। प्रथम [illegible] एक वत्स देश है। वत्सदेशमें एक कौशांबी

नगरी है जो कौशांबी उत्तमोत्तम बाग बगीचोंसे, देवतुल्य मनुष्योंसे स्वर्गपुरीकी शोभाको धारण करती है। कौशांबीपुरीका स्वामी जो नीतिपूर्वक, प्रजापालक, कल्पवृक्षके समान दाता था, राजा वसुपाल था।

राजा वसुपालकी पटरानीका नाम अश्विनी था। रानी अश्विनी स्त्रियोंके प्रधान गुणोंकी आकर, मृगनयना, चन्द्रवदना एवं रमणीरत्न थी। कौशांबीपुरीमें कोई सागरदत्त नामका सेठ रहता था। सागरदत्त अपार धनका स्वामी था। अनेक गुणयुक्त होनेके कारण वह राजमान्य था और विद्वान् था।

सागरदत्तकी स्त्रीका नाम वसुमती था। वसुमती रात्रिविकसी कमलोंको चाँदनीके समान सदा सागरदत्तके मनको प्रसन्न करती रहती थी, मुखसे चन्द्रशोभाको भी नीचे करनेवाली थी एवं प्रत्येक कार्यको विचारपूर्वक करती थी।

उसी समय कौशांबीपुरीमें सुभद्रदत्त नामका सेठ भी निवास करता था। सुभद्रदत्त सागरदत्तके समान ही धनी था, धर्मात्मा एवं अनेक गुणोंका भंडार था। सेठ समुद्रदत्त[illegible] प्रिय भार्या सागरदत्ता थी जो कि अतिशय रूपवती एवं [illegible] थी।

कदाचित् सेठ सागरदत्त और सुभद्रदत्त [illegible] एक स्थानमें बैठे थे। परस्परमें और भी स्नेह [illegible] सेठ [illegible] आप [illegible]उसने सागरदत्तसे कहा—

प्रिय सागरदत्त! आप एक काम करें [illegible] आपके पुत्र और मेरे पुत्री अथवा मेरे पुत्र और [illegible] ने और तो [illegible] उन दोनोंका आपसमें विवाह कर देना चा[illegible]को प्रकट [illegible] और आपका स्नेह दिनोंदिन बढ़ता ही च[illegible] और उन [illegible] ये वचन सुन सागरदत्तने कहा—जो आप [illegible] समय [illegible] मंजूर है। मैं आपके वचनोंसे बाहिर नहीं [illegible]

कुछ दिन बाद सेठ सागरदत्तके भाग्य[illegible]का ध्यान [illegible] कि [illegible] जो निश्चय[illegible]

सर्पकी आकृतिका धारक एवं-भयावह था, उत्पन्न हुआ और उसका नाम वसुमित्र रक्खा गया, तथा सेठ सुभद्रदत्तकी सेठानी सागरदत्तासे एक पुत्री उत्पन्न हुई जो पुत्री चन्द्रवदना, मनोहरा सुवर्णवर्णा एवं अनेक गुणोंकी आकर थी और उसका नाम नागदत्ता रक्खा गया। कदाचित् कुमार कुमारीने यौवन अवस्थामें पदार्पण किया। इन्हें सर्वथा विवाहके योग्य जान बड़े समारोहसे दोनोंका विवाह किया गया। एवं विवाहके बाद वे दोनों दंपती सांसारिक सुखका अनुभव करने लगे।

माताका पुत्रीपर अधिक प्रेम रहता है। यदि पुत्री किसी कष्टमय अवस्थामें हो तो माता अति दुःख मानती है। कदाचित् पुत्री नागदत्तापर सागरदत्ताकी दृष्टि पड़ी। उसे हार आदि उत्तमोत्तम भूषणोंसे भूषित, कमलाक्षी, कनकवर्णा देख वह इस प्रकार मन ही मन रोदन करने लगी—

पुत्री! कहां तो तेरा मनोहर रूप, सौभाग्य, उत्तम कुल, एव मनोहर गति और कहां भयकर शरीरका धारक, हाथ पैर रहित एवं अशुभ तेरा पति? हाय दुर्दैव! तुझे सहस्रवार धिक्कार है। तूने क्या जानकर यह संयोग मिलाया, अथवा ठीक है—तेरी गति विचित्र है। बड़े बड़े देव भी तेरी गतिके पते लगानेमें हैरान हैं, तब हम कौन चीज़ हैं! विचारा तो कुछ और था, हो कुछ और हो गया! माताको इस प्रकार रोदन करती देख पुत्री नागदत्ताका भी चित्त पिघल गया। उसने शीघ्र ही विनयसे सांत्वनापूर्वक कहा—

मातः! आज क्या हुआ, तू मुझे देख अचानक ही क्योंकर विलाप करने लगगई? कृपाकर इसका कारण शीघ्र मुझे कह—

पुत्रीके इन विनयवचनोंने तो सागरदत्ताके रोदनमें और सहायता पहुंचाई—अब उसकी आंखोंसे अविरल आंसुओंकी झड़ी लग गई। प्रथम तो उसने नागदत्ताके प्रश्नका कुछ भी जवाब न

दिया, किंतु जब उसने नागदत्ताका अधिक आग्रह देखा तो बड़े कष्टसे यह कहने लगी—

पुत्री! मुझे और किसीकी ओरसे दुःख नहीं किंतु इस युवा अवस्थामें तुझे पतिजन्य सुखसे सुखी न देख मैं रोती हूं। यदि तेरा पति कुरूप भी होता पर मनुष्य, तो मुझे कुछ दुःख न होता परन्तु तेरा पति नाग है। वह न कुछ कर सकता और न धर ही सकता है इसलिये मेरे चित्तको अधिक सन्ताप है। माताके ये वचन सुन प्रथम तो नागदत्ता हँसने लगी, पश्चात् उसने विनयसे कहा—

मातः! तू इस बातके लिये जरा भी खेद मत कर। यदि तू नहीं मानता है तो मैं अपना सारा हाल तुझे सुनाती हूँ। तू ध्यानपूर्वक सुन—

मेरे शयनागारमें एक सन्दूक रक्खी रहती है। जिस समय दिन हो जाता है उस समय तो मेरा पति नाग बन जाता है और दिनभर नागरूपमें मेरे साथ खेल किल्लोल करता है और जब रात हो जाती है तो वह उस सन्दूकसे निकल उत्तम मनुष्याकार बन जाता है एवं मनुष्य रूपमें रातभर मेरे साथ भोग भोगता है। पुत्रीके मुखसे यह विचित्र घटना सुन सागरदत्ता आश्चर्य करने लगी। उसने शीघ्र ही नागदत्तासे कहा—

नागदत्ते! यदि यह बात सत्य है तो तू एक काम कर। उस सदूकको तू किसी परिचित एवं अपने अभीष्ट स्थानमें रख और यह वृत्तांत मुझे दिखा, तब मैं तेरी बात मानूंगी।

पुत्री नागदत्ताने अपनी माताकी आज्ञा स्वीकार कर ली तथा किसी निश्चित दिन नागदत्ताने उस संदूकको ऐसे स्थानपर रख दिया जो स्थान उसकी माका भी भलेप्रकार परिचित था और माको इशारा कर वह मनुष्याकार अपने पतिके साथ भोग भोगने लगी।

बस फिर क्या था—हे महाराज ! जिस समय सागरदत्तने उस संदूकको खुला देखा, तो उसने उसे खोलकर शीघ्र उड़ा दिया और वह वसुमित्र फिर सदाके लिये मनुष्याकार बन गया। उसी प्रकार हे दीनबन्धो ! किसी ब्रह्मचारीसे मुझे यह बात मालूम हुई कि बौद्ध गुरुओंकी आत्मा इस समय मोक्षमें हैं, ये इनके शरीर इस समय खोखले पड़े हैं, मैंने यह जान कि बौद्धगुरुओंको अब शारीरिक वेदना न सहनी पड़े, आग लगा दी क्योंकि इस बातको आप भी जानते हैं कि जबतक आत्माके साथ इस शरीरका सम्बन्ध रहता है तबतक अनेक प्रकारके कष्ट उठाने पड़ते हैं, किन्तु ज्योंही शरीरका सम्बन्ध छूटा त्योंही सब दुःख भी एक ओर किनारा कर जाते हैं। फिर वे आत्मासे कदापि सम्बन्ध नहीं करने पाते।

नाथ ! शरीरके सर्वथा जल जानेसे अब समस्त गुरु सिद्ध हो गये। यदि उनका शरीर कायम रहता तो उनकी आत्मा सिद्धालयसे लौट आती और संसारमें रहकर अनेक दुःख भोगती क्योंकि संसारमें जो इन्द्रियजन्य सुख भोगनेमें आते हैं उनका प्रधान कारण शरीर है।

यह बात अनुभवसिद्ध है कि एकेन्द्रिय सुखसे अनेक कर्मोंका उपार्जन होता है और कर्मोंसे नरकादि गतियोंमें घूमना पड़ता है, जन्म मरण आदि वेदना भोगनी पड़ती है इसलिए मैंने तो उन्हें सर्वथा दुःखसे छुड़ानेके लिये ऐसा किया था।

नरनाथ ! आप स्वयं विचार करें, इसमें मैंने क्या जैन धर्मके विरुद्ध अपराध कर दिया ? प्रभो ! आपको इस बातपर जरा भी विषाद नहीं करना चाहिये। आप यह निश्चय समझें कि बौद्धगुरुओंका वह ध्यान नहीं था। ध्यानके बहानेसे भोले जीवोंको ठगना था। मोक्ष कोई सुलभ चीज नहीं जो हरएकको मिल जाय। यदि इस सरल मार्गसे मोक्ष मिल जाय तो बहुत

जल्दी सर्व जीव सिद्धालयमें सिधार जांय। आप विश्वास रक्खें, मोक्षप्राप्तिकी जो प्रक्रिया जिनागममें वर्णित है वही उत्तम और सुखप्रद है। नाथ! अब आप अपने चित्तको शांत करें और बौद्ध साधुओंको ढोंगी साधु समझें।

रानीके इन युक्तिपूर्ण वचनोंने महाराजको अनुत्तर बना दिया। वे कुछ भी जवाब न दे सके किन्तु गुरुओंका पराभव देख उनका चित्त शांत न हुवा। दिनोंदिन उनके चित्तमें ये विचार-तरंगे उठती रहीं कि इस रानीने बड़ा अपराध किया है।

मेरा नाम श्रेणिक नहीं जो मैं इसे बौद्धधर्मकी भक्त और सेविका न बना दूँ। आज जो यह जिनेन्द्रकी पूजन और उनकी भक्ति करती है सो जिनेन्द्रके बदले इससे बुद्धदेवकी भक्ति कराऊंगा तथा अशुभ कर्मके उदयसे कुछ दिन ऐसे ही सकल्प विकल्प वे करते रहे।

कदाचित् महाराजको शिकार खेलनेका कौतूहल उपजा। वे एक विशाल सेनाके साथ शीघ्र ही बनकी ओर चल पड़े। जिस बनमें महाराज गये उसी बनमे महामुनि यशोधर खड्गासनसे ध्यानारूढ़ थे। मुनि यशोधर परमज्ञानी, आत्मस्वरूपके भलेप्रकार जानकार, एवं परमध्यानी थे। उनकी आत्मा सदा शुभ योगकी ओर झुकी रहती थी। अशुभ योग उनके पासतक भी नहीं फटकने पाता था, मित्र शत्रुओंपर उनकी दृष्टि बराबर थी, त्रैकालिक योगके धारक थे, समस्त मुनियोंमें उत्तम थे, अनन्त अक्षय गुणोंके भंडार थे, असंख्याती पर्यायोंके युगपत् जानकार थे, देदीप्यमान निर्मल ज्ञानसे शोभित थे, भव्य जीवोंके उद्धारक और उन्हें उत्तम उपदेशके दाता थे।

स्यादस्ति स्यान्नास्ति इत्यादि अनेक धर्मस्वरूप जीवादि सम तत्व उनके ज्ञानमें सदा प्रतिभासित रहते थे। एवं बड़े-बड़े देव और इन्द्र आकर उनके चरणोंको नमस्कार करते थे! महाराजकी

दृष्टि मुनि यशोधरपर पड़ी। उन्होंने पहिले किसी दिगम्बर मुनिको नहीं देखा था, इसलिए शीघ्र ही उन्होंने किसी पार्श्वचरसे घर पूछा।

देखो भाई! नग्न, स्नानादि संस्काररहित, एवं मूड मुड़ाये यह कौन खड़ा है? मुझे शीघ्र कहो। पार्श्वचर बौद्ध था उसने शीघ्र ही इन शब्दोंमें महाराजके प्रश्नका जवाब दिया।

कृपानाथ! क्या आप नहीं जानते? शरीरनर्राये खड़ा हुवा, महाभिमानी यही तो रानी चेलनाका गुरु है।

बस, वहां कहने मात्रकी ही देरी थी। महाराज इस फिराकमें बैठे ही थे कि कब रानीका गुरु मिले और कब उसका अपमान कर मैं रानीसे बदला लूं! ज्यों ही महाराजने पार्श्वचरके वचन सुने मारे क्रोधसे उनका शरीर उबल उठा। वे विचार लगे—

अहा! रानीसे वैरका बदला लेनेका आज अवसर मिला है, रानीने मेरे गुरुओंका बड़ा अपमान किया है, उन्हें अनेक कष्ट पहुंचाये हैं, मुझे आज यह रानीका गुरु भी मिला है। अब मुझे भी इसे कष्ट पहुँचानेमें और इसका अपमान करनेमें चूकना नहीं चाहिये, तथा ऐसा क्षणएक विचार कर महाराजने शीघ्र ही पांचसौ शिकारी कुत्ते, जो लम्बी लम्बी डाढोंके धारक, सिंहके समान ऊंचे, एवं भयंकर थे, मुनिराज पर छोड़ दिये।

मुनिराज परमध्यानी थे, उन्हें अपने ध्यानके सामने इस बातका जरा भी विचार न था कि कौन दुष्ट हमारे ऊपर क्या अपकार कर रहा है? इसलिये ज्यों ही कुत्ते मुनिराजके पास गये और ज्योंही उन्होंने मुनिराजकी शांतमुद्रा देखा, सारी क्रूरता उनकी एक ओर किनारा कर गई। मंत्रकीलित सर्प जैसा शांत पड़ जाता है, मंत्रके सामने उसकी कुछ भी तीन पांच नहीं चलती, उसी प्रकार कुत्ते भी शांत हो गये। मुनिराजकी शांत

मुद्राके सामने उनकी कुछ भी तीन पांच न चली। वे मुनिराजकी प्रदक्षिणा देने लगे और उनके चरणकमलोंमें बैठ गये।

महाराज भी दूरसे यह दृश्य देख रहे थे। ज्योंही उन्होंने कुत्तोंको क्रोधरहित और प्रदक्षिणा करते हुवे देखा, मारे क्रोधसे उनका दिल पसीज गया! वे सोचने लगे यह साधु नहीं है, धूर्त वंचक कोई मंत्रवादी है। मेरे बलवान कुत्ते इस दुष्टने मन्त्रसे कीलित कर दिये हैं।

अस्तु, मैं अभी इसके कर्मका इसे मजा चखाता हूं, तथा ऐसा विचार कर उन्होंने शीघ्र ही म्यानसे तलवार खींच ली और मुनिके मारणार्थ बड़े वेगसे उनकी ओर धर झपटे।

मुनिके मारनेके लिये महाराज जा ही रहे थे, अचानक ही उन्हें एक सर्प, जोकि अनेक जीवोंका भक्षक एवं फणा ऊंचे किये था, दीख पड़ा एवं उसे अनिष्टका करनेवाला समझ शीघ्र महाराजने मार डाला, और अति क्रूर परिणामी हो पवित्र मुनि यशोधरके गलेमें डाल दिया।

जैनसिद्धांतमें फलप्राप्ति परिणामाधीन मानी है। जिस मनुष्यके जैसे परिणाम रहते हैं उसे वैसे ही फलकी प्राप्ति होती है। महाराज श्रेणिकके उस समय अति रौद्र परिणाम थे। उन्हें तत्काल ही जिस महाप्रभा नरकमें तेतीस सागरकी आयु, पांचसो धनुषका शरीर, एव विद्वानोंके भी वचनके अगोचर घोर दुःख हैं उस महाप्रभा नामके सप्तम नर्कका आयुबंध बंध गया।

यह बात ठीक भी है—जो मनुष्य बिना विचारे दूसरोंको कष्ट कर पाहते हैं, विशेषकर साधु महात्माओंको, उन्हें घोर दुखोंका सामना करना पड़ता है। महात्माओंको कष्ट देनेवाले मनुष्योंको सदा नरकादि गतियां तैयार रहती हैं। किंतु मदोन्मत्तोंको इस बातका कुछ भी ज्ञान नहीं रहता। वे चट ऐसा

काम कर पाडता। इसलिये उन्हें इस प्रकारका कष्टपद आयुर्बंध बंध गया।

ज्योंही मुनि यशोधरको यह बात मालूम हुई कि मेरे गलेमें सर्प डाल दिया है, उन्होंने तो अपनी ध्यान मुद्रा और भी अधिक बढ़ा दी और महाराज श्रेणिक वहांसे चल दिये। एवं जो जो काम उन्होंने वहां किये थे, अपने गुरुओंसे आकर सब कह सुनाये।

श्रेणिक द्वारा एक दिगंबर गुरुका ऐसा अपमान सुन बौद्ध गुरुओंको अति प्रसन्नता हुई। वे बारबार श्रेणिककी प्रशंसा करने लगे किन्तु साधु होकर उनका यह कृत्य उत्तम न था। साधुका धर्म मानापमान सुखदुःखमें समान भाव रखना है। अथवा ठीक ही था, यदि वे साधु होते तो वे साधुओंके धर्म जानते, किन्तु वहां तो वेष साधुका था, आत्माके साथ साधुत्वका कोई संबंध न था।

इसप्रकार तीन दिन तक तो महाराज इधर उधर ठापता रहे। चौथे दिन वे रानी चेलनाके राजमन्दिरमें गये। जो कुछ दुष्कृत्य वे मुनिके साथ कर आये थे सारा रानीसे कह सुनाया और हसने लगे।

महाराज द्वारा अपने गुरुका यह अपमान सुन रानी चेलना अवाक् रह गई। मुनिपर घोर उपसर्ग जान उसकी आंखोंसे अविरल अश्रुधारा बहने लगी। वह कहने लगी—हाय! बड़ा अनर्थ हो गया। राजन्! तूने अपनी आत्माको दुर्गतिका पात्र बना लिया। अरे! अब मेरा जन्म सर्वथा निष्फल है मेरा राजमन्दिरमें भोग भोगना महापाप है।

हाय! मेरा इस कुमार्गी पतिके साथ क्योंकर संबंध हो गया? युवती होनेपर मैं मर क्यों न गई? अब मैं क्या करू, कहां जाऊं! कहां रहूं! हाय! यह मेरा प्राण पखेरू क्यों नहीं

जल्दी विदा होता? प्रभो! मैं बड़ी अभागिनी हूं। मेरा अब कैसे भला होगा! छोटे गांव, वन, पर्वतोंमें रहना अच्छा किंतु जिन धर्मरहित अति वैभवयुक्त भी इस राजमन्दिरमें रहना ठीक नहीं।

हाय दुर्दैव! तूने मुझ अभागिनी पर ही अपना अधिकार जमाया। रानी चेलनाका इसप्रकार रोदन सुन महाराजका पत्थरका हृदय मोम सरीखा पिघल गया। अब महाराजके चेहरेसे प्रसन्नता कोसों दूर उड़ गई। उससमय उनसे और कुछ न बन सका। वे इस रीतिसे रानीको समझाने लगे—

प्रिये! तू इस बातके लिये जरा भी शोक न कर, वह मुनि गलेसे सर्प फेंक कबका वहांसे चलबसा होगा। मृतसर्पका गलेसे निकालना कोई कठिन नहीं। महाराजके ये वचन सुन रानीने कहा—

नाथ! आपका यह कथन भ्रममात्र है। मेरा विश्वास है यदि वे मेरे सच्चे गुरु हैं तो कदापि उन्होंने अपने गलेसे सर्प न निकाला होगा। कृपानाथ! अचल भी मेरुपर्वत कदाचित चलायमान होजांय, मर्यादाका नहीं त्यागी भी समुद्र अपनी मर्यादा छोड़ दे, किन्तु जब दिगम्बर मुनि ध्यानैकतान हो जाते हैं, उस समय उनपर घोरतम भी उपसर्ग क्यों न आ जाय, कदापि अपने ध्यानसे विचलित नहीं होते।

प्राणनाथ! क्षमाभूषणसे भूषित दिगम्बर मुनि अचल तो पृथ्वीके समान होते हैं और समुद्रके समान गंभीर, वायुके समान निष्परिग्रह, अग्निके समान कर्म भस्म करनेवाले, आकाशके समान निर्लेप, जलके समान स्वच्छ चित्तके धारक, एवं मेघके समान परोपकारी होते हैं।

प्रभो! आप विश्वास रक्खें, जो गुरु परमज्ञानी परमध्यानी दृढ़ वैरागी होंगे, वे ही मेरे गुरु होंगे किन्तु इनसे विपरीत

परीषहोंसे भय करनेवाले, अति परिग्रही, व्रत, तप आदिसे शून्य, मधु, मांस मदिराके लोलुपी, एवं महापापी जो गुरु हैं सो मेरे गुरु नहीं।

जीवन सर्वस्व! ऐसे गुरु आपके ही हैं, न जाने जो परम परीक्षक एवं अपनी आत्माके हितैषी हैं वे कैसे इन गुरुओंको मानते हैं?—उनकी पूजा प्रतिष्ठा करते हैं?

रानीके ऐसे युक्तिपूर्ण वचन सुन राजाका चित्त मारे भयके कांप गया! उस समय और कुछ न कहकर उनके मुखसे ये ही शब्द निकले—

प्रिये! इस समय जो तुमने कहा है बिलकुल सत्य कहा है, अब विशेष कहनेकी आवश्यकता नहीं। अब एक काम करो। जहांपर मुनिराज विराजमान हैं वहांपर हम दोनों शीघ्र चलें और उन्हें जाकर देखें।

रानी तो जानेको तैयार ही थी। उसने उसी समय चलना स्वीकार किया। एवं इधर रानी तो अपनी तैयारी करने लगी, उधर महाराजने मुनिदर्शनार्थ शीघ्र ही नगरमें ढोंढो पिटवादी तथा जिस समय रानी पीनसमें बैठी वनकी ओर चलने लगी, महाराज भी एक विशाल सेनाके साथ उनके पीछे घोड़ेपर सवार हो चल दिये और रात ही रातमें अनेक हाथी घोड़ोंसे वेष्टित वे दोनों दम्पति पऊस्यायतमें मुनिराजके पास जा दाखिल हो गये।

यह नियम है कि मुनियोंपर जब उपसर्ग आता है तब वे अनित्य आदि बारह भावनाओंका चिंतन करने लग जाते हैं। ज्यों ही मुनि यशोधरके गलेमें सर्प पड़ा वे इस प्रकार भावना भा निकले—राजाने जो मेरे गलेमें सर्प डाला है सो मेरा बड़ा उपकार किया है, क्योंकि जो मुनि अपनी आत्मासे समस्त

कर्मोंका नाश करना चाहते हैं, उन्हें चाहिये कि वे अवश्य कर्मोंकी उदीरणाके लिए परीषह सहें।

यह राजा मेरा बड़ा उपकारी है। इसने अपने आप परीषहोंकी सामग्री मेरे लिये एकत्रित कर दी है। यह देह मुझसे सर्वथा भिन्न है, कर्मसे उत्पन्न हुई है और मेरी आत्मा समस्त कर्मों से रहित पवित्र है, चैतन्य स्वरूप है। शरीरमें क्लेश होनेपर भी मेरी आत्मा क्लेशित नहीं बन सकती। यद्यपि यह शरीर अनित्य है, महा अपावन है, मल-मूत्रका घर है, घृणित है तथापि न मालूम विद्वान लोग क्यों इसे अच्छा समझते हैं? इत्र फुलेल आदि सुगन्धित पदार्थों से क्यो इसका पोषण करते हैं।

यह बात बराबर देखनेमें आती है कि जब आत्माराम इस शरीरसे विदा होता है उस समय कोश दो कोशकी तो बात ही क्या है पगभर भी यह शरीर उसके साथ नहीं जाता, इसलिये यह शरीर मेरा है ऐसा विश्वास सर्वथा निर्मूल है। मनुष्य जो यह कहते हैं कि शरीरमे सुख-दुःख होनेपर आत्मा सुखी-दुःखी होता है यह भी बात उनकी सर्वथा निर्युक्तिक है क्योंकि जिस प्रकार झोंपड़ेमें अग्नि लगने पर झोपड़ा ही जलता है तदन्तर्गत आकाश नहीं जलता उसी प्रकार शारीरिक दुःख सुख मेरी आत्माको दुःखी सुखी नहीं बना सकते।

मैं ध्यानबलसे आत्माको चैतन्यस्वरूप शुद्ध निष्कलंक समझता हू और मेरी दृष्टिमें शरीर जड़, अशुद्ध, चर्मावृत्त, मल मूत्र आदिका घर, अनेक क्लेश देनेवाला है। मुझे कदापि इसे अपनाना नहीं चाहिये तथा इस प्रकार भावनाओंका चिंतन करते हुवे मुनिराज, जैसे उन्हें राजा छोड़ गया था वैसे ही खड़े रहे और गम्भीरतापूर्वक परीषह सहते रहें।

सत्य सिद्धांतपर आरूढ़ रहने पर मनुष्य कहांतक दास नहीं बनते हैं? जिस समय राजारानीने मुनिको ज्योंका त्यों देखा, मारे आनन्दके उनका शरीर रोमांचित हो गया। उन दोनोंने शीघ्र ही समानभावसे मुनिराजको नमस्कार किया एवं उनकी प्रदक्षिणा की।

मुनिके दुःखसे दुःखित, किंतु उनके ध्यानकी अचलतासे हर्षितचित्त, एवं प्रशम संवेग आदि सम्यक्त्व गुणोंसे भूषित, रानी चेलनाने शीघ्र ही चिउंटी दूर कीं। चिउटियोंने मुनिराजका शरीर खोखला कर दिया था इसलिये रानीने एक मुलायम वस्त्रसे अवशिष्ट कीड़ियोंको भी दूरकर उसे गरम पानीसे धोया और संतापकी निवृत्तिके लिए उसपर शीतल चन्दन आदिका लेप कर दिया। एवं मुनिराजको भक्तिपूर्वक नमस्कार कर मुनिराजकी ध्यानमुद्रापर आश्चर्य करनेवाले, उनके दर्शनसे अतिशय सन्तुष्ट, वे दोनों दम्पति आनन्दपूर्वक उनके सामने भूमिपर बैठ गये।

यह नियम है कि दिगम्बर साधु रातमें नहीं बोलते इसलिये जबतक रात्रि रही मुनिराजने किसी प्रकार वचनालाप न किया किंतु ज्यों ही दिनका उदय हुवा और अन्धकारको तितर बितर करते हुवे ज्यों ही सूर्य महाराज प्राची दिशामें आ जमे, रानीने शीघ्र ही मुनिराजके चरणोंका प्रक्षालन किया एवं परमज्ञानी, परमध्यानी, जर्जर शरीरके धारक, मुनिराजको फिरसे तीन प्रदक्षिणा दीं, और उनके चरणोंकी भक्तिभावसे पूजाकर अपने पापकी शांतिके लिये वह इस प्रकार स्तुति करने लगी—

प्रभो! आप समस्त संसारमें पूज्य हैं। अनेक गुणोंके भण्डार हैं। आपकी दृष्टि शत्रु मित्रपर बराबर है। दीनबन्धो! सुमार्गसे विमुख जो मनुष्य आपके गलेमें सर्प डालनेवाले हैं

और जो आपको फूलोंके हार पहिनानेवाले हैं, आपकी दृष्टिमें दोनों ही समान हैं।

कृपासिंधो! आप स्वयं संसार-समुद्रके पार पर विराजमान हैं एवं जो जीव दुःखरूपी तरंगोंसे टकराकर संसाररूपी बोध समुद्रमें पड़े हैं इन्हें भी आप ही तारनेवाले हैं। जीवोंके कल्याणकारी आप ही हैं। करुणासिंधो! अज्ञानवश आपकी जो अवज्ञा और अपराध बन पड़ा है आप उसे क्षमा करें।

कृपानाथ! यद्यपि मुझे विश्वास है कि आप रागद्वेष रहित हैं आपसे किसीका अहित नहीं हो सकता तथापि मेरे चित्तमें जो अवज्ञाका संकल्प बैठा है वह मुझे सन्ताप दे रहा है इसीलिये यह मैंने आपकी स्तुति की है। प्रभो! आप मेघतुल्य जीवोंके परोपकारी हैं, आप ही धीर और वीर हैं एव शुभ भावना भावनेवाले हैं। इस प्रकार रानी द्वारा भलेप्रकार मुनिकी स्तुति समाप्त होने पर राजा रानीने भक्तिपूर्वक फिर मुनिराजके चरणोंको नमस्कार किया और यथास्थान बैठ गये एवं मुनिराजने भी अतिशय नम्र दोनों दम्पतिको समानभावसे धर्मवृद्धि दी तथा इस प्रकार उपदेश देने लगे—

विनीत मगधेश! संसारमें यदि जीवोंका परममित्र है तो धर्म ही है। इस धर्मकी कृपासे जीवोंको अनेक प्रकारके ऐश्वर्य मिलते हैं, उत्तम कुलमें जन्म मिलता है और संसारका नाश भी धर्मकी ही कृपासे होता है। इसलिये उत्तम पुरुषोंको चाहिए कि वे सदा उत्तम धर्मकी आराधना करें।

देखो, भाग्यका माहात्म्य! कहां तो परमपवित्र मुनि यशोधरका दर्शन और बौद्ध धर्मका परमभक्त! कहां मगधेश राजा श्रेणिक? तथा कहां तो रानी चेलना द्वारा बौद्ध धर्मकी परीक्षा और कहां महाराज श्रेणिकका परीक्षासे क्रोध! कहां तो

श्रेणिकका मुनिराजके गलेमें सर्प गिराना और कहां फिर रानी द्वारा उपदेश? एवं कहां तो रात्रिमें राजा रानीका गमन और कहां समान रीतिसे धर्मवृद्धिका मिलना? ये सब बातें उन दोनों दंपतिको शुभ अशुभ भाग्योदयसे प्राप्त हुईं।

मुनि यशोधरने जो धर्मवृद्धि दी थी वह साधारण न थी किंतु स्वर्ग मोक्ष आदि सुख प्रदान करनेवाली थी—संसारसे पार करनेवाली थी, तीर्थंकर चक्रवर्ती इंद्र अहमिंद्र आदि पदोंकी प्रदात्री थी एवं 'महाराज आगे तीर्थंकर होंगे' इस बातको प्रकट करनेवाली थी और धर्मसे विमुख महाराजको धर्म-मार्ग पर लानेवाली थी।

इस प्रकार भविष्यत् कालमें होनेवाले श्री पद्मनाभ तीर्थंकरके भवांतरके जीव महाराज श्रेणिकको मुनिराजका समागम वर्णन करनेवाला नवधां सर्ग समाप्त हुआ।

दशवां सर्ग

मनोगुप्तिकी कथाओंका वर्णन

समस्त मुनिओंके स्वामी, कर्मरहित निर्मल आत्माके ज्ञाता, समस्त कर्मोंके नाशक, मनुष्येश्वर महाराज श्रेणिक द्वारा पूजित, मैं श्री यशोधर मुनिको नमस्कार करता हूं।

ज्योंही महाराज श्रेणिकका इस ओर लक्ष्य गया कि मुनि यशोधरने हम दोनोंको समान रीतिसे ही धर्मवृद्धि दी है, धर्मवृद्धि देते समय मुनिराजने शत्रुमित्रका कुछ भी विभाग नहीं किया है, इनकी हम दोनोंपर कृपा भी एकसी जान पड़ती है, महाराज एकदम अवाक् रह गये। तत्काल उनका मन संकल्प विकल्पोंसे व्याप्त होगया। वे खिन्न हो ऐसा विचारने लगे—

मुनि यशोधरको धन्य है। गलेमें सर्प पड़नेपर अनेक पीड़ा सहन करते भी इन्होंने उत्तम क्षमाको न छोड़ा। रानी चेलनाने गलेसे सर्प निकाल इनकी भक्तिभावसे सेवा की और मैंने इनके गलेमे सर्प डाला, इनकी अनेक प्रकारसे हसी की एवं इनकी कुछ भी भक्ति भी न की तो भी मुनिराजका भाव हम दोनोंपर समान ही प्रतीत होरहा है।

हाय! मैं बड़ा नीच नराधम हूँ जो कि मैंने ऐसे परमयोगीकी यह अवज्ञा की। देखो, कहां तो परमपवित्र यह मुनिराजका शरीर! और कहां मैं इसका विघातेच्छु! हाय! मुझे सहस्रवार धिक्कार है। संसारमें मेरे समान कोई बज्रपापी न होगा। अरे! अज्ञानवश मैंने ये क्या अनर्थ कर डालें?

अब कैसे इन पापोंसे मेरा छुटकारा होगा? हाय! मुझे अब नियमसे नरक आदि घोर दुर्गतियोंमें जाना पड़ेगा। अब नियमसे वहांके दुःख भोगने पड़ेंगे। अब मैं क्या करूं! कहां

जाऊं ? इस कमाये हुवे पापका पश्चात्ताप कैसे करूं, अब पाप निवृत्त्यर्थ मेरा उपाय यही श्रेयस्कर होगा कि मैं खड्गसे अपना शिर काटूं और मुनिराजके चरणोंमें गिर समस्त पापोंका शमन करूं।

कृपासिन्धो ! मेरे अपराध क्षमा करिये, मुझे दुर्गतिसे बचाइये तथा इस प्रकार विचार करते करते मारे लज्जाके महाराजका मस्तक नत हो गया। मारे दुःखसे उनकी आंखोंसे अश्रुबिन्दु टपक पडे !

मुनिराज परमज्ञानी थे। उन्होंने चट राजाके मनका तात्पर्य समझ लिया एव महाराजको सान्तवना देते हुवे इस प्रकार कहने लगे —

नरनाथ ! तुम्हें किसी प्रकारका विपरीत विचार नहीं करना चाहिये। पापविनाशार्थ जो तुमने आत्महत्याका विचार किया है सो ठीक नहीं। आत्महत्यासे रत्तीभर पापोंका नाश नहीं हो सकता। इस कर्मसे उल्टा घोर पापका बन्ध ही होगा।

मगधेश ! अज्ञानवश जो जीव तलवार विष आदिसे अपनी आत्माका घात कर लेते हैं वे यद्यपि मरणके पहिले समझ तो यह लेते हैं कि हमारी आत्मा कष्टोंसे मुक्त हो जायगी, परभवमें हमे सुख मिले किन्तु उनकी यह बड़ी भूल समझनी चाहिये। आत्मघातसे कदापि सुख नहीं मिल सकता। आत्मघातसे परिणाम संक्लेशमय हो जाते हैं, संक्लेशमय परिणामोंसे अशुभ बन्ध होता है और अशुभ बन्धसे नरक आदि घोर दुर्गतियोंमें जाना पड़ता है।

राजन्! यदि तुम अपना हित ही करना चाहते हो तो इस अशुभ संकल्पको छोड़ो, अपनी आत्माकी निंदा करो एव इस पापका शास्त्रमें जो प्रायश्चित्त लिखा है उसे करो। विश्वास रक्खो

पापोंसे मुक्त होनेका यही उपाय है। आत्महत्यासे पापोंकी शांति नहीं हो सकती।

मुनिराजके ये वचन सुन तो महाराज अचम्भेमें पड गये। वे महारानीके मुंहकी ओर ताककर कहने लगे–सुन्दरि! यह बात क्या हुई? मुनिराजने मेरे मनका अभिप्राय कैसे जान लिया? अहा! ये मुनि साधारण मुनि नहीं किन्तु कोई महामुनि हैं। महाराजके मुखसे यह बात सुन रानी चेलनाने कहा–

नाथ! हाथकी रेखाके समान समस्त पदार्थोंको जाननेवाले क्या इन मुनिराजकी ज्ञान–विभूतिको आप नहीं जानते?

प्राणनाथ! आपके मनकी बात मुनिराजने अपने परम पवित्र ज्ञानसे जान ली है। आप अचम्भा न करें, मुनिराजको आपके अन्तरंगकी बातका पता लगना कोई कठिन बात नहीं।

आपके भवांतरका हाल भी बता सकते हैं। यदि आपको इच्छा है तो पूछिये। आप इनके ज्ञानकी अपूर्व महिमा समझे। रानी चेलनासे मुनिराजके ज्ञानकी यह अपूर्व महिमा सुन अब तो महाराज गद्गद् कण्ठ हो गये। अपनी आंखोंसे आनन्दाश्रु पोंछते हुवे वे मुनिराजसे इस प्रकार निवेदन करने लगे—

कृपासिंधो! मैं परभवमें कौन था? किस योनिसे मैं इस जन्ममें आया हूं? कृपया मेरे पूर्वभवका विस्तारपूर्वक वर्णन कहें। इस समय मैं अपने भवांतरके चरित्र सुननेके लिये अति आतुर एवं उत्सुक हूँ। अतिविनयी महाराज श्रेणिकके ऐसे वचन सुन मुनिराजने कहा—राजन्! यदि तुम्हें अपने चरित्र सुननेकी इच्छा है तो तुम ध्यानपूर्वक सुनो, मैं कहता हूँ——

इसी लोकमें लाख योजन चौड़ा, द्वीपोंका शिरताज अपनी गोलाईसे चन्द्रमाकी गोलाईको नीचे करनेवाला जम्बूद्वीप है। जम्बूद्वीपमें सुवर्णके रंगका सुमेरू नामका पर्वत है। सुमेरु

पर्वतकी पश्चिम दिशामें जो विजयार्द्ध पर्वतसे छह खण्डोंमें विभक्त है, भरतक्षेत्र है।

भरतक्षेत्रमें एक अति रमणीय स्थान जोकि स्वर्गके निरालंब होनेके कारण, पृथ्वीपर गिरा हुआ स्वर्गका टुकड़ा ही है क्या! ऐसी मनुष्योंको भ्रांति करनेवाला आर्यखण्ड है। आर्यखण्डमें अपनी कांतिसे सूर्यकांतिको तिरस्कृत करनेवाला, जगद्विख्यात, समस्त देशोंका शिरोमणि सूर्यकांत देश है। सूर्यकांत देशमें कुक्कुट-संपात्य ग्राम है। मनोहर पुरुषोंके चित्तोंको अनेक प्रकारसे आनंद प्रदान करनेवाली उत्तमोत्तम स्त्रियां हैं। सर्वदा यह देश उत्तमोत्तम धान्य, सोना, चांदी आदि पदार्थोंसे शोभित और ऊंचे ऊंचे धनिक गृहोंसे व्याप्त रहता है।

इसी देशमें एक नगर जो कि उत्तमोत्तम बावडी कूप एवं स्वादिष्ट धान्योंसे शोभित सूरपूर है। सूरपूरके बाजारमें जिस समय रत्नोंकी ढेरी नजर आती है उस समय यही मालूम होता है मानों पानी रहित साक्षात् समुद्र आकर ही इसकी सेवा कर रहा है! और जब ऊंचे ऊंचे धनिक गृहोंकी शिखर पर सुवर्ण कलश देखनेमें आते हैं तब यह जान पड़ता है मानों चंद्रमा इस नगरीकी सदा सेवा करता रहता है।

वहांपर भक्तिभावसे उत्तमोत्तम जिनालयोंमें भगवानकी पूजाकर भव्य जीव अपने पापोंका नाश करते हैं और मयूर जिस समय गवाक्षोंसे निकला हुवा सुगंधित धुवां देखते हैं तो उसे मेघ समझ असमयमें ही नाचने लग जाते हैं एवं वहां कईएक भव्य जीव संसारभोगोंसे विरक्त हो सर्वदाके लिये कर्मबंधनसे छूट जाते हैं।

सूर्यपुरका स्वामी जो नीतिपूर्वक प्रजापालक एवं शत्रुओंको भयावह था, राजा मित्र था। राजा मित्रकी पटरानी श्रीमती थी। श्रीमती बालकपनमें अतिशय शोभायुक्त होनेसे श्रीमती ही

थी। महाराज मित्रके श्रीमती रानीसे उत्पन्न कुमार सुमित्र था। सुमित्र नीतिशास्त्रका भले प्रकार वेत्ता, विवेकी, सच्चरित्र और विशाल किन्तु मनोहर नेत्रोंसे शोभित था। राजा मित्रके मंत्रीका नाम मतिसागर था जो कि नीतिमार्गानुसार राज्यकी संभाल रखता था।

मंत्री मतिसागरके मनोहर रूपकी खानि, रूपिणी नामकी भार्या थी और रूपिणीसे उत्पन्न पुत्र सुषेण था। सुषेण माता, पिताको सदा सुख देता था और प्रत्येक कार्यको विचारपूर्वक करता था। राजा मित्रका पुत्र सुमित्र और सुषेण दोनों समवयस्क थे। इसलिये वे दोनों आपसमें खेला करते थे। सुमित्रको अभिमान अधिक था। वह अभिमानमें आकर सुषेणको बड़ा कष्ट देता था, अनेक प्रकारकी अवज्ञा भी किया करता था।

एकदिन सुमित्र और सुषेण किसी बावड़ीपर स्नानार्थ गये। वे दोनों कमलपत्रसे मुंह ढांक बारबार जलमें डुबकी मारने लगे। सुमित्र बड़ा कौतूहली था। सुषेणको बारबार डुबाता था और खूब हंसी करता था। सुमित्रके इस वर्तावसे यद्यपि सुषेणको दुःख होता था किन्तु राजा मित्रके भयसे वह कुछ नहीं कहता था। उदासीन भावसे उसके सर्व अनर्थ सहता था।

कदाचित् राजा मित्रका शरीरांत हो जानेसे सुमित्र राजा बन गया। सुमित्रको राजा जान मंत्रीपुत्र सुषेणको अति चिंता हो गई। वह विचारने लगा—सुमित्रकी प्रकृति क्रूर है। यह दुष्ट मुझे बालकपनमें बड़े कष्ट देता था। अब तो यह राजा हो गया, मुझे अब यह और भी अधिक कष्ट देगा इसलिये अब सबसे अच्छा यही होगा कि इसके राज्यमें न रहना, ऐसा विचार कर सुषेणने शीघ्र ही कुटुम्बसे मोह तोड़ दिया एवं वनमें जाकर जैन दीक्षा धारण कर वे उग्र तप करने लगे।

जबसे सुषेण मुनिराज वनमें गये तबसे वे राजमंदिर न

आये। राजा सुमित्र भी राज पाकर आनंदसे भोग भोगने लगे। उनको भी सुषेणकी कुछ याद न आई। कदाचित् राजा सुमित्र एकांत स्थानमें बैठे थे कि उन्हें अचानक ही सुषेणकी याद आगई। सुषेणका स्मरण होते ही उन्होंने चट किसी पार्श्वचर (सिपाही) से धर पूछा—कहो भाई! आजकल मेरे परमपवित्र मित्र सुषेण राजमंदिरमें नहीं आते, वे कहां रहते हैं और क्यों नहीं आते? महाराजके मुखसे सुषेणके बाबत वचन सुन पार्श्वचरने कहा—

कृपानाथ! सुषेण तो दिगम्बर दीक्षा धारण कर मुनि हो गये। अब उन्होंने समस्त संसारसे मोह छोड़ दिया। वे आजकल वनमें रहते हैं इसलिये आपके मंदिरमें नहीं आते। पार्श्वचरके मुखसे अपने प्रियमित्र सुषेणका यह समाचार सुन राजा सुमित्र बड़े दुःखी हुए। उन्हें सुषेणकी अब बड़ी याद आने लगी।

कदाचित् राजा सुमित्रको यह पता लगा कि मुनिराज सुषेण सूरपूरके उद्यानमें आ विराजे हैं, उन्हें बड़ी खुशी हुई। मुनिराजके आगमन श्रवणसे राजा सुमित्रका चित्तरूप कमल विकसित हो गया। उन्होंने मुनिराजके दर्शनार्थ शीघ्र ही नगरमें ढिढोरा पिटवा दिया एवं स्वयं भी एक उन्नत गजपर सवार हो बड़े ठाटबाटसे मुनि दर्शनके लिये गये। ज्योंही राजा सुमित्रका हाथी वनमें पहुंचा, वे गजसे चट उतर पड़े। मुनिराज सुषेणके पास जाकर उनकी तीन प्रदिक्षिणा दी, अति विनयसे नमस्कार किया एवं प्रबल मोहके उदयसे सुषेणकी मुनि मुद्राकी ओर कुछ न विचार कर वे यह कहने लगे—

प्रिय मित्र! मेरा राज्य विशाल राज्य है। शुभ कर्मके उदयसे मुझे वह मिल गया है। ऐसे विशाल राज्यकी कुछ भी परवा न कर मेरे बिना पूछे आप मुनि बन गये यह ठीक न

किया, आपको आधा राज्य के भोग भोगने थे। अब भी आप इस पदका परित्याग करदें। भला संसारमें ऐसा कौन बुद्धिमान् होगा, जो शुभ एवं प्रत्यक्ष सुख देनेवाले राज्यको छोड़ दुर्धर तप आचरण करेगा? राजा सुमित्रके मुखसे ये मोहपूर्ण वचन सुन मुनिराज सुषेणने कहा—

राजन्! मैं अपनी आत्माको शांतिमय अवस्थामें लाना चाहता हूँ। परभवमें मेरी आत्मा शांतिस्वरूपका अनुभव करे इसलिये मैंने यह तप धारण करना प्रारम्भ कर दिया है। मुझे विश्वास है कि उत्तम तपकी कृपासे मनुष्योंको स्वर्ग मोक्ष सुख मिलते हैं। इसकी कृपासे राज्य, उत्तमोत्तम विभूतियां, उत्तम यश, एवं उत्तम ऐश्वर्य प्राप्त होते हैं। मुनिराज सुषेणके मुखसे ये वचन सुन राजा सुमित्रने और तो कुछ न कहा किन्तु इतना निवेदन और भी किया—

मुनिनाथ! यदि आप तप छोड़ना नहीं चाहते तो कृपाकर आप मेरे राजमंदिरमें भोजनार्थ जरूर आवें और मेरे ऊपर कृपा करें। राजाके ये वचन भी मोह परिपूर्ण जान मुनिवर सुषेणने कहा—

नरनाथ! मैं इस कामके करनेके लिए भी सर्वथा असमर्थ हूं। दिगम्बर मुनिओंको इस बातकी पूर्णतया मनाई है। वे संकेतपूर्वक आहार नहीं ले सकते। आप निश्चय समझिये कि भोजन मन वचन काय द्वारा स्वयं किया, एवं परसे कराया गया, वा परको करते देख 'अच्छा है' इत्यादि अनुमोदनापूर्वक होगा, दिगम्बर मुनि उस भोजनको कदापि न करेंगे किन्तु उनके योग्य वही भोजन हो सकता है जो प्रासुक होगा, उनके उद्देशसे न बना होगा और विधिपूर्वक होगा।

राजन्! दिगम्बर मुनि अतिथि हुआ करते हैं। उनके आहारकी कोई तिथि निश्चित नहीं रहती। मुनि निमंत्रण आमंत्रण—

पूर्वक भी भोजन नहीं कर सकते। आप विश्वास रखिये जो मुनि निश्चित तिथिमें निमंत्रण पूर्वक आहार करनेवाले हैं, कृतकारित अनुमोदनाका कुछ भी विचार नहीं रखते वे मुनि नहीं; जिह्वाके लोलुपी हैं एवं वज्र मूर्ख हैं। हां! यदि मेरे योग्य जैन शास्त्रसे अविरुद्ध कोई काम हो तो मैं कर सकता हूं।

मुनिराजकी दृष्टि सांसारिक कामोंसे ऐसी उपेक्षायुक्त देख राजा सुमित्रने कुछ भी जवाब न दिया। उसने शीघ्र ही मुनिराजके चरणोंको नमस्कार किया एवं हताश हो चुपचाप राजमंदिरकी ओर चल दिया।

यद्यपि राजा सुमित्र हताश हो राजमंदिरमें तो आ गये किन्तु उनका सुषेण विषयक मोह कम न हुआ। उनके मनमें मोहका यह अंकुर खड़ा ही रहा कि किसी रीतिसे मुनि सुषेण राजमंदिरमें आहार लें इसलिये ज्यों ही वह राजमंदिरमें आया कि शीघ्र ही उसने यह समझ कि मुनि सुषेणको जब अन्यत्र आहार न मिलेगा तो मेरे यहां जरूर लेंगे, नगरमें यह कड़ी आज्ञा कर दी कि, सुषेण मुनिको कोई आहार न दे और प्रतिदिन मुनि सुषेणकी राह देखता रहा।

कई दिन बाद मुनिराज सुषेण दो पक्षकी पारणाके लिये नगरमें आहारार्थ आये। वे विधिपूर्वक श्रावक गृहस्थोंके घर गये किंतु राजाकी आज्ञासे किसीने उन्हें आहार न दिया। अन्तमें सम्यग्दर्शनादि गुणोंसे भूषित विद्वान्, आहारके न मिलनेपर भी अव्याकुलित, मुनि सुषेण जूरा प्रमाण भूमिको निरखते राजमंदिरकी ओर आहारार्थ चल दिये।

इधर मुनिराजका जो राजमंदिरमें प्रवेश हुआ और इधर राजा सुमित्रकी सभामें राज वैद्यका एक दूत आ पहुंचा। दूत-मुखसे समाचार सुन सुमित्र अति व्याकुल हो गये। [illegible] [illegible] वे [illegible] न [illegible] सके। [illegible]

राजको आहार दिया नहीं इसलिये अपना प्रबल अन्तराय जान मुनिराज तत्काल वनको लौट गये एवं उन्होंने दो पक्षका प्रोषध व्रत धारण कर लिया।

जब दो पक्ष समाप्त हो गये तो फिर मुनिराज आहारको आये और उसी तरह समस्त गृहस्थोंके घर घूमकर वे राजमंदिरकी ओर गये। ज्योंही मुनिराज राजमंदिरके पास पहुंचे त्योंही राजा सुमित्रके हाथीने बन्धन तोड़ दिया एवं जनसमुदायको व्याकुल करता हुआ वह नगरमें उपद्रव करने लगा इसलिये इस भयंकर दृश्यसे अपना भोजनांतराय समझ मुनिराज फिर वनको लौट गये। उस दिन भी उनको आहार न मिला। वनमें जाकर फिर उन्होंने दो पक्षका प्रोषधव्रत धारण कर लिया।

प्रतिज्ञाके पूर्ण हो जानेपर मुनिराज फिर भी दो पक्ष बाद नगरमें आये, गृहस्थोंके घरोंमें आहार न पाकर वे राजमंदिरमें आहारार्थ गये। इधर मुनिराजका तो राजमन्दिरमें आगमन हुवा और उधर राजमन्दिरमें बड़े जोरसे अग्नि जल उठी। अग्निज्वाला देख राजा सुमित्र आदि घबड़ा गये। उस दिन भी राजा सुमित्रकी दृष्टि मुनिराज पर न पड़ी एवं मुनिराज भी आहारका अन्तराय समझ वनकी ओर चल दिये।

मुनिराज वनकी ओर जा रहे थे। उनकी देह आहारके न मिलनेसे सर्वथा क्षीण हो चुकी थी–ज्योंही गृहस्थोंकी दृष्टि मुनिराजपर पड़ी, मुनिराजका शरीर अति क्षीण देख उन्हें बहुत दुःख हुवा। वे खुले शब्दोंमें राजा सुमित्रकी निंदा करने लगे। देखो, यह राजा बड़ा दुष्ट है, इससमय यह मुनिराजके आहारमें पूरा२ अन्तराय कर रहा है। न यह दुष्ट स्वयं आहार देता है और न किसी दूसरेको देने देता है।

मनुष्योंको इसप्रकार बातचित करते सुन मुनि सुषेण ईर्ष्यामय ध्यानसे विचलित हो गये। आहारके न मिलनेसे

मारे क्रोधके उनका शरीर लाल हो गया। वे विचारने लगे—देखो, इस राजाकी दुष्टता! जिस समय मैं मुनि नहीं था उस समय भी यह मुझे अनेक संताप देता था और अब मैं मुनि हो गया, इसके साथ मेरा कुछ भी सम्बन्ध न रहा तौभी यह मुझे संताप दिये बिना नहीं मानता। ऐसा नीच चांडाल कोई राजा नहीं दीख पड़ता तथा इसप्रकार क्रोधांध हो मुनि सुषेणने बड़े जोरसे किसी पत्थरमें लात मारी। मारते ही वे एकदम जमीनपर गिर गये और तत्काल उनके प्राण पखेरू उड़ गये एवं खोटे निदानसे मुनि सुषेण व्यंतर हो गये।

मुनि सुषेणकी मृत्युका समाचार राजा सुमित्रने भी सुना। सुनते ही उनका चित्त अति आहत हो गया। सुमित्र व मंत्री आदि सुषेणकी मृत्युपर अति शोक करने लगे। किसी दिन सुषेणकी मृत्युसे सुमित्रके दुःखकी सीमा यहांतक बढ़ गई कि उसने समस्त राज्यका परित्याग कर दिया, शीघ्र ही तापसके व्रत धारण कर लिये और आयुके अन्तमें मरकर खोटे तपके प्रभावसे वह भी देव हो गया।

मगधेश! अब देवगतिकी आयुको समाप्त कर राजा सुमित्रका जीव तो श्रेणिक हुवा है और मुनि सुषेणका जीव अपने आयु कर्मके अन्तमें रानी चेलनाके गर्भमें आवेगा। वह कुणक नामका धारक तेरा पुत्र होगा एवं तेरा पुत्र होकर भी वह तेरे लिये सदा शत्रु ही रहेगा।

मुनिराज यशोधरके मुखसे अपने पूर्वभवका वह वृत्तांत सुन राजा श्रेणिकको शीघ्र ही जातिस्मरण हो गया। जातिस्मरणके बलसे उन्होंने शीघ्र ही अपने पूर्वभवका हाल वास्तविक रीतिसे जान लिया एवं मुनिराजके गुणोंकी मुक्तकण्ठसे प्रशंसा करते हुये वे ऐसा विचार करने लगे—

अहा!!! मुनि यशोधरका ज्ञान धन्य है! [illegible]

इनकी प्रशंसाके लायक है। परीषहोंके जीतनेमें धीरता-वीरता इनकी लोकोत्तर है। इनके प्रत्येक गुण पर विचार करनेसे यही बात जान पड़ती है कि मुनि यशोधरसा परम ज्ञानी मुनि शायद ही संसारमें होगा?

श्री जिनेन्द्र भगवानका शासन भी संसारमें धन्य है। जिनागममें जो तत्त्व कहे गये है और उनका जिस रीतिसे स्वरूप वर्णन किया गया है, सर्वथा सत्य है। जिनोक्त जीवादितत्त्वोंसे भिन्न तत्त्व मिथ्या तत्त्व हैं। यशोधर मुनिराज अपने व्रतमें सर्वथा दृढ़ हैं। साधुओंके वास्तविक लक्षण मुनि यशोधरमें ही संघटित होते हैं एवं महाराजकी विचार-सीमा अब और भी बढ़ गई। वे मन ही मन यह भी कहने लगे—जो साधु भोले जीवोंके वचक हैं, विषय लम्पटी हैं, हाथी, घोड़ा, माल, खजाना, स्त्री आदि परिग्रहोंके धारक हैं वास्तविक ज्ञान ध्यानसे बहिर्मूत है, वे नामके ही साधु हैं?

पाखण्डो साधु कदापि गुरु नहीं बन सकते। वे संसार-समुद्रमें डुबानेवाले हैं। इस प्रकार विचार करते२ महाराज श्रेणिकको अपनी आत्माका कुछ वास्तविक ज्ञान हो गया। उन्होंने शीघ्र ही श्रावकके व्रत धारण कर लिये। रानो चेलना सहित महाराज श्रेणिकने विनयसे मुनिराजके चरणोंको नमस्कार किया एव मुनिराजके गुणोंमें संलग्न चित्त उनकी बारम्बार स्तुति करते हुवे महाराज श्रेणिक और रानी चेलना आनंदपूर्वक अपने राजमंदिरकी ओर चल दिये।

महाराजने जिन धर्मकी परमभक्त रानी चेलनाके साथ बड़े ठाटबाटसे राजमन्दिरमें प्रवेश किया। और अपनी कीर्तिसे समस्त दिशायें सफेद करनेवाले महाराज भले प्रकार जिन भगवानकी पूजा आराधना एवं उनके गुणोंका स्मरण करते हुये राजमंदिरमें रहने लगे।

कदाचित् बौद्ध साधुओंको इस बातका पता लगा कि महाराज श्रेणिकने किसी जैनमुनिके उपदेशसे जैनधर्म धारण कर लिया है, उनके परिणाम बौद्ध धर्मसे सर्वथा विमुख हो गये हैं, वे शीघ्र ही महाराज श्रेणिकके पास आये और ऐसा उपदेश देने लगे—

प्रिय मगधेश ! यह बात सुननेमें आई है कि आपने बौद्ध-धर्मका सर्वथा परित्याग कर दिया है और आप जैनधर्मके परमभक्त होगये हैं ? यदि यह बात सत्य है तो आपने बड़ा अनर्थ एवं अविचारित काम कर डाला। हमें संदेह होता है कि परम पवित्र, जीवोंको यथार्थ सुख देनेवाले श्री बुद्ध देवके धर्म और यथार्थ तत्त्वोंको छोड़कर निस्सार जीवोंके अहितकारक जैन धर्मपर आपने कैसे विश्वास कर लिया ?

प्रजानाथ ! स्त्रियोंकी अपेक्षा बुद्धिबल मनुष्यका अधिक होता है। इसलिये सर्वथा संसारमें यही बात देखनेमें आती है कि यदि स्त्री किसी विपरीत मार्गपर चलनेवाली हो तो चतुर पुरुष अपने बुद्धिबलसे उसे सन्मार्ग पर ले आते हैं किंतु यह बात कहीं नहीं देखी कि स्त्रीके कहनेसे वे विपरीत मार्गगामी होजाय।

आप विश्वास रखिये कि जो मनुष्य स्त्रीकी बातोंमें अपने समीचीन मार्गका त्याग करदेते हैं और विपरित मार्गको ही सम्यक् मार्ग समझने लग जाते हैं वे मनुष्य विद्वानोंकी दृष्टिमें चतुर नहीं समझे जाते। स्त्रीके कहनेमें चलनेवाला मनुष्य आबालगोपाल निंदाभाजन बन जाता है।

राजन् ! आप बुद्धिमान हैं, प्रत्येक कार्य विचारपूर्वक करते हैं, तथापि न मालूम आपने कैसे स्त्रीकी बातोंमें फसकर अपने पवित्र धर्मका परित्याग कर दिया ? हमें इस बातकी कोई परवा नहीं कि आप जैन बनें अथवा बौद्ध रहें, किंतु यहां यह कहना हमें आवश्यकीय होता कि यदि आप जैन मुनियोंकी अपेक्षा बौद्ध साधुओंको अल्पज्ञानी समझते हैं तो आप कृपया किसके द्वारा

बातका निर्णय कर लें; पीछे आप बौद्ध धर्मका परित्याग करदें।

मगधाधिश ! हमें पूर्ण विश्वास है कि अनेक प्रकारके ज्ञान विज्ञानके भण्डार, परम पवित्र बौद्ध साधुओंके सामने जैनधर्म-सेवी मुनि कोई चीज नहीं और न बौद्धधर्मके सामने जैनधर्म ही कोई चीज है। याद रखिये यदि आप योंही बिना परीक्षा किये जैनधर्म धारण कर लेंगे और बौद्धधर्म छोड़ देंगे तो आपको अभी नहीं तो पीछे जरूर पछताना होगा।

प्रबल पवनके सामने भी अचल वृक्ष कहांतक चलायमान नहीं होता ? कुतर्कसे मनुष्यके सद्विचार कहांतक किनारा नहीं कर जाते ! ज्योंही महाराजने बौद्धोंका लम्बा चौड़ा उपदेश सुना "पानीके अभावसे जैसा अभिनव वृक्ष कुह्मला जाता है" महाराजका जैनधर्मरूपी पौधा कुह्मला गया। अब उनका चित्त फिर डावांडोल हो गया। उनके मनमें फिरसे जैनधर्म एवं जैन मुनियोंकी परीक्षाका विचार आकर सामने टकराने लगा।

कदाचित् महाराजने जैन मुनियोंकी परीक्षार्थ राजमंदिरमें गुप्तरीतिसे एक गहरा गड्ढा खुदवाया व उसमें कुछ हड्डी, चर्म आदि अपवित्र पदार्थ मगाकर रखवा दिये और रानीसे जाकर कहा—

कान्ते ! अब मै जैनधर्मका परिपूर्ण भक्त हो गया हू। मेरे समस्त विचार बौद्धधर्मसे सर्वथा हट गये हैं। कदाचित् भाग्यवश यदि कोई जैन मुनि राजमंदिरमें आहारार्थ आवें तो तू इस पवित्र मंदिरमें आहार देना, उनकी भक्ति सेवा सन्मान भी खूब करना।

रानी चेलना बड़ी पंडिता थी। महाराजकी यह आकस्मिक वचनभंगी सुन उसे शीघ्र ही इस बातका बोध हो गया कि महाराजने जैन मुनियोंकी परीक्षार्थ अवश्य ही कुछ ढोंग रचा

है और महाराजके परिणाम बौद्धधर्मकी ओर फिर झुके हुवे प्रतीत होते हैं।

कुछ दिनके पश्चात् भलेप्रकार ईर्यासमितिके प्रतिपालक, परम पवित्र तीन मुनिराज राजमंदिरमें आहारार्थ आये। ज्योंही महाराजकी दृष्टि मुनियों पर पड़ी कि वे शीघ्र ही रानीके पास गये और कहने लगे—

प्रिये! मुनिराज राजमंदिरमें आहारार्थ आ रहे हैं। जल्दी तय्यार हो उनका पड़िगाहन कर तथा स्वय भी मुनियोंके सामने आकर खडे हो गये।

मुनिराज यथास्थान आकर ठहर गये। ज्योंही रानीने मुनिराजको देखा, विनम्र मस्तक हो उन्हें नमस्कार किया तथा महाराज द्वारा की हुई परीक्षासे जैनधर्म पर कुछ आघात न पहुँचे यह विचार रानीने शीघ्र ही विनयसे कहा:—

हे मनोगुप्ति आदि त्रिगुप्ति पालक, पुरुषोत्तम, मुनिराजो! आप आहारार्थ राजमदिरमें तिष्ठें।

उनमेंसे कोई भी मुनि त्रिगुप्तिका पालक था नहीं। सब दो दो गुप्तियोंके पालक थे इसलिये ज्योंही रानीके वचन सुने उन्होंने शीघ्र ही अपनी दो दो अंगुलियां उठा दीं तथा दो अगुलियोंके उठानेसे रानीको यह बतलाकर—हे रानी! हम दो दो गुप्तियोंके ही पालक हैं-शीघ्र ही वनकी ओर चल दिये।

उसी समय कोई गुणसागर नामके मुनिराज भी पुरमें आहारार्थ आये। मुनि गुणसागरको अवधिज्ञानके बलसे राजाका भीतरी विचार विदित होगया था इसलिये वे सीधे राजमंदिरमें ही घुसे चले आये। मुनिराज पर रानीकी दृष्टि पड़ी। उन्हें नतमस्तक हो, रानीने नमस्कार किया एवं वह इस प्रकार कहने लगी—

हे त्रिभुवनियोंके पालक पुरुषोत्तम मुनिराज ! आप राजमंदिरमें आहारार्थ ठहरें।

मुनि गुणसागरने ज्योंही रानीके वचन सुने, शीघ्र ही उन्होंने अपनी तीन अंगुलियां दिखा दीं। मुनिराजकी तीन अंगुलियां देख रानी अति प्रसन्न हुई। उसने शीघ्र ही महाराजको अपने पास बुलाया. महाराजने आकर भक्तिभावसे मुनिराजको नमस्कार किया। आगे बढ़कर रानीने मुनिराजको काष्ठासन दिया। उनका पड़िगाहन (प्रतिगृहीत) किया, गरम पानीसे उनके चरण प्रक्षालन किये। एवं महाराज नतमस्तक हो उन्हें भोजनालयमें आहारार्थ ले गये।

महाराजकी प्रार्थनानुसार मुनिराज भोजनालयमें गये तो सही, किंतु ज्योंही वे वहां पहुंचे कि अवधिज्ञानके बलसे शीघ्र ही उन्हें गढ़े हुए हड्डी चामका पता लग गया। वे तत्काल ही यह कह कि राजन् ! तेरा घर अपवित्र है, वहांसे घर लौटे और ईर्यापथसे जीवोंकी रक्षा करते हुवे वनकी ओर चले आये।

चारों मुनियोंको इस प्रकार राजमंदिरसे विना कारण लौटा देख राजा श्रेणिक आदि समस्त जन हाहाकार करने लगे। मुनियोंका अलौकिक ज्ञान देख सब मनुष्योंके मुखसे उनकी प्रशंसा निकलने लगी। महाराज श्रेणिकको भी इस बातका परम दुःख हुवा, वे शीघ्र रानीके पास आये और कहने लगे—

प्रिये। यह क्या हुवा, मुनिराज अकारण ही क्यों आहार छोड़ चले गये ? कुछ जान नहीं पड़ता, शीघ्र कहो। महाराजके ऐसे वचन सुन रानीने उत्तर दिया—

नाथ ! मैं भी इस बातको न जान सकी, मुनिगण क्यों तो राजमन्दिरमें आहारार्थ आये और क्यों फिर बिना आहार लिये चले गये। स्वामिन् ! चलिये अपन शीघ्र ही वन चलें

और उद्यानमें वे परमपवित्र यतीश्वर विराजमान हैं वहां जाकर उन्हींसे यह बात पूछें।

रानी चेलनाकी मनोहर एवं संशयनिवारक यह युक्ति महाराजको पसंद आ गई। अतिशय तेजस्वी और मुनिदर्शनार्थ उत्कण्ठित वे दोनों दम्पति जहां मुनिराज विराजमान थे वहीं गये। प्रथम ही प्रथम महाराजकी दृष्टि मुनिवर धर्मघोषपर पड़ी। तत्काल वे दोनों दम्पति उनके पास गये। भक्ति पूर्वक उनके चरणोंको नमस्कार किया, एवं अति विनयसे महाराजने यह पूछा—

प्रभो! समस्त जगतके उद्धारक स्वामिन्! मेरे शुभोदयसे आप राजमंदिरमें आहारार्थ गये थे, किन्तु आप बिना आहारके ही चले आये। मैं यह न जान सका कि क्यों तो आप राजमन्दिरमें आहारार्थ गये और क्यों लौट आये? कृपा कर शीघ्र मेरे इस संशयको दूर करें। राजाके वचन सुन मुनिवर धर्मघोषने कहा—

राजन्! जब हम राजमंदिरमें आहारार्थ पहुंचे थे, हमें देख रानी चेलनाने यह कहा था—हे त्रिगुप्तिपालक मुनिराज! आप मेरे राजमन्दिरमें आहारार्थ विराजें। हम त्रिगुप्तिपालक थे नहीं, इसलिये हम वहां न ठहरे। हमारे न ठहरनेका और दूसरा कोई कारण न था। मुनिराजके ऐसे वचन सुन महाराज आश्चर्यसागरमें गोता मारने लगे। वे सोचने लगे ये परमपवित्र मुनिराज किस गुप्तिके पालक नहीं हैं? तथा ऐसा कुछ समय सोच विचारकर महाराजने शीघ्र ही मुनिराजसे निवेदन किया—

कृपानाथ! क्या आपके तीनों ही गुप्ति नहीं हैं, अथवा कोई एक नहीं है तथा वह क्यों नहीं है? कृपया शीघ्र कहें।

महाराज श्रेणिकके ऐसे लालसायुक्त वचन सुनकर मुनिराजने कहा—राजन्! हमारे मनोगुप्ति नहीं है। वह क्यों नहीं है? उसका कारण कहता हूं, आप ध्यानपूर्वक सुनें।

अनेक प्रकारके उत्तमोत्तम नगरोंसे व्याप्त इसी जम्बूद्वीपमें एक कलिंग नामका देश है। कलिंग देशमें अतिशय मनोहर बाजारोंकी श्रेणियोंसे व्याप्त एक दंतपुर नामका सर्वोत्तम नगर है। दंतपुरका स्वामी जो कि नीतिपूर्वक प्रजाका पालक, मंत्री और बड़ेर सामंतोंसे वेष्टित, सूर्यके समान प्रतापी था।

मैं राजा धर्मघोष था। मेरी पटरानीका नाम लक्ष्मीमती था। रानी लक्ष्मीमती अति मनोहरा थी। समस्त रानियोंमें मेरी प्राणवल्लभा थी। चन्द्रमुखी एवं काममंजरी थी। हम दोनों दंपतिमे गाढ़ प्रेम था, एक दूसरेको देखकर जीते थे। यहां-तक कि हम दोनों ऐसे प्रेममें मस्त थे कि हमको जाता हुआ काल भी नहीं मालूम होता था।

कदाचित् मुझे एक दिगम्बर गुरुके दर्शनका सौभाग्य मिला। मैने उनके मुखसे जैन धर्मका उपदेश सुना। उपदेशमें मुनिराजके मुखसे ज्यों ही मैंने संसारकी अनित्यता, बिजलीके समान विषयभोगोंकी चपलता सुनी, मारे भयके मेरा शरीर कंप गया। कुछ समय पहिले जो मैं भोगोंको अच्छा समझता था वे ही मुझे विष सरीखे जान पड़ने लगे। मैं एकदम संसारसे उदास हो गया और उन्हीं मुनिराजके चरणकमलोंमें झट जैनेश्वरी दीक्षा धारण करली।

इसी पृथ्वीतलमें एक अति मनोहर कौशांबी नगरी है। कौशांबीपुरीके राजाका मंत्री जो कि नीतिकलामें अतिशय चतुर गरुड़वेग था। मंत्री गरुड़वेगकी प्रिय भार्या गरुड़दत्ता थी। गरुड़दत्ता परम सुन्दरी चन्द्रवदना एव पतिभक्ता थी। किसी समय विहार करता करता मैं कौशांबी नगरीमें जा पहुंचा और वहां किसी दिन मंत्री गरुड़वेगके घर आहारार्थ गया।

ज्यों ही गरुड़दत्ताने मुझे अपने घर आते देखा, भलेप्रकार मेरा विनय किया। आह्वानन कर काष्ठासनपर बिठाकर मेरे

चरण प्रक्षालन किये। एवं मन और इंद्रियोंको भलेप्रकार सन्तुष्ट करनेवाला मुझे सर्वोत्तम आहार दिया।

आहार देते समय गरुडदत्ताके हाथसे एक कवल नीचे गिर गया। कवल गिरते ही मेरी दृष्टि भी जमीनपर पड़ी, ज्योंही मैने गरुडदत्ताके पैरका अंगूठा जमीनपर देखा, मुझे चट अपनी प्रियतमा लक्ष्मीमतीके अंगूठेकी याद आई। मेरे मनमें अचानक यह विकल्प उठ खड़ा हुवा।

अहा! जैसा मनोहर अंगूठा रानी लक्ष्मीमतीका था वैसा ही इस गरुडदत्ताका है। बस फिर क्या था? मेरे मनके चलित हो जानेसे हे राजन्! आजतक मुझे मनोगुप्तिकी प्राप्ति न हुई, इसलिये मैं मनोगुप्ति रहित हूँ।

ज्यों ही मुनिवर धर्मघोषके मुखसे राजा श्रेणिकने यह बात सुनी, उन्हें अति प्रसन्नता हुई। वे अपने मनमें कहने लगे–समस्त पापोंका नाशक जिनेन्द्रशासन धन्य है। सत्यवक्ता मुनिवर धर्मघोष भी धन्य हैं, अहा! जैसी सत्यता जैन धर्ममें है वैसी कहीं नहीं, तथा इस प्रकार मुनिराज धर्मघोषकी बार बार प्रशंसा कर महाराजने मुनिराजको भक्तिपूर्वक नमस्कार किया। एवं ये दोनों दंपति वहांसे उठकर मुनिवर जिनपालके पास गये और उन्हें सविनय नमस्कार कर राजा श्रेणिकने पूछा—

भगवन्! आज आप आहारार्थ मेरे मंदिरमें गये थे, आपने मेरे मंदिरमें क्यों आहार न लिया? मुझसे ऐसा क्या घोर अपराध बन पड़ा था? कृपाकर मेरे इस संदेहको शीघ्र दूर करें। राजा श्रेणिकके ऐसे वचन सुन मुनिराज जिनपालने भी वही उत्तर दिया जो मुनिवर धर्मघोषने दिया था।

मुनिराजसे यह उत्तर पाकर महाराज फिर अचंभेमें पड़ गये। मनमें वे ऐसा सोचने लगे कि इन मुनिराजके कौनसी

गुप्ति नहीं है, और वह क्यों नहीं है ? तथा कुछ समय ऐसा संकल्प विकल्प कर उन्होंने मुनिराजसे पूछा—

प्रभो ! कृपया इस बातको खुलासा रीतिसे कहें। आपके कौनसी गुप्ति न थी और क्यों न थी ? मेरे मनमें अधिक संशय है। मुनिराजने उत्तर दिया—

राजन् ! मेरे वचनगुप्ति न थी, वह क्यों न थी ? उसका कारण सुनाता हूं ध्यानपूर्वक सुनो।

इसी पृथ्वीमण्डलपर समस्त पृथ्वीका तिलकस्वरूप एक भूमि-तिलक नामका नगर है। नगर भूमितिलकका अधिपति भलेप्रकार प्रजाका रक्षक, अतिशय धर्मात्मा राजा वसुपाल था। वसुपालकी प्रिय भार्या धारिणा थी। रानी धारिणी अति मनोहरा, उत्तमो-त्तम गुणोंकी आकर एवं काम भावकी जयपताका थी।

शुभ भाग्योदयसे रानी धारिणीसे उत्पन्न एक कन्या थी। जो कन्या चन्द्रवदना, मृगनयना, रतिरूपा, समस्त उत्तमोत्तम गुणोंकी आकार एवं अपना शरीरकांतिसे अंधकारको नाश करने-वाली थी और उसका नाम वसुकांता था।

उसी समय कौशांबीपुरीमें एक चंडप्रद्योतन नामका प्रसिद्ध राजा राज्य करता था। चडप्रद्योतन अतिशय तेजस्वी वीर एवं विशालसेनाका स्वामी था।

यदाचित् कुमारी वसुकांताने यौवन अवस्थामें पदार्पण किया। राजा चंडप्रद्योतनको इसके युवतीपनेका पता लग गया। कुमारीके गुणोंपर मुग्ध हो राजा चंडप्रद्योतनने शीघ्र ही राजा वसुपालसे उस पुत्रीके लिये प्रार्थना की और उनके साथ बहुत कुछ प्रेम दिखाया, किन्तु राजा चंडप्रद्योतन जैन न था इसलिये राजा वसुपालने उसकी प्रार्थना न सुनी और पुत्री देनेके लिये साफ इन्कार करदी।

राजा चंडप्रद्योतनने यह बात सुनी तो उसने शीघ्र ही सेना-

सजाकर मृत्तिकावतीकी ओर प्रस्थान कर दिया। कुछ दिन बाद मार्ग में ही जल्दी जल्दी प्रयाण करता राजा चण्डप्रद्योतन मृत्तिकावतीपुरमें आ पहुंचा। आते ही उसने अपनी सेनासे समस्त नगर घेर लिया और लड़ाईके लिये तैयार हो गया।

राजा वसुपालको इस बातका पता लगा तो उसने भी अपनी सेना सजवा ली। तत्काल वह चण्डप्रद्योतनसे लड़नेके लिये निकल पड़ा और दोनों दलकी सेनामें भयंकर युद्ध होने लगा। मेघनाद मेघ शब्दसे जैसे मयूर इधर उधर नाचते फिरते हैं, मेघनाद (बिगुल) के शब्द सुननेसे उस समय योद्धाओंकी भी यही दशा हो गई। रोषमें आकर वे भी इधर उधर घूमने लगे और एक दूसरेपर प्रहार करने लगे। दोनों सेनाका घोर संग्राम साक्षात् महासागरकी उपमाको धारण करता था, क्योंकि महासागर जैसा पर्वतोंसे व्याप्त रहता है संग्राम भी आहत हो पृथ्वीपर गिरे हुए हाथी रूपी पर्वतोंसे व्याप्त था। महासागर जैसा तरंगयुक्त होता है, संग्राम भी चंचल अश्वरूपी तरंगयुक्त था।

महासागरमें जिस प्रकार महामत्स्य रहते हैं संग्राममें भी पेनी तलवारोंसे कटे हुवे मनुष्योंके मुख रूपी मत्स्य थे। महासागर जैसा जलपूर्ण रहता है वैसा संग्राम भी घावोंसे निकलते हुये रक्तरूपी जलसे पूर्ण था। महासागर जैसा मणिरत्नोंसे व्याप्त रहता है संग्राम भी मृतयोद्धाओंके दांत रूपी मणिरत्नोंसे व्याप्त था। महासागरमें जैसे भयंकर शब्द होते हैं संग्राममें भी हाथियोंके चित्काररूपी शब्द थे। महासागर जिस प्रकार बालू सहित होता है संग्राम भी पीसी हुई हड्डी रूपी बालू सहित था।

महासमुद्र जैसे कीचड़ व्याप्त रहता है संग्राम भी मांसरूपी कीचड़से व्याप्त था। महासागरमें जैसे मेंढ़क और कछुवे रहते हैं संग्राममें भी वैसे ही कटे हुवे घोड़ोंके पैर, मेंढ़क और

हाथियोंके पैर कछुवे थे। महासागर जैसा खण्ड पर्वतयुक्त होता है, संग्राम भी मृतशरीरोंके ढेर रूप खण्ड पर्वतयुक्त था! महासागरमें जैसे सर्प रहते हैं संग्राममें भी कटी हुई हाथियोंकी पूंछे सर्प थीं। महासागर जैसा पवनपूर्ण रहता है, संग्राम भी योद्धाओंके श्वासोच्छ्वास रूप पवनसे परिपूर्ण था। महासागरमें जैसा वडवानल होता है संग्राममें भी उसी प्रकार चमकते हुवे चक्र वडवानल थे। महासागर जैसा वेलायुक्त होता है उसी प्रकार संग्राममें भी समस्त दिशाओंमें घूमते हुवे योद्धारूपी वेला थीं।

सागरमें जैसे नाव और जहाज होते हैं संग्राममें भी घोडे-रूपी नाव और जहाज थे, तथा संग्राममें खड्गधारी खड्गोंसे युद्ध करते थे। मुष्टियुद्ध करनेवाले मुष्टिओंसे लडते थे। कोई कोई आपसमें केश पकड़कर युद्ध करते थे। अनेक वीर पुरुष भुजाओंसे लड़ते थे। पैरोंसे लड़ाई करनेवाले पैरोंसे लड़ते थे। शिर लड़ानेवाले सुभट शिर लड़ाकर युद्ध करते थे।

बहुतसे सुभट आपसमें मुख भिड़ाकर लड़ते थे। गदाधारी और तीरदाज गदाधारी और तीरंदाजोंसे लड़ते थे। घुड़सवार घुड़सवारोंसे, गजसवार गजसवारोंसे, रथसवार रथसवारोंसे, एवं प्यादे प्यादोंसे भयंकर युद्ध करते थे।

उस समय संग्राममें अनेक वीर पुरुष शब्दयुद्ध करनेवाले थे। इसलिये वे शब्दयुद्ध करते थे। लाठी चलानेवाले लाठियोंसे युद्ध करते थे। एव राजा राजाओंसे युद्ध करते थे तथा शिलायुद्ध करनेवाले शिलाओंसे, बांस युद्ध करनेवाले सुभट बांसोंसे, वृक्ष उखाड़कर युद्ध करनेवाले वृक्ष उखाड़कर व हलके धारक अपने हलोंसे युद्ध करते थे।

इसप्रकार दोनों राजाओंका आपसमें कई दिन तक भयंकर युद्ध होता रहा। अन्तमें जब मधुपालने यह देखा कि राजा

चंडप्रद्योतन जीता नहीं जा सकता तो उसे बड़ी चिन्ता हुई तथा वह उसके जीतनेके लिये अनेक उपाय सोचने लगा।

कदाचित् बिहार करता करता उस समय मैं भी कौशांबीमें जा पहुंचा। मैंने जो वन किलेके बिलकुल पास था उसीमें स्थित हो ध्यान करना प्रारम्भ कर दिया, वहां ध्यान करते मालीने मुझे देखा। वह तत्काल राजा वसुपालके पास भागता भागता पहुंचा और मेरे आगमनका सारा समाचार राजासे कह सुनाया।

सुनते ही राजा वसुपाल तत्काल मेरे दर्शनके लिये आये। मेरे पास आकर उन्होंने भक्तिपूर्वक नमस्कार किया। राजा वसुपालके साथ और भी कई मनुष्य थे, उनमेंसे एक मनुष्यने मुझसे यह निवेदन किया—

प्रभो! कृपया राजा वसुपालको आप शत्रुओंकी ओरसे अभयदान प्रदान करें। इन्हें वैरियोंकी ओरसे कैसा भी भय न रहे।

मनुष्यकी रागद्वेष परिपूर्ण बात सुनकर मैंने कुछ भी उत्तर न दिया लेकिन उन वनकी रक्षिका एक देवी थी, ज्यों ही उसने यह समाचार सुना, अपनी दिव्यवाणीसे उसने शीघ्र ही उत्तर दिया—

राजन् वसुपाल! तुझे किसी प्रकारका भय नहीं करना चाहिये नियमसे तेरी विजय होगी। बस फिर क्या था? देवी तो उस समय अदृश्य थी इसलिये ज्यों ही राजा वसुपालने ये वचन सुने, मारे आनंदके उसका शरीर रोमांचित हो गया।

वह यह समझ कि आशीर्वाद मुझे मुनिराजने दिया है बड़ी भक्तिसे उसने मुझे नमस्कार किया और बड़ी विभूतिके साथ अपने राजमंदिरकी ओर चला गया। राजमंदिरमें आकर

विजयकी खुशीमें उसने तोरण आदि लगाकर नगरमें बड़ा भारी उत्सव किया। समस्त दिशाऐं बधिर करनेवाले बाजे बजने लगे एवं राजा वसुपाल आनंदसे रहने लगा।

राजा चडप्रद्योतनको भी इस बातका पता लगा। राजा वसुपालको पक्का जैनी समझ उसने तत्काल युद्धका संकल्प छोड़ दिया और सब सेनाको साथ ले अपने नगरकी ओर प्रस्थान कर दिया। नगरमें जाकर उसने जैन धर्म धारण कर लिया। जिनराजके वाक्यों पर उसका पूरा पूरा श्रद्धान हो गया और आनदसे रहने लगा।

राजा वसुपालको भी चंडप्रद्योतनके चले जानेका पता लगा। उसने शीघ्र ही कई मंत्री–जो कि परके अभिप्राय जाननेमें अतिशय चतुर थे–राजा चडप्रद्योतनके पास भेजें और सारा हाल जानना चाहा। राजाकी आज्ञानुसार समस्त मत्री शीघ्र ही कौशाबी गये। राजा चंडप्रद्योतनकी सभामें पहुंच उन्होंने विनयसे राजाको नमस्कार किया और जो कुछ राजा वसुपालका सन्देशा था सब कह सुनाया। मंत्रियोंके मुखसे राजा वसुपालका यह सन्देशा सुन राजा चडप्रद्योतनने कहा—

मत्रिओ! राजा वसुपाल अतिशय धर्मात्मा है। धर्म उसे अपने प्राणोंसे भी प्यारा है। मैंने राजा वसुपालको जैन समझ युद्धका संकल्प छोड दिया। जो पापी पुरुष जैनियोंके प्राणोंको दुखाते हैं, उनके साथ युद्ध करते हैं, वे शीघ्र मृत्युको प्राप्त होते हैं और वे संसारमें नराधम कहलाते हैं।

राजा चंडप्रद्योतनसे यह समाचार सुन मंत्री तत्काल भूमि-तिलकपुरको लौट पड़े। चंडप्रद्योतनका सारा समाचार राजा वसुपालको कह सुनाया और उनकी अनेक प्रकारसे प्रशंसा करने लगे। ज्यों ही राजा वसुपालने यह बात सुनी उन्हें अति प्रसन्नता हुई।

चंडप्रद्योतनको अपना समान धर्मी समझ राजा वसुपालने शीघ्र ही कन्या वसुकांताका विवाह राजा चंडप्रद्योतनके साथ कर दिया एवं हाथी, घोडा आदि उत्तमोत्तम पदार्थ देकर राजा चंडप्रद्योतनके साथ बहुत कुछ हित जताया।

जब कन्या वसुकांताके साथ राजा चंडप्रद्योतनका विवाह हो गया तो उनको बड़ा संतोष हुवा। वे बड़े आनंदसे रहने लगे और दोनों दम्पति भलेप्रकार सांसारिक सुखका अनुभव करने लगे।

कदाचित् राजा चण्डप्रद्योतन रानी वसुकांताके साथ एकांतमें बैठे थे। अचानक ही उन्हें भूमितिलकपुरके युद्धका स्मरण हो आया। वे रानी वसुकांतासे कहने लगे—

प्रिये ! मैं अतिशय प्रतापी था। चतुरंग सेनासे मंडित था। अपने प्रतापसे मैंने समस्त भूपतियोंका मान गलित कर दिया था। मैंने तेरे पिताको इतना बलवान नहीं जाना था। हाय ! तेरे पिताके साथ युद्ध कर मैंने बड़ा अनर्थ किया। रानी वसुकांताने जब ये वचन सुने तो वह कहने लगी—

नाथ ! आपके बराबर मेरे पिता बलवान न थे, किन्तु मुनिवर जिनपालने उन्हें अभयदान दे दिया था इसलिये वे आपसे पराजित न हो सके। रानी वसुकांताके ये वचन सुन महाराज अचम्भेमें पड़ गये। वे कहने लगे—

चन्द्रवदने ! तुम यह क्या कह रही हो ? परमयोगी राग-द्वेषसे रहित होते हैं, वे कदापि ऐसा काम नहीं कर सकते। यदि मुनिवर जिनपालने राजा वसुपालको ऐसा अभयदान दिया हो तो बड़ा अनर्थ कर डाला। चलो अब हम शीघ्र उन्हीं मुनि-राजके पास चलें और उन्हींसे सब समाचार पूछें।

राजा चण्डप्रद्योतनकी आज्ञानुसार रानी वसुकांता मुनि-[illegible] लिये तैयार हो गई। वे दोनों दम्पति [illegible] [illegible]

मुनि वन्दनार्थ गये। जिस समय वे दोनों दम्पति वनमें पहुंचे और ज्योंही उन्होंने मुझे देखा बड़ी भक्तिसे नमस्कार किया, तीन प्रदक्षिणा दीं, एवं राजा चण्डप्रद्योतनने बड़ी विनयसे यह कहा—

समस्त विज्ञानोंके पारगामी, भव्योंको मोक्षसुख प्रदान करनेवाले, अतिशय कठिन किन्तु परमोत्तम व्रतके धारक, शत्रुमित्रोंको समान समझनेवाले प्रभो! क्या यह आपको योग्य था कि एकको अभयदान देना और दूसरेका अनिष्ट चिंतन करना?

कृप नाथ! प्रथम तो मुनियोंके लिये ऐसा कोई अवसर नहीं आता। यदि किसी प्रकारका अवसर आकर उपस्थित भी हो जाय तो आप सरीखे वीतराग मुनिगण उस समय ध्यानका अवलम्बन कर लेते हैं, भली बुरी कैसी भी सम्मति नहीं देते।

राजा चण्डप्रद्योतनके ऐसे वचन सुन हे राजन् श्रेणिक! मैंने तो कुछ जवाब न दिया किन्तु रानी वसुकांता कहने लगी—

नाथ! मेरे पिताके शुभोदयसे उस समय किसी वनरक्षिका देवीने यह आशीर्वाद दिया था। मुनिराजने कुछ भी नहीं कहा था। आप इस अंशमें मुनिराजका जरा भी दोष न समझें।

बस फिर क्या था? राजन्! ज्योंही राजा चण्डप्रद्योतनने रानी वसुकांताके वचन सुने, मारे हर्षके उसका कण्ठ गद्गद् हो गया। कुछ समय पहिले जो उसके हृदयमें मेरे विषयमें कालुष्य बैठा था तत्काल वह निकल भागा।

दोनो दम्पतिने मुझे विनयपूर्वक नमस्कार किया एव वे दोनों दम्पति तो कौशांबीपुरीमें आनन्दानुभव करने लगे और मुझे उसी कारणसे आजतक वचनगुप्ति प्राप्त न हुई। मैं अनेक देशोंमें विहार करता२ राजगृह आया। आज मैं आपके यहां आहारार्थ भी गया, किन्तु मैं त्रिगुप्तिपालक नहीं था इसलिये मैंने आहार न लिया। मेरे आहारके न लेनेका अन्य कोई कारण नहीं।

विनीत मगधेश! यह आप निश्चय समझें कि जो मुनि मनोगुप्ति, वचनगुप्ति और कायगुप्ति पालक होते हैं वे नियमसे

अवधिज्ञानके धारक होते हैं। तीनों गुप्तियोंमें एक भी गुप्तिको न रखनेवाले मुनिराजके अवधिज्ञान, मनःपर्ययज्ञान और केवलज्ञान इन तीनों ज्ञानोंमेंसे एक भी ज्ञान नहीं होता। साधारण जीवोंके समान उनके मति, श्रुत दो ही ज्ञान होते हैं।

राजन्! मनमें उत्पन्न खोटे विकल्पोंके निरोधके लिए मनोगुप्तिका पालन किया जाता है। इस मनोगुप्तिका पालन करना सरल बात नहीं। इस गुप्तिको वे ही पालन कर सकते हैं, जो ज्ञान, पूजा आदि अष्ट मदोंके विजयी यतीश्वर होते हैं और शुभ एवं अशुभ संकल्पोंसे बहिर्भूत रहते हैं, उसी प्रकार वचनगुप्तिकी रक्षा करना भी अति कठिन है।

जो मुनीश्वर वचनगुप्तिके पालक होते हैं उन्हें स्वर्गसुखकी प्राप्ति होती है, अनेक प्रकारके कल्याण मिलते हैं। विशेष कहां तक कहा जाय, वचनगुप्तिपालक मुनिराज समस्त कर्मोंका नाश कर सिद्ध अवस्थाको भी प्राप्त हो जाते हैं तथा इसी प्रकार कायगुप्तिका पालन भी अति कठिन है। शरीरसे सर्वथा निर्मल होकर विरले ही मुनीश्वर कायगुप्तिके पालक होते हैं। तीनों गुप्तियोंके पालक मुनिराज निर्मल होते हैं। उन्हें तपके प्रभावसे अनेक प्रकारकी लब्धियां मिलती हैं। उनकी आत्मा सम्यग्ज्ञानसे सदा भूषित रहती है एवं वे जैनधर्मके सचालक समझे जाते हैं।

इस प्रकार मुनिवर धर्मघोष और जिनपालके मुखसे मनोगुप्ति और वचनगुप्तिकी कथा सुन राजा श्रेणिक और रानी चेलनाको अति आनन्द मिला। वे दोनों दम्पति परमपवित्र दोनों गुप्तियोंकी बारबार प्रशंसा करने लगे। उनके मुखसे समस्त बाधारहित मुनिमार्गकी एव केवली प्रतिपादित श्रुतज्ञानकी भी [illegible] प्रशसा निकलने लगी।

इसप्रकार श्रीपद्मनाभ तीर्थंकरके भवांतरके जीव महाराज श्रेणिकके चरित्रमें मनोगुप्ति वचनगुप्ति दोनों गुप्तियोंकी कथा वर्णन करनेवाला दसवां सर्ग समाप्त हुआ।

ग्यारहवां सर्ग

कायगुप्ति कथाका वर्णन

मुनिवर जिनपाल द्वारा वचनगुप्ति कथाके समाप्त हो जाने पर राजा रानीने उन्हें भक्तिपूर्वक नमस्कार किया। धर्मप्रेमी वे दोनों दम्पति मुनिवर मणिमालीके पास गये। उन्हें भक्तिपूर्वक नमस्कार कर राजा श्रेणिकने विनयसे पूछा—

ससारतारकस्वामिन्! मेरे शुभोदयसे आप राजमंदिरमें आहारार्थ गये थे किंतु आप बिना कारण वहांसे आहारके बिना ही लौट आये, यह क्या हुवा? मेरे मनमें इस बातका बड़ा संशय बैठा है, कृपया इस मेरे संशयको शीघ्र मिटावें। राजा श्रेणिकके ऐसे वचन सुन मुनिराजने कहा—

राजन्! रानी चेलनाने 'हे त्रिगुप्ति पालक मुनिराज! आप आहारार्थ राजमदिरमें विराजें' इस रीतिसे मेरा आह्वानन किया था। मेरे कायगुप्ति थी नहीं इसलिये मैं वहां आहारके लिये न ठहरा। वह क्यों नहीं थी उसका कारण सुनाता हूँ, आप ध्यानपूर्वक सुने—

इसी पृथ्वीतलमें अतिशय शुभ एक मणिवत नामका देश है। मणिवत साक्षात् समस्त देशोंमें मणिके समान है। मणि-देशमें (अधरता) धन विद्या आदिकी असहायता हो यह बात नहीं है। वहांके निवासी धनी एवं विद्वान् धन और विद्यासे बराबर सहायता करनेवाले हैं। एक मात्र अधरता है तो स्त्रियोंके ओठोंमें ही है। वहां सबलोग सुखी हैं इसलिये कोई किसीसे किसी चीजकी याचना भी नहीं करता। यदि याचनाका व्यवहार है तो वरके लिये कन्या और कन्याके लिये वरका ही है।

उस देशमें किसीका विनाश भी नहीं किया जाता। यदि विनाश व्यवहार है तो व्याकरणके क्वीपप्रत्ययमें ही है-क्विपप्रत्ययका ही लोप किया जाता है। वहांके मनुष्य निरपराधो है इसलिये वहां कोई किसीका बन्धन नहीं करता। यदि बन्धन व्यवहार है तो मनोहर शब्द करनेवाले पक्षियोंमें ही है—वे ही पिंजरोंमें बधे रहते हैं!

मणिवत देशमें कोई आलसी भी नजर नहीं आता। आलसीपना है तो वहांके मतवाले हाथियोंमें ही हैं—वे ही झूमते झामते मंद गतिसे चलते हैं। कोई किसोको वहांपर मारने सतानेवाला भी नहीं है। यदि मारता सताता है तो यमराज ही है। वहांके निवासियोंको भय किसीका नहीं है, केवल कामोपुरुष अपनी प्राणवल्लभाओंके क्रोधसे डरते हैं—कामियोंको प्रतिक्षण इस बातका डर बना रहता है कि कहीं यह नाराज न होजाय।

उस देशमें कोई चोर नहीं है। यदि चोरका व्यवहार है तो पवनमें है, वही जहां तहांकी सुगंधि चुरा ले आता है। वहांका कोई मनुष्य जाति पतित नहीं है। यदि पतन व्यवहार है तो वृक्षोंके पत्तोंमें हैं, वे ही पवनके जोरसे जमीनपर गिरते हैं।

वृक्षोंके पत्ते छोड़कर उस देशमें कोई चपल भी नहीं है, किंतु वहांके निवासी सबलोग गंभीर और उदार हैं। वहांपर कोई मनुष्य जड़ नहीं है। यदि जड़ता है तो स्त्रियोंके नितंबोंमें हैं। कृशता भी वहांपर स्त्रियोंके कटिभागमें ही है-वहां स्त्रियोंकी कमर ही पतली है और कोई कृश नहीं। वहांके पत्थर ही नहीं बोलते चालते हैं, मनुष्य कोई गूंगा नहीं।

उस देशमें कोई किसीका दमन नहीं करता, एक मात्र योगीश्वर ही इंद्रियोंका दमन करते हैं। मलिन भी वहां कोई नहीं रहता, एक मात्र मलिनता वहांके तालाबोंमें है। हाथी

आकर वहांके तालावोंको गंदला कर देते हैं। उस देशमें निष्कोषता कमलोंमें ही है, सूर्यास्त होनेपर वे ही मुद जाते हैं किन्तु वहां निष्कोषता-खजाना न हो यह बात नहीं। लोग उस देशमें दान आदि उत्तम कार्योंमें ईर्षा द्वेष करते हैं, किंतु इनसे अतिरिक्त और किसी कार्यमें उन्हें ईर्षा द्वेष नहीं!

वहांके लोग उत्तमोत्तम व्याख्यान सुननेके व्यसनी हैं, जूवा आदिका कोई व्यसनी नहीं है तथा उस देशमे उत्तमोत्तम मुनियोंके ध्यान प्रभावसे सदा वृक्ष फले फूले रहते हैं, योग्य वर्षा हुआ करती है, वहांके मनोहर बागोमें सदा कोकिल बोलती रहती है। वहांकी स्त्रियोंसे हथिनी भी मंद गमनकी शिक्षा लेती है और स्वभावसे वे स्त्रियां लज्जावती एवं पतिभक्ता हैं।

इसी मणिवत देशमें एक अतिजय रमणीय दारा नामक नगर है। दारानगरके ऊंचे२ महल सदा चन्द्रमडलको भेदन किया करते हैं। उसकी स्त्रियोंके मुख-चन्द्रमाकी कृपासे अन्धकार सदा दूर रहता है इसलिये वहां दीपक आदिकी भी आवश्यकता नही पड़ती। जिस समय वहांकी स्त्रिया अटारियोंपर चढ़ जाती हैं, उस समय चन्द्रमा उनको चूडामणि तुल्य जान पड़ता है और तारागण चूडामणिमें जडे हुवे सफेद मोतीसरीखे मालूम पड़ते हैं।

दारानगरका स्वामी भले प्रकार नीतिकलामें निष्णात क्षत्रियवंशी मै राजा मणिमाली था। मेरी स्त्री जोकि अतिशय गुणवती थी, गुणमाला थी। गुणमालासे उत्पन्न मेरे एक पुत्र था उसका नाम मणिशेखर था और वह अतिशय नीतियुक्त था। मैं भोगोंमें इतना मस्त था कि मुझे जाते हुवे कालका भी ज्ञान न था। मैं सदा जिनधर्मका पालन करता हुआ आनन्दसे राज्य करता था।

कदाचित् मैं आनन्दमें बैठा था। मेरी पट्टरानी मेरे केशोंको संभाल रही थी। अचानक ही उसे मेरे शिरमें एक सफेद बाल

दीख पड़ा। वह एकदम अचंभेमें पड़ गई और कहने लगी— हाय! जिस यमराजने बड़े-बड़े चक्रवर्ती, नारायण, प्रति नारायणोंको भी अपना कवल बना लिया उसी यमराजका दूत यहाँ आकर भी प्रकट हो गया। बस!!! ज्योंही मैंने रानी गुणमालाके ये वचन सुने मेरी आनन्दतरंगे एक ओर किनारा कर गईं। मेरे मुखसे उस समय ये ही शब्द निकले—

प्रिये! समस्त लोकको भय उत्पन्न करनेवाला वह दूत कहां है? मुझे भी शीघ्र दिखा। मैं उसे देखना चाहता हूँ।

मेरे वचन सुनते ही रानीने बाल उखाड़ लिया और मेरी हथेलीपर रख दिया। ज्योंही मैंने अपना सफेद बाल देखा। अपना काल अति समीप जान मैं चट राज्यसे विरक्त हो गया। जो विषयभोग कुछ समय पहिले अमृत जान पड़ते थे वे ही हलाहल विष बन गये। मैं अपने प्यारे पुत्र और स्त्रियोंको भी अपना शत्रु समझने लगा।

मैंने शीघ्र ही चन्द्रशेखरको बुलाया और राज्यकार्य उसे सौंप तत्काल वनकी ओर चल पड़ा। वनमें आते ही मुझे मुनिवर गुणसागरके दर्शन हुवे। मैंने शीघ्र ही अनेक राजाओंके साथ मुनिदीक्षा धारण करली, जैन सिद्धांतके पढ़नेमें अपना मन लगाया। एवं अब मैं जैन सिद्धांतका भलेप्रकार ज्ञाता हो गया और उग्र तपस्वी बन गया तो मैं सिंहके समान इस पृथ्वीमंडल पर अकेला ही विहार करने लगा।

राजन्। अनेक देश एवं नगरोंमें विहार करता करता किसी दिन मैं उज्जयनी नगरीमें जा पहुंचा और वहांकी श्मशान-भूमिमें मुर्देके समान आसन बांधकर ध्यानके लिये बैठ गया। वह समय रात्रिका था इसलिये एक मंत्रवादी—जोकि अनेक मंत्रोंमें निष्णात, वैताली विद्याकी सिद्धिका इच्छुक, एवं जातिका कोली था—वहाँ आया और मेरे शरीरको मृतशरीर जान तत्काल उसने मेरे

मस्तकपर एक चूल्हा रख दिया एवं किसी मृतकपालमें दूध और चावल डालकर चूल्हेमें अग्नि जलाकर वह खीर पकाने लगगया।

बस फिर क्या था? मंत्रवादी तो यह समझ कि कब जल्दी खीर पके और कब जल्दी मत्र सिद्ध हो, बड़ी तेजीसे चूल्हेमें लकड़ी झोंककर आग बालने लगा और आग बलनेसे जब मुझे मस्तक और मुखमें तीव्र वेदना जान पड़ी तो मैं कर्मरहित शुद्ध आत्माका स्मरण कर इस प्रकार भावना भा निकला—

रे आत्मन्! तुझे इस समय इस दुःखसे व्याकुल न होना चाहिये। तूने अनेकबार भयंकर नरक दुःख भोगे हैं। नरक दुःखोंके सामने यह अग्निका दुःख कुछ दुःख नहीं। देख, नरकमें नारकियोंको क्षुधा तो इतनी अधिक है कि यदि मिले तो वे त्रिलोकका अन्न खा जाये किंतु उन्हें मिलता कणमात्र भी नहीं, इसलिये वे अतिशय क्लेश सहते हैं। वहांपर नारियोंको गरम लोहेकी कढ़ाइयोंमें डाला जाता है, उनके शरीरके खंड किये जाते हैं उस समय उन्हें परम दुःख भोगना पड़ता है।

हजार विच्छुओंके काटनेसे जैसी शरीरमें अग्नि भरती है उसी प्रकार नरकभूमिस्पर्शसे नारकियोंको दुःख भोगने पड़ते हैं। यदि नरककी मिट्टीका छोटासा टुकड़ा भी यहां आजाय तो उसकी दुर्गंधिसे कोसों दूर बैठे जीव शीघ्र मर जांय, किंतु अभागे नारकी रात दिन उसमें पड़े रहते हैं। तुझे भी अनेकबार नरकमें जाकर ये दुःख भोगने पड़े हैं। जब जब तू एकेंद्रिय, द्वींद्रिय आदि विकलेंद्रिय योनियोंमें रहा है उस समय भी तूने अनेक दुःख भोगे हैं।

अनेकबार तू निगोदमें भी गया है और वहांके दुःख कितने कठिन हैं यह बात भी तू जानता है। तुझे इससमय जरा भी विकल्पित नहीं होना चाहिये। भाग्यवश यह नरभव मिला है।

प्रसन्नचित्त होकर तुझे व्रतसिद्धिके लिये परीषह सहनी चाहिये। ध्यान रख! परिषह सहन करनेसे ही व्रतसिद्धि और सच्चा आत्मीय सुख मिल सकता है।

राजन्! मैं तो इसप्रकार अनित्यत्व भावना भा रहा था। मुझे अपने तन बदनका भी होश हवाश न था। अचानक ही जब अग्नि जोरसे बलने लगी तो मेरे मस्तकपर रखा कपाल बेहदरीतिसे हिलने लगा और भलीभांति कौलिक द्वारा हटे जानेपर तत्काल जमीनपर गिरगया। जो कुछ उसमें दूध चावल आदि चीजें थीं मिट्टीमें मिल गईं और शीघ्र ही अग्नि शांत हो गई।

बस फिर क्या था? ज्योंही उस कौलिकने यह दृश्य देखा मारे भयके उसके पेटमें पानी हो गया। वह यह जान कि मंत्र मुझपर कुपित हो गया है वहांसे तत्काल घर भागा और शीघ्र ही अपने घर आगया।

कुछ समय बाद-रात्रिमे मुर्देके धोखेसे मुनिराज पर घोर उपसर्ग हुवा है-यह बात दारानगरनिवासी सज्जनोंको मानों जतलाता हुवा सूर्य प्राची दिशामें उदित होगया। जिनेंद्ररूपी सूर्यके उदयसे जैसा मिथ्यात्व अन्धकार तत्काल विलयको प्राप्त हो जाता है और भव्योंके चित्तरूपी कमल विकसित हो जाते हैं, उसीप्रकार सूर्यके उदयसे गाढ़ अन्धकार भी बातकी बातमें नष्ट हो गया। जहां तहां सरोवरोंमें कमल भी खिल गये।

उससमय रातभरके वियोगी चकवा चकवी सूर्योदयसे अति आनंदित हुवे और परस्पर प्रेमालिंगन कर अपनेको धन्य समझने लगे, किन्तु रात्रिमें अपनी प्राणप्यारियोंके साथ क्रीड़ा करनेवाले कामीजन अति दुःख मानने लगे और बारबार सूर्यकी निन्दा करने लगे। असली पूछिये तो सूर्य एक प्रकारका उत्तम साधु है, क्योंकि साधु जिसप्रकार भव्य जीवोंको उत्तम मार्गका

दर्शक होता है वैसे सूर्य भी पथिकोंको उत्तम मार्गका दर्शक है। साधु जैसे भव्य जीवोंके अज्ञान अन्धकारको दूर करता है सूर्य भी उसीप्रकार दूर करनेवाला है। साधु जिस प्रकार जीव अजीव आदि पदार्थोंका विचार करता है, उनके साथ सम्बन्ध रखता है, उसी प्रकार सूर्य भी अपनी किरणोंसे समस्त पदार्थोंसे सम्बन्ध रखता है।

देदीप्यमान सूर्यके तेजके सामने चन्द्रमा उस समय सूखे पत्तेके समान जान पड़ने लगा और तारागण तो लापता होगये। श्मशानभूमिके पास एक बाग था इसलिये उससमय एक माली फूल तोड़नेके लिए वहां आया। अचानक उसकी दृष्टि मुझपर पड़ी। ज्योंही उसने मुझे अर्धदग्ध मस्तकयुक्त और बेहोश देखा मारे आश्चर्यके उसका ठिकाना न रहा। वह शीघ्र ही भागकर नगरमें आया और जिनधर्मके परमभक्त जो जिनदत्त आदि सेठ थे उनसे मेरा सारा हाल कह सुनाया।

ज्योंही जिनदत्त आदि सेठोंने मालीके मुखसे मेरी ऐसी भयकर दशा सुनी उन्हें परमदुःख हुआ। मारे दुःखके वे हाहाकार करने लगे और सबके सब मिलकर तत्काल श्मशान-भूमिकी ओर चल दिये।

श्मशानभूमिमें आकर मुझे उन्होंने भक्तिपूर्वक प्रणाम किया। मेरी ऐसी बुरी अवस्था देख वे और भी अधिक दुःख मनाने लगे। किस दुष्टने मुनिराजपर यह उपसर्ग किया है? इस प्रकार क्रुद्ध हो भव्य जिनदत्तने मुझे शीघ्र उठाया और व्याधिके दूर करनेके लिये मुझे अपने घर ले गया। जिस समय मैं घर पहुँच गया कि तत्काल जिनदत्त किसी वैद्यके घर गया। मेरी व्याधिके शांत्यर्थ वैद्यसे उसने औषधि मांगी और मेरी सारी अवस्था कह सुनाई। भव्य जिनदत्तके मुखसे मुनिराजकी यह अवस्था सुन वैद्यने कहा—

प्रिय जिनदत्त! मुनिराजका रोग अनिवार्य है। जबतक लाक्षामूल तेल न मिलेगा कदापि मैं उनकी चिकित्सा नहीं कर सकता। तेलसे ही यह रोग जा सकता है। इसलिये तुम्हें लाक्षामूल रसके लिये प्रयत्न करना चाहिये। वैद्यराजके ऐसे वचन सुनकर जिनदत्तने कहा-वैद्यराज! कृपया शीघ्र कहें, लाक्षामूल तेल कहां कैसे मिलेगा? मैं उसके लिये प्रयत्न करूं। वैद्यराजने कहा—

इसी नगरमें भट्ट सोमशर्मा नामका ब्राह्मण निवास करता है। लाक्षामूल तेल उसीके यहां मिल सकता है, और कहीं नहीं। तुम उसके घर जाओ और शीघ्र वह तेल लेआओ। वैद्यराजके ऐसे वचन सुन जिनदत्त शीघ्र ही भट्ट सोमशर्माके घर गया। वहां उसकी तुंकारी नामकी शुभ भार्याको देखकर और उसे बहिन इस शब्दसे पुकार कर यह निवेदन करने लगा—

बहिन! मुनिवर मणिमालीका आधा मस्तक किसीने जला दिया है। उनके मस्तकमें इस समय प्रबल पीड़ा है, कृपाकर मुनि पीड़ाकी निवृत्तिके लिये मूल्य लेकर मुझे कुछ लाक्षामूल तेल दे दीजिये। जिनदत्तकी ऐसी प्रिय बोली (वचन) सुन तुंकारी अति प्रसन्न हुई। उसने शीघ्र जिनदत्तसे कहा—

प्रिय जिनदत्त! यदि मुनि पीड़ा दूर करनेके लिये तुम्हें तेलकी आवश्यकता है तो आप ले जाइये मैं आपसे कीमत न लूंगी। जो मनुष्य इस भवमें जीवोंको औषधि प्रदान करते हैं परभवमें उन्हें कोई रोग नहीं सताता। आप निर्भय हो मेरी अटारीपर चले जाइये। वहां बहुतसे घड़े तेलके रक्खे हैं जितना तुम्हें चाहिये उतना ले जाइये। तुंकारीके ऐसे दयामय वचन सुन जिनदत्त अति प्रसन्न हुआ। अटारीपर चढ़कर उसने चट एक घड़ा उठाकर अपने कन्धेपर रखलिया और चलने लगा।

घड़ा लेकर जिनदत्त कुछ ही दूर गया था कि अचानक ही उसके कन्धेसे घड़ा गिर गया और उसमें जितना तेल था सब फैल कर मिट्टीमें मिल गया। तेलको इस प्रकार जमीन पर गिरा देख जिनदत्तका शरीर मारे भयके कांप गया। वह विचारने लगा हाय !!! बड़ा अनर्थ हो गया। बड़ी कठिनतासे यह तेल हाथ आया था सो अब सर्वथा नष्ट होगया। जाने अब मुझे तेल मिलेगा या नहीं ?

अहा !!! अब तुंकारी मुझपर जरूर नाराज होगी। मैंने बड़ा अनर्थ किया तथा इसप्रकार अपने मनमें कुछ समय सकल्प विकल्प कर वह फिर तुंकारीके पास गया। डरतेर उसे सब हाल कह सुनाया और तेलके लिये फिरसे निवेदन किया। तुंकारी परम भद्रा थी उसने नुकसानपर कुछ भी ध्यान न दिया किन्तु शांतिपूर्वक उसने यही कहा—

प्रिय जिनदत्त ! यदि वह तेल फैल गया तो फैल जाने दो मेरे यहां बहुत तेल रक्खा है, जितना तुझे चाहिये उतना लेजा और मुनिराजकी पीड़ा दूर करनेका उपाय कर। ब्राह्मणीके ऐसे उत्तम किन्तु सन्तोषप्रद वचन सुन जिनदत्तका सारा भय दूर हो गया।

ब्राह्मणीकी आज्ञानुसार उसने शीघ्र ही दूसरा घड़ा अपने कन्धेपर रख लिया किन्तु ज्योंही घड़ा लेकर जिनदत्त कुछ चला कि ठोकर खा चट जमीन पर गिर गया और घड़ाके फूट जानेसे फिर सारा तेल फैल गया। ब्राह्मणीकी आज्ञानुसार जिनदत्तने तीसरा घड़ा भी अपने कन्धेपर रक्खा और कन्धेपर रखते ही वह भी फूट गया। इस प्रकार बराबर जब तीन घड़े फूट गये तो जिनदत्तको परम खेद हुआ।

खिन्न-चित्त हो उसने ब्राह्मणीसे फिर सब हाल जाकर कह सुनाया और कहतेर उसका मुख फीका पड़ गया। तीनों घड़ोंके

इस प्रकार फूट जानेसे सेठ जिनदत्तको अति दुःखित देखकर तुंकारीका चित्त करुणासे आर्द्र होगया। डाट डपटके बदले जिनदत्तको यही कहा—

प्यारे भाई! यदि तीन घड़े फूट गये हैं तो फूट जाने दे। उनके लिये किसी बातका भय मत कर। मेरे घरमें बहुतसे घड़े रक्खे हैं। जब तक तुम्हारा प्रयोजन सिद्ध न हो तब तक तुम एक करके सबोंको ले जाओ। ब्राह्मणीके ऐसे स्नेह भरे वचन सुन जिनदत्तको परम आनन्द हुवा। उसकी आज्ञानुसार उसने शीघ्र ही घड़ा कन्धेपर रख लिया और अपने घरकी ओर चल दिया।

ब्राह्मणीके ऐसे उत्तम बर्तावसे जिनदत्तके चित्तपर असाधारण असर पड़ गया था। ब्राह्मणीके स्नेहयुक्त वचनोंने उसे अपना पक्का दास बना लिया था। इसलिये ज्योंही वह अपने घर पहुँचा, घड़ा रखकर वह फिर तुंकारीके घर आया और विनयपूर्वक इस प्रकार निवेदन करने लगा—

प्रिय बहिन! तू धन्य है। तेरा मन सर्वथा धर्ममें दृढ़ है। तू क्षमाकी भण्डार है। मैंने आजतक तेरे समान कोई स्त्रीरत्न नहीं देखी। जैसी क्षमा तुझमें है संसारमें किसीमें नहीं। मुझसे बराबर तीन घड़े फूट गये, तेरा बहुत नुकसान हो गया। तथापि तुझे जरा भी क्रोध न आया। जिनदत्तके ऐसे प्रशंसायुक्त किन्तु उत्तम वचन सुन तुंकारीने कहा—

भाई जिनदत्त! क्रोधका भयंकर फल मैं चख चुकी हूँ, इसलिये मैंने क्रोध कुछ शांत कर दिया है—मैं जरा जरासी बातपर क्रोध नहीं करती। तुंकारीके ऐसे वचन सुन जिनदत्तने कहा—

बहिन! तुम क्रोधका फल कब चख चुकी हो, कृपाकर मुझे उसका सविस्तार समाचार सुनाओ। इस कथाके सुननेकी मुझे विशेष उत्कण्ठा है। जिनदत्तके ऐसे वचन सुन तुंकारीने कहा—

भाई ! यदि तुझे इस कथाके सुननेकी अभिलाषा है तो मैं कहती हूं, तू ध्यानपूर्वक सुन।

इसी पृथ्वीतलमें आनंदित जनोंसे परिपूर्ण, मनोहर एवं आनंदका आकर एक आनंद नामका नगर है। आनंद नगरमें सम्पत्तिका धारक कोई शिवशर्मा नामक ब्राह्मण निवास करता था। शिवशर्माको प्रिय भार्या कमलश्री थी। कमलश्री अतिशय मनोहरा सुवर्णवर्णा एवं विशालनेत्रा थी। शिवशर्माकी प्रियभार्या कमलश्रीसे उत्पन्न आठ पुत्ररत्न थे। आठों ही पुत्र इन्द्रके समान सुन्दर थे, भव्य थे और धन आदिसे मत्त थे।

उन आठों भाइयोंके बीच मैं अकेली बहिन थी। मेरा नाम भद्रा था। पिता माताका मुझपर असीम प्रेम था। सदा वे मेरा सन्मान करते रहते थे। मेरे भाई भी मुझपर परम स्नेह रखते थे। मै अतिशय रूपवती और समस्त स्त्रियोंमें सारभूत थी इसलिये मेरी भोजाइयें भी मेरा पूरा पूरा सन्मान करती थीं। पाड़पड़ोसी भी मुझपर अधिक प्रेम रखते थे और मुझे शुभ नामसे पुकारते थे। मुझे तुंकार शब्दसे बड़ी चिढ़ थी इसलिये मेरे पिताने राजसभामें भी जाकर कह दिया था। क्या—

राजन् ! मेरी पुत्री तुंकार शब्दसे बहुत चिढ़ती है इसलिये क्या तो मंत्री, क्या नगर निवासी और बांधव, कोई भी उसके सामने तुंकार शब्द न कहें। मेरे पिताके ऐसे वचन सुन राजाने मुझे भी बुलाया। राजाकी आज्ञानुसार मैं दरबारमें गई। मैंने वहां स्पष्ट रीतिसे यह कह दिया कि जो मुझे तुंकारी शब्दसे पुकारेगा, राजाके सामने ही मैं उसके अनेक अनर्थ कर डालूंगी तथा ऐसा कहकर मैं अपने घर लौट आई। उस दिनसे सब लोगोंने चिढ़से मेरा नाम तुंकारी ही रख दिया और मैं क्रोधपूर्वक माता पिताके घरमें रहने लगी।

कदाचित् शुभ ग्रामके वनमें एक पवित्र मुनिराज विराजमान

नाम गुणसागर था, आये। मुनिराजका आगमन समाचार सुन राजा आदि समस्त लोग उनकी वन्दनार्थ गये। मुनिराजके पास पहुंचकर सबोंने भक्तिभावसे उन्हें नमस्कार किया और सबके सब उनके पास भूमिमें बैठ गये। उन सबको उपदेश श्रवणके लिये लालायित देख मुनिराजने उपदेश दिया।

उपदेश सुनकर सबोंको परम संतोष हुआ और अपनी सामर्थ्यके अनुसार सबोंने यथायोग्य व्रत भी ग्रहण किए। मैं भी मुनिराजका उपदेश सुन रही थी अतः मैंने भी श्रावक व्रत धारण कर लिये, किन्तु व्रत धारण करते समय तुंकार शब्दसे उत्पन्न क्रोधका त्याग नहीं किया था।

मुनिराजके उपदेशके समाप्त हो जानेपर सब लोग नगरमें आगये। मैं भी अपने घर आ गई। मेरे भाई जैसे आठ मदयुक्त थे उनके संसर्गसे मैं भी आठ मदयुक्त हो गई। जिस बातकी मैं हठ करती थो उसे पूरा करके मानती। यहांतक कि मुझे हठीली जान मेरा कोई विवाह भी नहीं करता था इसलिये जिस समय मैं युवती हुई तो मेरे पिताको परम कष्ट होने लगा। मेरी विवाह सम्बन्धी चिंता उन्हें रात दिन सताने लगी।

उसी समय एक सोमशर्मा नामका एक ब्राह्मण था। सोमशर्मा पक्का जुवारी था, कदाचित् सोमशर्मा जूआ खेल रहा था। उसने किसी बाजूपर अपना सब धन रख दिया और तीव्र दुर्भाग्यो-दयसे उसे वह हार गया। सब धनके हारनेपर जब जुवारियोंने सोमशर्मासे अपना धन मांगा तो वह न दे सका इसलिये जुवारियोंने उसे किसी वृक्षसे बांध दिया और बुरी तरह लातें डंडे घूसोंसे मारने लगे। शिवशर्माके पास तक भी यह बात पहुंची, वह भागता भागता शीघ्र ही सोमशर्माके पास गया और उससे इस प्रकार कहने लगा—

प्रिय ब्राह्मण! यदि तुम मेरी पुत्रीके साथ विवाह करना स्वीकार करो तो मैं इन जुआरियोंका कर्जा पटादूं और तुम्हें इनके चगुलसे छुटालूं। बस, हे श्रेष्ठिन्! मेरे पिताके ऐसे हितकारी वचन सुन सोमशर्माके ऐसे वचन सुन शिवशर्माने कहा—

ब्राह्मण सरदार! आपकी कन्यामें ऐसा कौनसा दुर्गुण है जिससे उसके लिए कोई योग्य वर नहीं मिलता और पापी, जुआरी, दुष्टोंद्वारा दंडित, मुझे न कुछ पुरुषके साथ उसका विवाह करना चाहते हैं। सोमशर्माने कहा—

प्रियवर! मेरी पुत्रीमें रूप आदिका कुछ भी दोष नहीं है वह अतिशय रूपवती सुन्दरी है। अनेक कलाकौशलोंकी भण्डार है, किन्तु उसमें क्रोधकी मात्रा कुछ अधिक है। वह तुंकार शब्दको सहन नहीं कर सकती। बस जो कुछ दोष है सो यही है। तुम अपने जीवन सुख भोगने लिये यही काम करना कि हम तुमका ही व्यवहार रखना। मैं तूका नहीं। इसके अतिरिक्त दूसरा तुम्हें कोई कष्ट न भोगना पड़ेगा।

शिवशर्माके ऐसे वचन सुन और उस कष्टको कुछ कष्ट न समझ सोमशर्माने उसके साथ विवाह करना स्वीकार कर लिया एवं मेरे पिताने तत्काल जुआरियोंका कर्ज पटा दिया और आनंदपूर्वक उसे अपने घर ले आये। कुछ दिन बाद किसी उत्तम मुहूर्तमें सोमशर्माके साथ मेरा विवाह हो गया। मैं उसके साथ आनदपूर्वक भोग भोगने लगी। वह मुझसे सदा तुमका व्यवहार रखता था। इसलिये मुझे परम सन्तोष रहता था। एवं हम दोनों दम्पतिका आपसमें स्नेह बढ़ता ही चला जाता था।

कदाचित् सोमशर्मा किसी कार्यवश बाहर गये! उन्हें वहां कोई ऐसा स्थान दीख पड़ा जहां बहुतसे नृत्य आदि तमाशे होरहे थे। वे चट वहां बैठ गये और तमाशा देखकर उन्हें

अपने समयका भी कुछ ख्याल न रहा। जब बहुतसी रात्रि बीत चुकी व खेल भी प्रायः समाप्त होनेपर आयुका तो उन्हें घरकी याद आई। वे शीघ्र अपने घरके द्वारपर आकर इस प्रकार पुकारने लगे—

प्राणवल्लभे! कृपाकर तुम किवाड़ खोलो। मैं दरवाजे पर खड़ा हू। मैं उससमय अर्धनिद्रित थी इसलिये दो एक आवाज तो मैं उनकी न सुन सकी, किंतु जब वे स्वभावसे बारबार पुकारने लगे तो मैंने उनकी आवाज तो सुन ली परंतु 'ये इतनी राततक कहां रहे, क्यों अपने समयपर अपने घर न आये, ऐसा उनपर दोषारोपण कर फिर भी मैंने आवाज न दी और न दरवाजा खोला। कुछ समय बाद वे मुझे 'तुम तुम' शब्दसे पुकारने लगे तो भी मैंने उन्हें उत्तर न दिया प्रत्युत मैं उनपर अधिक घृणा करती चली गई और मेरा गर्व भी बढ़ता चला गया। अन्तमें जब सोमशर्मा अधिक घबड़ा गये, मेरी ओरसे उन्हें कुछ भी जवाब न मिला तो उन्हें क्रोध आ गया। क्रोधके आवेशमें उन्हें कुछ न सूझा वे मुझे फिर इस रीतिसे पुकारने लगे।

अरी तुंकारी! किवाड़ तू क्यों नहीं जल्दी खोलती, दरवाजे पर खडे२ मुझे अधिक समय बीत चुका है। रात्रिके अधिक व्यतीत हो जानेसे हम कष्ट भोग रहे हैं।

बस फिर क्या था। रे भाई जिनदत्त! ज्यों ही मैंने अपने पतिके मुखसे तुंकारी शब्द सुना, मेरा क्रोधके मारे शरीर भभक उठा। मेरे पति अर्धरात्रिके बीतनेपर घर आये थे इसलिये मैं स्वभावसे ही उनपर कुपित बैठी थी, किंतु तुंकारी शब्दने मुझे बेहद कुपित बना दिया। मुझे उस समय और कुछ न सूझा, किवाड़ खोल मैं घरसे निकली और वनकी ओर चल पड़ी।

उस समय रात्रि अधिक बीत चुकी थी। नगरमें चारों

ओर सन्नाटा छा रहा था। उस समय उल्लू चोर आदि ही आनन्दसे जहां तहां भ्रमण करते फिरते थे, और कोई नहीं जागता था, मैं अपने घरसे थोड़ी ही दूर गई थी। मेरे बदनपर कीमती भूषण वस्त्र थे इसलिये मुझपर चोरोंकी दृष्टि पड़ी। वे शीघ्र मुझपर वाघ सरीखे टूट पड़े और मुझे कड़ी रीतिसे पकड़कर उन्होंने तत्काल अपने सरदार किसी भीलके पास पहुँचा दिया। चोरोंका सरदार वह भील बड़ा दुष्ट था। ज्यों ही उसने मुझे देखा वह अति प्रसन्न हुआ और इस प्रकार कहने लगा—

बाले! तुझे जिस बातकी आवश्यकता हो कह, मैं उसे करनेके लिये तैयार हूं। तू मेरी प्राणवल्लभा बनना स्वीकार करले। मैं तुझे अपने प्राणोंसे भी अधिक प्यारी रक्खूंगा। तू किसी प्रकार अपने चित्तमें भय न कर। भिल्लपतिके ऐसे वचन सुन मैं भौंचक रह गई, किन्तु मैंने धैर्य हाथसे न जाने दिया इसलिये मैंने शीघ्र ही प्रौढ़ किन्तु शांतिपूर्वक इस प्रकार जवाब दिया—

भिल्लसरदार! आपका यह कथन सर्वथा विरुद्ध और मलिन है। जो स्त्रियां उत्तमवंशमें उत्पन्न हुई हैं और जो मनुष्य कुलीन हैं कदापि उन्हें अपना शीलव्रत नष्ट न करना चाहिये। आप यह विश्वास रक्खें कि जो जीव अपने शीलव्रतकी कुछ भी परवाह न कर दुष्कर्म कर पाड़ते है उन्हें दोनों जन्मोंमें अनेक दुःख सहने पड़ते हैं। संसारमें उनको कोई भला नहीं कहता।

उस समय वह चोरोंका सरदार कामबाणसे विद्ध था। भला वह धर्म अधर्मको क्या समझ सकता था? इसलिये तप्त लोहपिंडपर जलबून्द जैसी तत्काल नष्ट हो जाती है—उसका नाम निशान भी नजर नहीं आता वैसा ही मेरे वचनोंका भिल्लराजके चित्तपर जरा भी असर न पड़ा। वह कबूतरीपर

जैसा बाज टूटता है-एकदम मुझ पर टूट पड़ा और मुझे अपनी दोनों भुजाओंमें भरकर कामचेष्टा करनेके लिए उद्यत हो गया।

जब मैंने उसकी यह घृणित अवस्था देखी तो मैं अपने पवित्र शीलव्रतकी रक्षार्थ आसन बांधकर निश्चल बैठ गई। मैंने उसकी ओर निहारा तक नहीं। बहुत समयतक प्रयत्न करनेपर भी जब उस पापीका उद्देश्य पूर्ण न हो सका तो वह अति कुपित होगया। उसने शीघ्र ही अपने साथियोंके हाथ मुझे बेचडाला और अपने क्रोधकी शांति की।

उसके साथी भी परम दुष्ट थे—ज्योंहि उन्होंने मुझे देखा; देवांगनाके समान परमसुन्दरी जान वे भी कामबाणोंसे व्याकुल होगये और बिना समझे बूझे मेरे शीलव्रतका खण्डन करना प्रारम्भ कर दिया। उस समय कोई वनरक्षिका देवी यह दृश्य देख रही थी इसलिये ज्योंही वे दुष्ट मेरे पास आये मारे डन्डोंके देवीने उन्हें ठीक कर दिया और वह मुझे अपने यहां ले गई।

भाई जिनदत्त! यद्यपि मैं अतिशय पापिनी थी तो भी मैं अपने शीलव्रतमें दृढ़ थी इसलिये उस भयंकर समयमें उस देवीने मेरी रक्षा की। तुम निश्चय समझो, जो मनुष्य अपनी प्रतिज्ञापर दृढ़ रहते हैं, देव भी उनके दास बन जाते हैं और समस्त दुःख उनके एक ओर किनारा कर जाते हैं।

जिस समय देवी मुझे अपने घर ले गई थी उस समय मेरे पास कोई वस्त्र न था इसलिये उस देवीने मुझे एक ऐसा कंबल-जो अनेक जू कीड़ो आदि जीवोंसे व्याप्त था, जगह२ उसमें रक्त, पीव, कीचड़ लगी थी–दे दिया और मुझे वहीं रहनेको आज्ञा दी। मैंने भी कंबल ले लिया और प्रबल पापोदयसे उस क्षेत्रमें उत्पन्न कोदों आदि धान्योंको देखती हुई रहने लगी। इतने पर भी मेरे दुःखोंकी शांति न हुई, प्रतिपक्षमें

वह देवी मेरे शिरके केशोंका मोचन करती थी और अपने वस्त्रके रंगनेके लिये उससे रक्त निकाला करती थी। रक्त निकालते समय मेरे मस्तकमें पीड़ा होती थी इसलिये वह देवी उस पीड़ाको लाक्षामूल तेल लगाकर दूर करती थी।

कदाचित् मेरे परमस्नेही भाई यौवनदेवको उज्जयनीके राजाने किसी कार्यवश बड़ी विभूतिके साथ राजा पारासरके पास भेजा। वह अपना कार्य समाप्त कर उज्जयनी लौट रहा था। मार्गमें कुछ समयके लिये जिस वनमें मैं रहती थी उसी वनमें वह ठहर गया और मुझ अभागनीपर उसकी दृष्टि पड़ गई।

ज्यों ही उसने मुझे देखा, बड़े स्नेहसे मुझे अपने हृदय लगाया और बड़ी कठिनतासे उस देवीके चंगुलसे निकाल कर मुझे उज्जयनी ले गया। जिस समय मेरी माता आदि कुटुम्बियोंने मुझे देखा उन्हें परम दुःख हुआ। मेरे शरीरकी दशा देख मेरी मां अधिक दुःख मानने लगी, मेरे मिलापसे मेरा समस्त बंधुवर्ग अति प्रसन्न हुवा एवं कुछ दिन बाद मेरा भाई धनदेव मुझे यहां मेरे पतिके घर पहुंचा गया।

प्रिय भाई, जबसे मै यहां आई हू तबसे मैने जरा जरासी बातपर क्रोध करना छोड़ दिया है। मै क्रोधका फल भयंकर चख चुकी हूँ इसलिये और भी मैं क्रोधकी मात्रा दिनों दिन कमती करती जाती हूं। आप निश्चय समझिये, यह धर्मरूपी वृक्ष सम्यग्दर्शनरूपी जड़का धारक, शास्त्ररूपी पींड़कर युक्त, दानरूपी शाखाओंसे शोभित, अनेक प्रकारके गुणरूपी पत्तोंसे व्याप्त, कीर्तिरूपी पुष्पोंसे सुसज्जित, व्रतरूपी उत्तम आलवालसे मनोहर, मोक्षरूपी फलको देनेवाला व क्षमारूपी जलसे बढ़ा हुआ परम पवित्र है। यदि इसमें किसी रीतिसे क्रोधरूपी अग्नि प्रवेश कर जाय तो वह कितना भी बड़ा क्यों न हो तत्काल भस्म

हो जाता है, इसलिये जो मनुष्य अपना हित चाहते हैं उन्हें ऐसा भयंकर फल देनेवाला क्रोध सर्वथा छोड़ देना चाहिये।

ब्राह्मणी तुंकारीके मुखसे ऐसी कथा सुन सेठ जिनदत्त अति प्रसन्न हुवा। वह तुंकारीकी बारबार प्रशंसा करने लगा एवं प्रशंसा करता २ कुछ समय बाद अपने घर आया। लाक्षामूल तेल एवं अन्यान्य औषधियोंसे जिनदत्त मेरी (मुनिराजकी) परिचर्या करने लगा। कुछ दिन बाद मेरे रोगकी शांति हुई। मुझे निरोग देखकर जिनदत्तको परम सन्तोष हुवा। मेरी निरोगताकी खुशीमें जिनदत्त आदि सेठोंने अति उत्सव मनाया। जहां तहां जिनमदिरोंमें विधान होने लगे एवं कानोंको अति प्रिय उत्तमोत्तम बाजे भी बजने लगे।

राजन् श्रेणिक! इधर तो मैं निरोग हुवा और उधर वर्षाकाल भी आगया। उस समय आनदसे वृष्टि होने लगी। जहां तहां बिजली चमकने लगी। एवं प्रत्येक दिशामें मेघध्वनि सुन पड़ी। उस समय हरित वनस्पतिसे आच्छादित, जलबून्दोंसे व्याप्त पृथ्वी अति मनोहर नजर आने लगी। जैसे हरितकांत मणिपर जड़े हुवे सफेद मोती शोभित होते हैं, हरी वनस्पतिपर स्थित जल बूंदें उस समय ठीक वैसी ही शोभाको धारण करती थी।

उस समय मयूर चारों ओर आनन्द शब्द करते थे। विरहिणी कामिनियोंके लिये वह मेघमाला जलती हुई अग्नि ज्वालाके समान थी और अपनी प्राणवल्लभाके अधरामृत पानके लोलुपी, क्षणभर भी उसके विरहको सहन न करनेवाले कामियोंके मार्गको रोकनेवाली थी। जिस समय विरहिणी स्त्रियां अपने २ घोंसलोंमें आनंदपूर्वक प्रेमालिंगन करते हुवे बगली बगलोंको देखती थीं उन्हें परम दुःख होता था। वे अपने मनमें ऐसा विचार करती थीं-हाय!!! वह पति विरह दुःख हम पर कहांसे

टूट पड़ा। क्या यह दुःख हमारे ही लिये था ? हम कैसे इस दुःखको सहन करें।

इस प्रकार जीवोंको स्वभावसे ही सुख दुःखके देनेवाले वर्षाकालके आजानेसे जिनदत्त आदिने चातुर्मासके लिये मुझे उस नगरमें ही रहनेके लिये आग्रह किया इसलिये मैं वहीं रह गया एवं ध्यानमें दत्तचित्त, जीवोंको उत्तम मार्गका उपदेश देता हुआ मैं सुखपूर्वक जिनदत्तके घरमें रहने लगा।

सेठ जिनदत्तका पुत्र जो कि अति व्यसनी और दुर्ध्यानी कुबेरदत्त था, कुबेरदत्तसे जिनदत्त धन आदिके विषयमें सदा शंकित रहता था। कदाचित् सेठ जिनदत्तने एक तांबेके घड़ेको रत्नोंसे भरकर और मेरे सिंहासनके नीचे एक गहरा गढ़ा खोदकर चुपचाप रख दिया, किन्तु घड़ा रखते समय कुबेरदत्त मेरे सिंहासनके पीछे छिपा था इसलिये उसने यह सब दृश्य देख लिया और कुछ दिन बाद वहांसे उस घड़ेको उखाड़ कर अपने परिचित स्थान पर उसने रख दिया।

कुछ दिन बाद चातुर्मास समाप्त हो गया। मैंने भी अपना ध्यान समाप्त कर दिया एवं हेयोपादेय विचारमे तत्पर ईर्या-समितिपूर्वक मैं वहांसे निकला और वनकी ओर चल दिया।

मेरे चले जानेके पश्चात् सेठ जिनदत्तको अपने धनकी याद आई। जिस स्थानपर उसने रत्नभरा घड़ा रक्खा था तत्काल उसे खोदा। वहां घड़ा था नहीं इसलिये जब उसे घड़ा न मिला तो वह इस प्रकार संकल्प विकल्प करने लगा—

हाय ! मेरा धन कहां गया ? किसने ले लिया ? अरे मेरे प्राणोंके समान, यत्नसे सुरक्षित, धन अब किसके पास होगा ? हाय ! रक्षार्थ मैंने दूसरी जगहसे लाकर यहां रक्खा था, उसे यहांसे भी किसी चोरने चुरा लिया ! जब बाढ़ ही खेत खाने लगी तो दूसरा मनुष्य कैसे उसकी रक्षा कर सकता है ?

मुनिराजके सिवाय इस स्थानपर दूसरा कोई मनुष्य नहीं रहता था। शायद मुनिराजके परिणामोंमें मलिनता आ गई हो, उन्होने ही ले लिया हो। पूछनेमें कोई हानि नहीं, चलूं मुनिराजसे पूछ लूं ऐसा कुछ समयपर्यन्त विचारकर शीघ्र ही जिनदत्तने कुछ नौकर मेरे अन्वेषणार्थ भेजे और स्वय भी घरसे निकल पड़ा एवं कपटवृत्तिसे जहां तहां मुझे ढूंढने लगा।

मैं वनमें किसी पर्वतकी तलहटीमें ध्यानारूढ़ था। मुझे जिनदत्तकी कपटवृत्तिका कुछ भी ख्याल न था। अचानक ही घूमता घूमता वह मेरे पास आया। भक्तिभावसे मुझे नमस्कार किया एव कपटवृत्तिसे वह इसप्रकार प्रार्थना करने लगा—

प्रभो! दीनबन्धो! जबसे आपने उज्जयनी छोड़ दी है तबसे वहांके निवासी श्रावक बड़ा दुःख मान रहे हैं। आपके चले जानेसे वे अपनेको भाग्यहीन समझते हैं और अहोरात्र आपके दर्शनोंके लिये लालायित रहते हैं। कृपाकर एक समय आप जरूर ही उज्जयनी चलें और उन्हें आनदित करें, पीछे आपके आधोन बात हैं चाहें आप जावे या न जावें। जिनदत्तकी ऐसी वचन भगी सुन मैं अवाक् रह गया, मुझे शीघ्र ही उसके भीतरी अभिप्रायका ज्ञान हो गया। धनके लिये उसका ऐसा वर्ताव सुन मैं अपने मनमें ऐसा विचार करने लगा—

यह धन बड़ा निकृष्ट पदार्थ है। यह दुष्ट, जीवोंको घोर पापका संचय करानेवाला और अनेक दुःख प्रदान करनेवाला है। हाय !!! जो परममित्र है अपना कैसा भी अहित नहीं चाहता वह भी इस धनकी कृपासे परम शत्रु बन जाता है और अनेक अहित करनेके लिये तैयार हो जाता है। प्राणप्यारी स्त्री इस धनकी कृपासे सर्पिणीके समान भयंकर बन जाती है। जन्मदात्री, सदा हित चाहनेवाली माता भी धनके चक्रमें पड़कर

भयंकर व्याघ्री बन जाती है, धनके लिये पुत्रके मारनेमें वह जरा भी संकोच नहीं करती।

धनके फेरमें पड़कर एक भाई दूसरे भाईका भी अनिष्ट चिन्तन करने लग जाता है। पिता भी धनकी ही कृपासे अपनेको सुखी मानता है। यदि कुटुम्बी धन नहीं देखते हैं तो जहां तहां निन्दा करते फिरते हैं। बहिन भी धनके चक्रमें फसकर हलाहल बिष सरीखी जान पड़ती है। निर्धन भाईके मारनेमें उसे जरा भी संकोच नहीं होता।

हाय !!! समस्त परिग्रहके त्यागी, आत्मीक रसमें लीन, मुनिराज भी इस दुष्ट धनकी कृपासे चोर बन जाते हैं। इस धनके लिये पिता अपने प्यारे पुत्रको मार देता है। पुत्र भी अपने प्यारे पिताको यमलोक पहुँचा देता है। धनके पीछे भाई भाईको मार देता है। सेवक स्वामीका प्राणघात कर देते हैं। धनके लिये जीव अपने शरीरकी भी परवाह नहीं करते।

हाय !!! ऐसे धनको सहस्रबार धिक्कार है। यह सर्वथा हिंसामय है। इसके चक्रमें फंसे हुवे जीव कदापि सुखी नहीं हो सकते तथा इस प्रकार धनकी बार बार निंदा करते हुवे मुझे वह पुनः अपने घर ले गया एवं वहां पहुँचकर वह कहने लगा —

नाथ! कृपाकर मुझे कोई कथा सुनाइये। मुझे आपके मुखसे कथा श्रवणकी अधिक अभिलाषा है। उसके ऐसे वचन सुन मैंने कहा—

जिनदत्त! तुम्हीं कोई कथा कहो, हम तुम्हारे मुखसे ही कथा सुनना चाहते हैं। बस फिर क्या था? वह तो कथा द्वारा अपना भीतरी अभिप्राय बतलाना चाहता ही था इसलिये ज्योंही उसने मेरे वचन सुने वह अति प्रसन्न हुआ और कहने लगा—

प्रभो! आपकी आज्ञानुसार मैं कथा सुनाता हूँ, आप ध्यानपूर्वक सुनें और मुझे क्षमा करें।

इसी जम्बूद्वीपमें एक अतिशय मनोहर बनारस नामकी नगरी है। बनारस नगरीका स्वामी जो नीतिपूर्वक प्रजाका पालक था, राजा जितमित्र था। राजा जितमित्रके यहां एक अगदंकार नामका राजवैद्य था। उसकी स्त्री धनदत्ता अतिशय रूपवती एवं साक्षात् कुबेरकी स्त्रीके समान थी। राजकी ओरसे वैद्य अगदंकारको जो आजीविका दी जाती थी उसीसे वह अपना गुजारा करता था एवं इन्द्रके समान उत्तमोत्तम भोग भोगता हुआ वहां आनंदसे रहता था।

वैद्यवर अगदंकारके अतिशय सुन्दर दो पुत्र थे। प्रथम पुत्र धनमित्र था और दूसरेका नाम धनचन्द्र था। दोनों भाई माता-पिताके लाडले अधिक थे इसलिये अनेक प्रयत्न करनेपर भी वे फूटा अक्षर भी न पढ़ सके। रोग आदिकी परीक्षाका भी उन्हें ज्ञान न हुवा एवं वे निरक्षर भट्टाचार्य होकर घरमें रहने लगे।

कुछ दिन बाद अशुभकर्मकी कृपासे वैद्यवर अगदंकारका शरीरांत हो गया। वे धनमित्र और धनचन्द्र अनाथ सरीखे रह गये। राजाकी ओरसे जो आजीविका बंधी थी, राजाने उसे भी उन्हें मूर्ख जान छीन ली इसलिए उन दोनों भाइयोंको और भी अधिक दुःख हुवा एवं अतिशय अभिमानी किन्तु अतिशय दुःखित वे दोनों भाई कुछ विद्या सीखनेके लिए चम्पापुरीकी ओर चल दिये।

उस समय चम्पापुरीमें कोई शिवभूति नामका ब्राह्मण निवास करता था। शिवभूति वैद्य विद्याका अच्छा ज्ञाता था इसलिए वे दोनों भाई उसके पास गये एवं कुछ काल वैद्यक शास्त्रोंका भले प्रकार अभ्यास कर वे भी वैद्य विद्याके उत्तम जानकार बन गये।

जब उन्होंने देखा कि हम अच्छे विद्वान बन गये तो उन दोनोंने अपनी जन्मभूमि बनारस जानेका विचार किया एवं

प्रतिज्ञानुसार वे वहांसे चल भी दिये । मार्गमें वे आनन्दपूर्वक आ रहे थे कि अचानक ही उनकी दृष्टि एक व्याघ्रपर पड़ी । व्याघ्र सर्वथा अंधा था और आंखोंके न होनेसे अनेक क्लेश भोग रहा था ।

व्याघ्रको अंधा देखकर धनमित्रका चित्त दयासे आर्द्र हो गया । उसने शीघ्र ही अपने छोटे भाईसे कहा—

प्रिय धनचंद्र ! कहो तो मैं इस दीन व्याघ्रको उत्तम औषधियोंके प्रतापसे अभी सूझता करदूं ? यह बिचारा आंखोंके बिना कष्ट सह रहा है । धनमित्रकी ऐसी बात सुन धनचंद्रने कहा—

नहीं भाई, इसे तुम सूझता मत करो । यह स्वभावसे दुष्ट है, इसके फंदेमें पड़कर अपनी जान बचाना भी कठिन पड़ जायगी । दुष्टोंपर उपकार करनेसे कुछ फल नहीं मिलता ।

धनमित्रका काल शिर पर छारहा था । उसने छोटे भाई धनचन्द्रकी जरा भी बात न मानी और तत्काल व्याघ्रको सूझता बनानेके लिये तत्पर हो गया । जब धनचन्द्रने देखा कि धनमित्र मेरी बातको नहीं मानता है तो वह शीघ्र ही समीपवर्ती किसी वृक्षपर चढ़ गया और पत्तियोंसे अपनेको छिपाकर सब दृश्य देखने लगा ।

धनमित्र व्याघ्रकी आंखोंकी दवा करने लगा । औषधियोंके प्रभावसे बातकी बातमें धनमित्रने उसे सूझता बना दिया किंतु दुष्ट अपनी दुष्टता नहीं छोड़ते । ज्योंही व्याघ्र सूझता हो गया उसने तत्काल ही धनमित्रको खा लिया और आनंदसे जहां तहां घूमने लगा । इसलिये हे प्रभो मुने ! क्या व्याघ्रको यह उचित था जो कि वह अपने परमोपकारी दुःख दूर करनेवाले धनमित्रको खा गया ? कृपया आप मुझे कहें । सेठ जिनदत्तके मुखसे ऐसी कथा सुन मुनिराजने कहा—

जिनदत्त! व्याघ्र बड़ा कृतघ्नी निकला। निस्संदेह उसने परमोपकारी जिनदत्तके साथ अनुचित वर्ताव किया, तुम निश्चय समझो जो मनुष्य कृत उपकारका खयाल नहीं करते वे घोर पापी समझे जाते हैं। संसारमें उन्हें नरकादि दुर्गतिओंके फल भोगने पड़ते हैं। मैं तुम्हारी कथा सुन चुका, अब तुम मेरी कथा सुनो जिससे सशय दूर हो।

इसी जम्बूद्वीपमें एक हस्तिनापुर नामका विशाल नगर है। किसी समय हस्तिनापुरका स्वामी अतिशय बुद्धिमान राजा विश्वसेन था। विश्वसेनकी प्रिय भार्या रानी वसुकांता थी। वसुकांता अतिशय मनोहरा चन्द्रवदनी मृगनयनी कृशांगी एवं पूर्ण चन्द्रानना थी।

राजा विश्वसेनकी रानी वसुकांतासे उत्पन्न एक पुत्र जो कि शुभ लक्षणोंका धारक, सदा धनवृद्धिका इच्छुक, वीर एव सर्वोत्कृष्ट वसुदत्त था। राजा विश्वसेनने वसुदत्तको योग्य समझ राज्यभार उसे ही दे दिया था और आनदपूर्वक भोग भोगते वे अपने अन्त.पुरमें रहने लगे।

कदाचित् वे आनंदमें बैठे थे उस समय कोई एक सार्थवाह मनुष्य उनके पास आया। उसने भक्तिपूर्वक उन्हें नमस्कार किया एवं अपनी भक्ति प्रकट करनेके लिये एक आमकी गुठली उनको भेट की। राजा विश्वसेनने गुठली तो लेली किंतु वे उसकी परीक्षा न कर सके इसलिये उन्होंने शीघ्र ही सार्थवाहसे पूछा—

कहो भाई, यह क्या चीज है? मैं इसको पहिचान न सका। राजाके ऐसे वचन सुन सार्थवाहने कहा—

कृपानाथ! समस्त रोगोंको नाश करनेवाला आम्रफलका यह बीज है। इस देशमें यह फल होता नहीं इसलिये यह अपूर्व पदार्थ जान मैंने आपकी सेवामें आकर भेंट किया है। सार्थवाहके ऐसे विनयी वचनोंसे राजा विश्वसेन अति प्रसन्न हुए।

उनका प्रेम रानी वसुकांतामें अधिक था इसलिये उन्होंने यह समझ कि बिना रानीके मेरा नीरोग होना किस कामका? झट रानीको बीज दे दिया।

रानीका प्रेम पुत्र वसुदत्त पर अधिक था इसलिये उसने गुठली उठा वसुदत्तको दे दिया। जब वह आमका बीज वसुदत्तके हाथमें आया तो वे उसे जान न सके और उनका प्रेम पिता पर अधिक था इसलिये उन्होंने शीघ्र ही वह बीज पिताको दे दिया और विनयसे यह प्रार्थना की कि पूज्यपिता! यह क्या चीज है, कृपाकर मुझे बतावें? वसुदत्तके ऐसे वचन सुन राजा विश्वसेनने कहा—

प्यारे पुत्र! अमृतफल-आम पैदा करनेवाला यह आमका बीज है। इससे जो फल उत्पन्न होता है उससे समस्त रोग शांत हो जाते हैं। यह फल हमें सार्थवाहने भेंट किया है तथा ऐसा कहते कहते उन्होंने शीघ्र ही किसी चतुर मालीको बुलाया और स्त्री पुत्र आदिके निरोगपनेकी आशासे किसी उत्तम क्षेत्रमें बोनेके लिये शीघ्र ही आज्ञा दे दी।

राजाकी आज्ञानुसार मालीने उसे किसी उत्तम क्षेत्रोंमें बो दिया। प्रतिदिन स्वच्छ जल सींचना भी प्रारम्भ कर दिया। कुछ दिन बाद मालीका परिश्रम सफल हो गया। वह वृक्ष उत्तमोत्तम फलोंसे लदबदा गया एवं प्रतिदिन मालीको आनन्द देने लगा।

किसी समय एक गृद्धपक्षी आकाशमार्गसे किसी एक जहरीले सर्पको मुखमें दबाये चला जा रहा था। भाग्यवश एक फल पर सर्पको विष-बूंद गिर गई, विषकी गर्मीसे वह फल भी जल्दी पक गया। मालीने आनन्दित हो फल तोड़ लिया और उसे राजाकी सभामें जाकर भेंट कर दिया। राजा विश्वसेनको फल देख परम आनन्द हुआ। उन्होंने मालीको उचित पारितोषिक

दे सन्तुष्ट किया एवं अपने प्रिय पुत्रको बुलाकर उसे फल खानेकी आज्ञा दे दी।

आम्रफल विष-बूंदसे विषमय हो चुका था इसलिये ज्यों ही कुमारने फल खाया कि खाते ही उसके शरीरमें विष फैल गया। बातकी बातमें वह मूर्छित हो जमीन पर गिर गया और उसकी चेतना एक ओर किनारा कर गई। अपने इकलौते और प्रिय पुत्र वसुदत्तकी यह दशा देख राजा विश्वसेन बेहोश हो गये, उन्होंने वह सब कार्य आम्र फलका जान तत्काल उसे कटवानेकी आज्ञा दे दी एवं पुत्रकी रक्षार्थ शीघ्र ही राजवैद्यको बुलवाया।

राजवैद्यने कुमारकी नाड़ी देखी। नाड़ीमें उसे विष विकार जान पड़ा इसलिये उसने शीघ्र ही उसी आम्र फलका एक फल मंगाया और कुमारको खिलाकर तत्काल निर्विष कर दिया! राजा विश्वसेनने जब आम्रफलका यह माहात्म्य देखा तो उन्हें बड़ा शोक हुआ, वे अपने उस अविचारित कार्यके लिये बराबर पश्चात्ताप करने लगे। और अपनी मूर्खताके लिये सहस्रबार धिक्कार देने लगे।

हे जिनदत्त! यह तुम निश्चय समझो कि जो हतबुद्धि मनुष्य बिना समझे काम कर बैठते हैं उन्हें पीछे पछताना पड़ता है। बिना समझे काम करनेवाले मनुष्य निंदा भाजन बन जाते हैं। अब तुम्हीं इस बातको कहो कि राजाने जो वह आम बिना विचारे कटवा दिया था वह काम क्या उसका उत्तम था? मुझसे यह कथा सुन जिनदत्तने कहा—

नाथ! राजाका वह कार्य सर्वथा बेसमझका था। मैं आपको एक दूसरी कथा सुनाता हूं, आप ध्यानपूर्वक सुनें।

किसी समय किसी गंगा किनारे एक विश्वभूति नामका तपस्वी रहता था। कदाचित् एक हाथीका बच्चा नदीके प्रवाहमें बहा चला आता था। तपस्वीकी अचानक ही उसपर दृष्टि पड़

गई। दयावश उसने शीघ्र ही उस हाथीके बच्चेको पकड़ लिया। वह बच्चा शुभ लक्षणयुक्त था इसलिए वह तपस्वी उत्तमोत्तम फल आदि खिलाकर उसका पोषण करने लगा और चन्दरोजमें ही वह बच्चा एक विशाल हाथी बन गया।

कदाचित् किसी राजाकी दृष्टि उस हाथीपर पड़ी तो उसे शुभ लक्षणयुक्त देख राजाने उसे खरीद लिया और अपने घर ले जाकर सिखानेके लिए किसी महावतके सुपुर्द कर दिया। राजाकी आज्ञानुसार महावत उसे सिखाने लगा। जब वह सीखनेमें टालमटोल करता था तब महावत उसे मारे मारे अंकुशोंके वशमें करता था।

इस प्रकार कुछ समय तो वह हाथी वहां रहा। जब उसे अकुश बहुत दु:ख देने लगा तो वह भगकर गगाके किनारे उसी तपस्वीके पास गया।

ज्योंही तपस्वीने उसे देखा तो उसने भी उसे न रक्खा, मारपीट कर वहांसे भगा दिया। तपस्वीका ऐसा वर्ताव देख हाथीको क्रोध आ गया एव उस दुष्टने उपकारी तपस्वीको तत्काल चीर कर मार दिया।

कृपानाथ! अब आप ही कहें, परोपकारी उस तपस्वीके साथ क्या हाथीका वह वर्ताव उत्तम था? मैंने कहा—

जिनदत्त! वह हाथी बडा दुष्ट था। दुष्टने जरा भी अपने उपकारीकी दया न की। देखो, जो मनुष्य दूसरेके उपकारको भूल जाते हैं उन्हें अनेक वेदनाएं सहनी पड़ती हैं। नरकादि गतियां उनके लिए सदा तैयार रहती हैं एवं बुद्धिमान लोग स्वभावसे हिंसक और उपकारीके हिंसकमें उतना ही भेद मानते हैं। मैं तुम्हारी कथा सुन चुका। मैं भी एक दूसरी कथा कहता हूँ तुम उसे ध्यानपूर्वक सुनो—

इसी पृथ्वीपर एक चम्पापुरी नामकी सर्वोत्तम नगरी है।

किसी समय कुबेरपुरीके तुल्य उस चंपापुरीमें एक देवदत्ता नामकी वेश्या रहती थी। देवदत्ता अतिशय सुन्दरी थी। यदि उसके लिए देवांगना कह दिया जाता तो भी उसके लिये कम था। उसके पास एक पालतू तोता था वह उसे अपने प्राणोंसे भी प्यारा समझती थी।

कदाचित् रविवारके दिन तोतेके लिए प्यालेमें शराब रखकर वह तो किसी कार्यवश भीतर चली गई और इतने हीमें एक लड़की वहां आई। उसने उस शराबमें विष डाल दिया और शीघ्र वहांसे चपत हो गई।

देवदत्ताको इस बातका पता न लगा, वह अपने सीधे स्वभावसे बाहिर आई और तोताको शराब पिलाने लगी, किन्तु तोता वह सब दृश्य देख रहा था इसलिये अनेकबार प्रयत्न करने पर भी उसने शराबमें चोंच तक न बाली। वह चुपचाप बैठा रहा। देवदत्ता जबरन उसे शराब पिलाने लगी तो वह चिल्लाने लगा इसलिये देवदत्ताको क्रोध आ गया और उसने उसे तत्काल मारकर फेंक दिया।

अब हे जिनदत्त! तुम्हीं कहो देवदत्ताका यह अविचारित काम क्या योग्य था? जिनदत्तने उत्तर दिया—

नाथ! यदि देवदत्ताने ऐसा काम किया तो परम मूर्खा समझनी चाहिए। मैं अब आपको तीसरी कथा सुनाता हूँ कृपया उसे ध्यानपूर्वक सुनें।

इसी लोकमें एक अतिशय मनोहर एवं प्रसिद्ध बनारस नामकी नगरी है। किसी समय बनारसमें कोई वसुदत्त नामका सेठ निवास करता था। वसुदत्त उत्तम दर्जेका व्यापारी था, धनी था, सुवर्ण निर्मित मकानमें रहता था और बड़ा तुन्दिल (बड़ी तोंदका) था। वसुदत्तकी प्रिय भार्याका नाम वसुदत्ता था।

वसुदत्ता बड़ी चतुरा थी। विनयादि गुणोंसे अपने पतिको संतुष्ट करनेवाली थी और मनोहरा थी।

कदाचित् उसी नगरीमें एक चोर किसीके घर चोरीके लिए गया। उस समय उस घरके मनुष्य जाग रहे थे इसलिये चोरको उन्होंने देख लिये। देखते ही चोर भगा। भागते समय उसके पीछे बहुतसे मनुष्य थे इसलिये घबड़ाकर वह सेठ सुभद्रदत्तके घरमें घुस पड़ा और सुभद्रदत्तसे इस प्रकार विनय वचन कहने लगा—

कृपानाथ! मुझे बचाइये मैं मरा। चोरके ऐसे वचन सुन सुभद्रदत्तको दया आ गई। उसने चोरको शीघ्र ही अपने कपड़ोमे छिपा लिया। कोतवाल आदि सेठजीके पास आये। सेठजीसे चोरकी बाबत पूछा भी तौ भी सेठजीने कुछ जवाब न दिया। जहां तहां सबोंने चोर देखा कहीं न दीख पड़ा किन्तु सेठजीकी बड़ी तोदके नीचे ही वह छिपा रहा। इसलिये वे सबके सब पीछेको लौट गये।

जब विघ्न शांत हो गया तब चोरको जानेकी आज्ञा देदी तथा यह समझ कि चोर चला गया वे अपने किवाड़ बन्द कर सो गये। किन्तु वह दुष्ट उसी घरमें छिप गया और दाव पाकर मालमता लेकर चपत हो गया। प्रातःकाल सेठ सुभद्रदत्तकी आंख खुली। अपनी चोरी देख उन्हें दुःख हुआ।

वे कहने लगे मैंने तो उस दुष्ट चोरकी रक्षा की थी किन्तु उस दुष्टने मेरे साथ भी यह दुष्टता की। यह बात ठीक है कि दुष्ट अपनी दुष्टता कदापि नहीं छोड़ते तथा ऐसा कुछ समय सोच विचारकर वे शांत हो गये। इसलिए हे मुनिनाथ! आप ही कहें क्या उस चोरका सेठ सुभद्रदत्तके साथ वैसा वर्ताव उत्तम था? मैंने उत्तर दिया—

सर्वथा अनुचित। उसने सेठ सुभद्रदत्तके साथ बड़ा विश्वास-घात किया। वह चोर बड़ा पापी और कुमार्गी था। इसमें जरा भी संदेह नहीं। अब मैं भी तुम्हें कथा सुनाता हूं, मुझे विश्वास है अबकी कथासे तुम्हें जरूर संतोष होगा। तुम ध्यानपूर्वक सुनो—

इसी लोकमें कामदेवका रंगस्थल अतिशय मनोहर एक बंग देश है। बंगदेशमें एक चम्पापुरी नामकी नगरी है। चम्पापुरीमें जातीय मुकुन्द केतकी चम्पा आदिके वृक्ष सदा हरे भरे, फले फूले रहते हैं, सदा उत्तम मनुष्य निवास करते हैं।

चम्पापुरीमें एक ब्राह्मण जो कि भले प्रकार वेद वेदांगका पाठी और धनी था, सोमशर्मा था। सोमशर्माकी अतिशय रूपवती दो स्त्रियां थीं। प्रथम स्त्री सोमिल्ला और दूसरीका नाम सोमशर्मिका था। भाग्योदयसे सुन्दरी सोमिल्लाको पुत्रवती देख सोमशर्मा उसपर अधिक प्रेम करने लगा और सोमशर्मिकाकी ओरसे उसका प्रेम कुछ हटने लगा।

स्त्रियां स्वभावसे ही ईर्षा द्वेषकी खानि होती हैं। यदि उनको कुछ कारण मिल जाय तब तो ईर्षा, द्वेष करनेमें वे जरा भी नहीं चूकती।

ज्योंही सोमशर्मिकाको यह पता लगा कि मेरा पति मुझपर प्रेम नहीं करता, सोमिल्लाको अधिक चाहता है, मारे क्रोधके वह भभक उठी। वह उसी दिनसे सोमिल्लासे मर्मभेदी वचन कहने लगी। हास्य और कलह करना भी प्रारम्भ कर दिया, यहां तक कि सोमिल्लाका अहित करनेमें भी वह न डरने लगी।

उसी नगरीमें एक भद्र नामका बैल रहता था। भद्र सुशील और शांत प्रकृतिका धारक था इसलिए समस्त नगर निवासी उस पर बड़ा प्रेम करते थे। [illegible] भद्र (बैल) [illegible] [illegible] पर [illegible] कि [illegible] सोमशर्मिकाकी

दृष्टि उस पर पड़ी, उसने शीघ्र ही अपनी सौत सोमिल्लाके बालकको ऊपर अटारीसे बैलके सींगपर पटक दिया एवं सींगपर गिरते ही रोता हुवा वह बालक शीघ्र मर गया।

नगर निवासियोंको बालककी इसप्रकार मृत्युका पता लगा। वे दौड़ते २ शीघ्र ही सोमशर्माके यहां आये। बिना विचारे सबोंने बालककी मृत्युका दोष बिचारे बैलके मत्थेपर ही मढ़ दिया। जो बैलको घास आदि खिलाकर नगरनिवासी उसका पालन पोषण करते थे सो भी छोड़ दिया और मारपीट कर उसे नगरसे बाहिर भगा दिया जिससे वह बैल बड़ा खिन्न हुआ, बिलकुल लट गया। तथा किसी समय अतिशय दुःखी हो वह ऐसा विचार करने लगा—

हाय !!! इन स्त्रियोंके चारित्र बड़े विचित्र हैं। बड़े २ देव भी जब इनका पता नहीं लगा सकते तो मनुष्य उनके चारित्रका पता लगालें यह बात अति कठिन है। ये दुष्ट स्त्रियां निकृष्ट काम कर भी चट मुकर जाती हैं और मनुष्यों पर ऐसा असर डाल देती हैं मानो हमने कुछ किया ही नहीं। ये मायाचारिणी महापापिनी हैं। दूसरों द्वारा कुछ और ही कहवाती हैं और स्वयं कुछ और ही कहती हैं। ये कटाक्षपात किसी और पर फेंकती हैं, इशारे किसी अन्यकी ओर करती है और आलिंगन किसी दूसरेसे ही करती हैं तथा वस्तुका वायदा तो इनका किसी दूसरेके साथ होता है और किसी दूसरेको दे बैठती हैं।

कवियोंने जो इन्हें अबला कहकर पुकारा है सो ये नामसे ही अबला (शक्तिहीन) हैं कामसे अबला नहीं। जिस समय ये क्रूर काम करनेका बीड़ा उठा लेती हैं तो उसे तत्काल कर पाड़ती हैं और अपने कटाक्षपातोंसे बड़े २ वीरोंको भी अपना दास बना लेती हैं। चाहे अतिशय उष्ण भी अग्नि शीतल हो

जाय, शीतल चन्द्रमा उष्ण हो जाय, पूर्व दिशामें उदित होनेवाला सूर्य भी पश्चिम दिशामें उदित हो जाय किंतु स्त्रियां झूठ छोड़ कभी भी सत्य नहीं बोल सकतीं।

हाय! जिस समय ये दुष्ट स्त्रियां परपुरुषमें आसक्त हो जाती हैं उस समय अपनी प्यारी माताको नहीं छोड़ देती हैं, प्राणप्यारे पुत्रकी भी परवा नहीं करती। परम स्नेही कुटुम्बी-जनोंका भी लिहाज नहीं करतीं। विशेष कहां तक कहा जाय, अपनी प्यारी जन्मभूमिको छोड़ परदेशमें भी रहना स्वीकार कर लेती हैं। ये नीच स्त्रियां अपने उत्तम कुलको भी कलङ्कित बना देती हैं, पति आदिसे नाराज हो मरनेका भी साहस कर लेती हैं और दूसरोंके प्राण लेनेमें भी जरा नहीं चूकतीं।

अहा!!! जिन योगीश्वरोंने स्त्रियोंकी वास्तविक दशा विचार कर उनसे सर्वथाके लिए सम्बन्ध छोड़ दिया है, स्त्रियोंकी बात भी जिनके लिए हलाहल विष है वे योगीश्वर धन्य हैं और वास्तविक आत्मस्वरूपके जानकार हैं। हाय!!! ये स्त्रियां छलकपट दगाबाजीकी खानि हैं, समस्त दोषोंकी भन्डार हैं, असत्य बोलनेमें बड़ी पण्डिता हैं, विश्वासके अयोग्य हैं, चौतर्फा इनके शरीरमें कामदेव व्याप्त रहता है। मोक्षद्वारके रोकनेमें ये अर्गल (बेड़ा) हैं, स्वर्ग मार्गको भी रोकनेवाली हैं। नरकादि गतियोंमें ले जानेवाली हैं, दुष्कर्म करनेमें बड़ी साहसी हैं, इत्यादि अपने मनमें संकल्प विकल्प करता करता वह भद्र नामका बैल वहीं रहने लगा।

उसी नगरीमें कोई जिनदत्त नामका सेठ निवास करता था। जिनदत्त समस्त वणिकोंका सरदार और धर्मात्मा था। जिनदत्तकी प्रियभार्या सेठानी जिनमती थी। जिनमती परम धर्मात्मा थी, शीलादि उत्तमोत्तम गुणोंकी भण्डार थी, अति रूपवती थी,

पतिभक्ता एवं दान आदि उत्तमोत्तम कार्योंमें अपना चित्त लगानेवाली थी।

सेठ जिनदत्त और जिनमती आनन्दसे रहते थे। अचानक ही जिनमतीके अशुभकर्मका उदय प्रकट हो गया। उस बिचारीको लोग कहने लगे कि यह व्यभिचारिणी है। निरंतर परपुरुषोंके यहां गमन करती है इसलिये वह मनमें अतिशय दुःखित होने लगी। उसे अति दुःखी देख कई एक मनुष्य उसके यहां आये और कहने लगे–जिनमती। यदि तुझे इस बातका विश्वास है कि मैं व्यभिचारिणी नहीं हूँ तो तू एक काम कर–तपा हुवा पिंड अपने हाथपर रख। यदि तू व्यभिचारिणी होगी तो जल जायेगी नहीं तो नहीं।

नगर निवासियोंकी बात जिनमतीने मानली। किसी दिन वह सर्वजनोंके सामने हाथमें पिंड लेना ही चाहती थी कि अचानक ही वह भद्र नामका बैल भी वहां आगया। वह सब समाचार पहिलेसे ही सुन चुका था इसलिये आते ही उसने तप्त लोहेका पिंड अपने दांतोंमें दबा लिया। बहुत काल मुखमें रखनेपर वह जरा भी न जला एवं सबोंको प्रकट रीतिसे यह बात जतला दी कि ब्राह्मण सोमशर्माका बालक मैंने नहीं मारा। मैं सर्वथा निर्दोष हूँ।

भद्रकी यह चेष्टा देख नगर निवासी मनुष्योंके आश्चर्यका ठिकाना न रहा। कुछ दिन पहिले जो वे विना विचारे भद्रको दोषी मान चुके थे वही भद्र अब उनकी दृष्टिमें निर्दोष बन गया। अब वे भद्रकी बार बार तारीफ करने लगे। उनके मुखसे उस समय जयकार शब्द निकले तथा जिसप्रकार भद्रने उस प्रकारका काम कर अपनी निर्दोषताका परिचय दिया था जिनमतीने भी उसी प्रकार दिया। बेधड़क उसने तप्तपिंडको अपनी हथेली पर रख लिया।

जब उसका हाथ न जला तो उसने भी यह प्रकट रीतिसे जतला दिया कि मैं व्यभिचारणी नहीं हूं। मैंने आज तक परपुरुषका मुंह नहीं देखा है। मैं अपनी पतिकी सेवामें ही सदा उद्यत रहती हूँ और उसीको देव समझती हूं, जिससे सब लोग उसकी मुक्तकंठसे तारीफ करने लगे और उसकी आत्माको भी शांति मिली। इसलिये जिनदत्त! तुम्हीं बतावो भद्र और जिनमती पर जो दोषारोपण किया गया था वह सत्य था या असत्य? जिनदत्तने कहा—

कृपानाथ! वह दोषारोपण सर्वथा अनुचित था। बिना विचारे किसीको भी दोष नहीं देना चाहिये। जो लोग ऐसा काम करते हैं वे नराधम समझे जाते हैं। दीनबन्धो! मैं आपकी कथा सुन चुका हूं। अब आप कृपया मेरी भी कथा सुनें—

इसी लोकमें एक पद्मरथ नामका नगर है। किसी समय पद्मरथ नगरमें राजा वसुपाल राज्य करता था। कदाचित् राजा वसुपालको अयोध्याके राजा जितशत्रुसे कुछ काम पड़ गया इसलिये उसने शीघ्र ही एक चतुर ब्राह्मण उसके समीप भेज दिया। ब्राह्मण राजाकी आज्ञानुसार चला। चलते चलते वह किसी अटवीमें जा निकला। वह अटवी बड़ी भयावह थी, अनेक क्रूर जीवोंसे व्याप्त थी। कहींपर वहां पानी भी नजर नहीं आता था। चलतेर वह थक भी चुका था, प्याससे भी अधिक व्याकुल हो चुका था इसलिये प्याससे व्याकुल हो वह उसी अटवीमें किसी वृक्षके नीचे पड़ गया और मूर्छितसा हो गया।

भाग्यवश वहां एक बन्दर आया। ब्राह्मणकी वैसी चेष्टा देख उसे दया आ गई। वह यह समझ कि प्याससे इसकी ऐसी दशा हो रही है, शीघ्र ही उसे एक विपुल जलसे भरा तालाब दिखाकर और एक ओर हट गया।

ज्योंही ब्राह्मणने विपुल जलसे भरा तालाब देखा उसके आनन्दका ठिकाना न रहा। वह शीघ्र उसमें उतरा, अपनी प्यास बुझाई और इस प्रकार विचार करने लगा—

यह अटवी विशाल अटवी है। शायद आगे इसमें पानी मिले या न मिले इसलिए यहींसे पानी ले चलना ठीक है। मेरे पास कोई पात्र है नहीं इसलिये इस बन्दरको मारकर इसकी चमड़ीका पात्र बनाना चाहिये। बस फिर क्या था? विचारके साथ ही उस दुष्टने शीघ्र ही उस परोपकारी बन्दरको मार दिया और उसकी चमड़ीमें पानी भरकर अयोध्याकी ओर चल दिया।

कृपानाथ! अब आप ही कहे क्या उस दुष्ट ब्राह्मणका परोपकारी उस बन्दरके साथ वैसा वर्ताव उचित था? मैंने कहा—

सर्वथा अनुचित। वास्तवमें वह ब्राह्मण बड़ा कृतघ्नी था। उसे कदापि उस परोपकारी बंदरके साथ ऐसा वर्ताव करना उचित न था। जिनदत्त! तुम निश्चय समझो, पापी मनुष्य किये उपकारको भूल जाते हैं, संसारमें उन्हें अनेक दुःख भोगने पड़ते हैं। कोई मनुष्य उन्हें अच्छा नहीं कहता। अब मैं भी तुम्हें एक कथा सुनाता हूं, तुम ध्यानपूर्वक सुनो—

इसी जम्बूद्वीपमें एक कौशाम्बी नामकी विशाल नगरी है। कौशाम्बी नगरीमें कोई मनुष्य दरिद्र न था, सब धनी सुखी एवं अनेक प्रकारके भोग भोगनेवाले थे। उसी नगरीमें किसी समय एक सोमशर्मा नामका ब्राह्मण निवास करता था। उसकी स्त्रीका नाम कपिला था। कपिला अतिशय सुन्दरी थी, मृगनयनी थी, काममंजरी एवं रतिके समान मनोहरा थी।

कदाचित् सोमशर्माको किसी कार्यवश किसी वनमें जाना पड़ा। वहां एक अतिशय मनोहर नौलेका बच्चा उसे दीख पड़ा

और तत्काल उसे पकड़कर घर ले गया। कपिलाके कोई संतान न थी। बिना संतानके उसका दिन बड़ी कठिनतासे कटता था इसलिए जबसे उसके घरमें वह बच्चा आगया पुत्रके समान वह उसका पालन करने लगी और उस बच्चेसे उसका दिन भी सुखसे व्यतीत होने लगा।

दुर्भाग्यका अंत हो जानेपर कपिलाके एक पुत्र उत्पन्न हुआ। पुत्रकी उत्पत्तिसे कपिलाके आनन्दका ठिकाना न रहा। सोमशर्मा और कपिला अब अपनेको परमसुखी मानने लगे और आनंदसे रहने लगे।

कपिलाका पति सोमशर्मा किसान था इसलिये किसी समय कपिलाको धान काटनेके लिये खेतपर जाना पड़ा। वह बच्चेको पालनेमें सुलाकर और नौलेको उसे सुपुर्द कर शीघ्र ही खेतको चली गई।

उधर कपिलाका तो खेतपर जाना हुआ और इधर एक काला सर्प बालकके पालनेके पास आया। ज्योंही नोलाकी दृष्टि काले सर्पपर पड़ी वह एकदम सर्पपर टूट पड़ा और कुछ समय तक चू चू फू फू शब्द करते हुये घोर युद्ध करने लगा।

अन्तमें अपने पराक्रमसे नोलाने विजय पा ली और उस सर्पराजको तत्काल यमलोकका रास्ता बता दिया तथा वह बालकके पास बैठ गया।

कपिला अपना कार्य समाप्त कर घर आई। कपिलाके पैरकी आहट सुन नोला शीघ्र ही कपिलाके पास आया और कपिलाके पैरोंमें गिर उसकी मिन्नत करने लगा। नौलेका सर्वांग उस समय लोहू लुहान था इसलिये ज्योंही कपिलाने उसे देखा, इसने अवश्य मेरे पुत्रको मार कर खाया है यह समझ, मारे क्रोधके उसका शरीर भभक उठा और बिना विचारे उस दीन नोलेको मारे मूसलोंके देखतेर यमलोक पहुंचा दिया, किन्तु

ज्योंही वह बालकके पास आई और ज्योंही बालकको मृतक देखा उसके शोकका ठिकाना न रहा। नोलेकी मृत्युसे उसकी आंखोंसे आंसुओंकी झड़ी लग गई और माथा धुनने लगी।

जिनदत्त ! कहो उस ब्राह्मणीका यह अविचारित कार्य उत्तम था या नहीं? मेरे ऐसे वचन सुन जिनदत्तने कहा—

कृपानाथ! ब्राह्मणीका यह काम सर्वथा अयोग्य था। बिना विचारे जो महान्ध हो काम कर चाहते हैं उन्हें पीछे अधिक पछताना पड़ता है। मैं भी पुनः आपको कथा सुनाता हूं आप ध्यानपूर्वक सुनिये—

इसी द्वीपमें एक विशाल बनारस नामकी उत्तम नगरी है। किसी समय बनारसमें एक सोमशर्मा नामका ब्राह्मण निवास करता था। सोमशर्माकी स्त्रीका नाम सोमा था। सोमा अतिशय व्यभिचारिणी थी। पतिसे छिपाकर वह अनेक दुष्कर्म किया करती थी, किन्तु मिष्टवचनोंसे पतिको अपने दुष्कर्मोंका पता नहीं लगने देती थी और बनावटी सेवा आदि कार्योंसे उसे सदा प्रसन्न करती रहती थी।

कदाचित् सोमशर्मा तो किसी कार्यवश बाहिर चला गया और सोमा अपने यार गोपालोंको बुलाकर उनके साथ सुखपूर्वक व्यभिचार करने लगी, किन्तु कार्य समाप्त कर ज्योंही सोमशर्मा घर आया और ज्योंही उसने सोमाको गोपालोंके साथ व्यभिचार करते देखा, उसे परम दुःख हुआ। वह एकदम घरसे विरक्त हो गया एवं बांसकी लाठीमें कुछ सोना छिपाकर तीर्थयात्राके लिये निकल पड़ा।

मार्गमें वह कुछ ही दूर तक पहुँचा था कि अचानक ही उसकी एक मायाचारी बालकसे भेंट हो गई। बालकने विनय-पूर्वक सोमशर्माको प्रणाम किया, उसका शिष्य बन गया एवं

यह विचार कर सोमशर्माके पास धन है, वह सोमशर्माके साथ चल भी दिया।

मार्गमें चलते चलते उन दोनोंको रात हो गई इसलिये वे दोनों किसी कुम्हारके घर ठहर गये। वहां रात बिताकर सबेरे चल भी दिये। चलते समय बालक महादेवके शिरसे कुम्हारका छप्पर लग गया और तृण उसके शिरसे चिपटा चला गया। वे कुछ ही दूर गये थे कि बालकने अपना शिर टटोला तो उसे एक तृण दीख पड़ा तथा तृण देख मायाचारी वह बालक ब्राह्मणसे इसप्रकार कहने लगा—

गुरो! चलते समय कुम्हारके छप्परका यह तृण मेरे शिरसे लिपटा चला आया है मैं इसे वहां पहुंचाना चाहता हूं। उत्तम किन्तु कुलीन मनुष्योंको परद्रव्य ग्रहण करना महा पाप है। मैं बिना दिये पर पदार्थजन्य पापको सहन नहीं कर सकता। कृपाकर आप मुझे आज्ञा दें मैं शीघ्र लौटकर आता हूं तथा ऐसा कहता२ चल भी दिया। ब्राह्मणने जब देखा कि बटुक चला गया तो वह भी आगे किसी नगरमें जाकर ठहर गया। उसने किसी ब्राह्मणके घर भोजन किया एवं उस ब्राह्मणको अपने शिष्यके लिये भोजन रख छोड़नेकी भी आज्ञा देदी।

कुछ समय पश्चात् ढूंढ़ता ढांढ़ता वह बालक भी सोमशर्माके पास आ पहुंचा। आते ही उसने विनयसे सोमशर्माको नमस्कार किया और सोमशर्माकी आज्ञानुसार वह भोजनको भी चलदिया। वह बटुक चित्तका अति कटुक था इसलिये ज्योंही वह थोड़ी दूर पहुंचा तत्काल उसने ब्राह्मणका धन लेनेके लिये बहाना बनाया और पीछे लौटकर इसप्रकार विनयपूर्वक निवेदन करने लगा—

प्रभो! मार्गमें कुत्ते अधिक हैं, मुझे देखते ही वे भोंकते हैं। शायद वे मुझे काट खायें इसलिये मैं नहीं जाना चाहता फिर कभी देखा जायगा, किंतु वह ब्राह्मण परम दयालु था उसे

उस पर दया आ गई इसलिये उसने अपने प्राणोंसे भी अधिक प्यारी और जिसमें सोना रख छोड़ा था वह लकड़ी शीघ्र देदी और जानेके लिये प्रेरणा भी की।

बस फिर क्या था ! बालककी निगाह तो उस लकड़ीपर ही थी। संग भी वह उसी लकड़ीके लिये लगा था इसलिए ज्योंही उसके हाथ लकड़ी आई वह हमेशाके लिये ब्राह्मणसे विदा हो गया, फिर वृद्ध ब्राह्मणकी ओर उसने झांककर भी नहीं देखा। कृपानाथ ! आप ही कहें वृद्ध और परमोपकारी उस ब्राह्मणके साथ क्या उस बालकका वह वर्ताव योग्य था ? मैंने कहा—

जिनदत्त ! सर्वथा अयोग्य ! उस बालकको कदापि सोमशर्मा ब्राह्मणके साथ वैसा बर्ताव नहीं करना चाहिये था। अस्तु, अब मै तुम्हें एक अतिशय उत्तम कथा सुनाता हूँ तुम ध्यानपूर्वक सुनो—

धन धान्य उत्तमोत्तम पदार्थोंसे व्याप्त इसी पृथ्वीतलमें एक कौशांबी नगरी है। किसी समय उस नगरीका स्वामी राजा गंधर्वानीक था। राजा गंधर्वानीकके मणि आदि रत्नोंको साफ करनेवाला कोई गारदेव नामका मनुष्य भी उसी नगरीमें निवास करता था। कदाचित् वह राजमन्दिरसे एक पद्मराग मणि साफ करनेके लिये लाया और उसे आंगनमें रख वह साफ ही करना चाहता था कि उसी समय कोई ज्ञानसागर नामके मुनिराज उसके यहां आहारार्थ आ गये।

मुनिराजको देख गारदेवने अपना काम छोड़ दिया, मुनिराजको विनयपूर्वक नमस्कार किया, प्रासुकजलसे उनका चरणप्रक्षालन किया, एवं किसी उत्तम काष्ठासन पर बैठनेकी प्रार्थना की। प्रार्थनानुसार इधर मुनिराज तो काष्ठासनपर बैठे और उधर एक नीलकंठ आया एवं आंख बचाकर उस पद्मरागमणिको लेकर तत्काल उड़ गया तथा मुनिराज आहार ले वनकी ओर चल दिये।

मुनिराजको आहार देकर जब गारदेवको फुरसत मिली तो उसे मणिके साफ करनेकी याद आई। वह चट आंगनमें आया तो उसे वहां मणि मिली नहीं इसलिये परमदुःखी हो वह इस प्रकार विचारने लगा—

मेरे घरमें सिवाय मुनिराजके दूसरा कोई नहीं आया, यदि मणि यहां नहीं है तो गई कहां? मुनिराजने ही मेरी मणि ली होगी और लेनेवाला कोई नहीं तथा कुछ समय ऐसा संकल्प विकल्प कर वह सीधा वनको चल दिया और मुनिराजके पास आकर मणिका तकादा करता हुआ अनेक दुर्वचन कहने लगा।

जब मुनिराजने उसके ऐसे कटुक वचन सुने तो अपने ऊपर उपसर्ग समझ वे ध्यानारूढ़ हो गये। गारदेवके प्रश्नोंका उन्होंने जवाब तक न दिया, किन्तु मुनिराजसे जवाब न पाकर मारे क्रोधके उसका शरीर भभक उठा। उस दुष्टको उस समय और कुछ न सूझी मुनिराजको चोर समझ वह मुक्के घूंसे डंडोंसे मारने लगा और कष्टप्रद अनेक कुवचन भी कहने लगा। इस प्रकार मार धाड़ करनेपर भी जब उसने मुनिराजसे कुछ भी जवाब न पाया तो वह हताश हो अपने नगरको चल दिया।

वह कुछ ही दूर गया कि उसे फिर मणिकी याद आई। वह फिर मदांध हो गया इसलिये उसने वहींसे फिर एक डंडा मुनिराजपर फेंका। दैवयोगसे वह नीलकंठ भी उसी वनमें मुनिराजके समीप किसी वृक्षपर बैठा था। इसलिये जिस समय वह डंडा मुनिकी ओर आया तो उसका स्पर्श नीलकंठसे भी हो गया। डंडेके लगते ही नीलकंठ भगा और जल्दीमें पद्मराग-मणि उसके मुंहसे गिर गई।

पद्मरागमणिको इस प्रकार गिरी देख गारदेव अचम्भेमें पड़ गया। अब वह अपने अविचारित कामपर बारबार घृणा

करने लगा। मणिको उठाकर वह नगर चला गया। साफ कर उसे राजमन्दिरमें पहुंचा दी और संसारसे सर्वथा उदासीन हो उसी वनमें आया। मुनिराजके चरण कमलोंको भक्तिपूर्वक नमस्कार कर अपने पापोंकी क्षमा मांगी एवं उन्हींके चरणोंमें दीक्षा धारण कर दुर्धर तप करने लगा।

सेठ जिनदत्त! कहो क्या उस गारदेवका बिना विचार किया वह काम योग्य था? निश्चय समझो बिना विचारे जो काम कर पाड़ते हैं उन्हें निःसीम दुःख भोगने पड़ते हैं। मेरी यह कथा सुन जिनदत्तने कहा—

कृपासिंधो! गारदेवका वह काम सर्वथा निंदनीय था। अविचारित काम करनेवालोंकी दशा ऐसी ही हुआ करती है। नाथ! मैं आपकी कथा सुन चुका, कृपाकर आप भी मेरी कथा सुनें।

इसी पृथ्वीतलमें अनेक उत्तमोत्तम घरोंसे शोभित, देवतुल्य मनुष्योंसे व्याप्त, एक पलाशकूट नामका सर्वोत्तम नगर है। किसी समय पलाशकूट नगरमें कोई रौद्रदत्त नामका ब्राह्मण निवास करता था। कदाचित् किसी कार्यवश रौद्रदत्तको एक विशाल वनमें जाना पड़ा। वह वनमें पहुंचा ही था कि एक गेंड़ा इसकी ओर टूटा।

उस समय रौद्रदत्तको और तो कोई उपाय न सूझा, समीपमें एक विशाल वृक्ष खड़ा था उसीपर वह चढ़ गया। जिस समय गेंड़ा उस वृक्षके पास आया तो वह शिकारका मिलना कठिन समझ वहांसे चल दिया और अपने विघ्नको शांत देख रौद्रदत्त भी नीचे उतर आया। वह वृक्ष अति मनोहर था। उसकी हरएक लकड़ी बड़े पायेदार थी।

इसलिये उसे देख रौद्रदत्तके मुखमें पानी आ गया। वह यह निश्चयकर कि इसकी लकड़ी अत्युत्तम है, इसकी स्तम्भ आदि कोई चीज बनवानी चाहिये, शीघ्र ही घर आया। हाथमें फरसा

ले वह फिर उसको चला गया और मालकी बातों वह वृक्ष काट डाला।

कृपानाथ! आप ही कहें क्या आपत्तिकालमें रक्षा करनेवाले उस वृक्षका काटना रौद्रदत्तके लिये योग्य था? मैंने कहा—

जिनदत्त! सर्वथा अयोग्य था। रौद्रदत्तको कदापि वह वृक्ष काटना नहीं चाहिये था। जो मनुष्य परकृत उपकारको नहीं मानते वे नितरां पापी गिने जाते हैं, कृतघ्नी मनुष्योंको संसारमें अनेक वेदनाएँ भोगनी पड़ती हैं। मैं तुम्हारी कथा सुन चुका अब मैं भी तुम्हें एक अत्युत्तम कथा सुनाता हूँ, तुम ध्यानपूर्वक सुनो।

इसी पृथ्वीतलमें उत्तमोत्तम तोरण पताका आदिसे शोभित समस्त नगरीमे उत्तम कोई द्वारावती नामकी नगरी है। किसी समय द्वारावतीके पालक महाराज श्रीकृष्ण थे। महाराज श्रीकृष्ण परम न्यायी थे। न्याय राज्यसे चारों ओर उनकी कीर्ति फैली हुई थी और सत्यभामा रुक्मिणी आदि कामिनियोंके साथ भोग भोगते वे आनन्दसे रहते थे।

कदाचित् राजसिंहासन पर बैठ वे आनन्दमें मग्न थे कि इतने हीमें एक माली आया, उसने विनयपूर्वक महाराजको नमस्कार किया, और उत्तमोत्तम फल भेंट कर वह इसप्रकार निवेदन करने लगा—

प्रभो! प्रजापालक! एक परम तपस्वी वनमें आकर विराजे हैं। मालीके मुखसे मुनिराजका आगमन सुन महाराज श्रीकृष्णको परमानन्द हुवा। वे जिस कामको उस समय कर रहे थे उसे शीघ्र ही छोड़ दिया, उचित पारितोषिक दे मालीको प्रसन्न किया और अनेक नगरवासियोंके साथ चतुरंग सेनासे मंडित महाराजने वनकी ओर प्रस्थान कर दिया। वनमें आकर मुनिराजको देख भक्तिपूर्वक नमस्कार किया और कुछ उपदेश सुननेकी इच्छासे मुनिराजके पास भूमिपर बैठ गये। तब प्रसन्न मुनि-

राजका शरीर व्याधिग्रस्त था इसलिये उस व्याधिके दूर करणार्थ राजाने यही प्रश्न किया।

प्रभो! इस रोगकी शांतिका उपाय क्या है? किस औषधिके सेवन करनेसे यह रोग जा सकता है कृपया मुझे शीघ्र बतावें। राजा श्रीकृष्णके ऐसे वचन सुन मुनिराजने कहा—

नरनाथ! यदि रत्नकापिष्ट (!) नामका प्रयोग किया जाय तो यह रोग शांत हो सकता है, और इस रोगकी शांतिका कोई उपाय नहीं। मुनिराजके मुखसे औषधि सुन राजा श्रीकृष्णको परम सन्तोष हुआ। मुनिराजको विनयपूर्वक नमस्कार कर वे द्वारावतीमें आ गये और मुनिराजके रोग दूर करनेके लिये उन्होंने सर्वत्र आहारकी मनाई कर दी।

दूसरे दिन वे ही ज्ञानसागर मुनि आहारार्थ नगरमें आये। विधिके अनुसार वे इधर उधर नगरमें घूमें, किन्तु राजाकी आज्ञानुसार उन्हें किसीने आहार न दिया। अंतमें वे राजमंदिरमें आहारार्थ गये। ज्योंही राजमंदिरमें मुनिराजने प्रवेश किया रानी रुक्मिणीने उनका विधिपूर्वक आह्वानन किया। पड़गाहन आदि कार्य कर भक्तिपूर्वक आहार भी दिया। रत्नकापिष्ट चूर्ण एवं आहार ले चुकनेपर मुनिराज वनको चले गये।

इसप्रकार औषधिके सेवन करनेसे मुनिराजका रोग सर्वथा नष्ट हो गया। वे शीघ्र ही निरोग हो गये।

किसी समय किसी वैद्यके साथ महाराज श्रीकृष्ण वनमें गये, जहांपर परम पवित्र मुनिराज विराजमान थे उसी स्थानपर पहुंच उन्हें भक्तिपूर्वक नमस्कार किया और मुनिराजके सामने ही वैद्यने यह कहा—प्रजानाथ! मुनिराजका रोग दूर हो गया है। वैद्यके मुखसे जब मुनिराजने ये वचन सुने तो वे इसप्रकार उपदेश देने लगे—

नरनाथ! संसारमें जीवोंको जो सुख दुःख, कल्याण और

अकल्याण भोगने पड़ते हैं उनके भोगनेमें कारण पूर्वोपार्जित शुभाशुभ कर्म हैं। जिस समय ये शुभ अशुभ कर्म सर्वथा नष्ट होजाते हैं उस समय किसी प्रकारका सुख दुख भोगना नहीं पड़ता। कर्मोंके सर्वथा नष्ट हो जानेपर परमोत्तम सुख मोक्ष मिलता है। राजन्! शुभ अशुभ कर्मरूपी अन्तरंग व्याधिके दूर करनेमें अतिशय पराक्रमी चक्रवर्ती भी समर्थ नहीं हो सकते। ये औषधि आदि व्याधिकी निवृत्तिमें बाह्य कारण हैं। उनसे अन्तरंग रोगकी निवृत्ति कदापि नहीं होसकती।

मुनिराज तो वीतराग भावसे कह उपदेश दे रहे थे, उन्हें किसीसे उससमय द्वेष न था किंतु वैद्यराजको उनका वह उपदेश हलाहल विष सरीखा जान पड़ा। वह अपने मनमें ऐसा विचार करने लगा, यह मुनि बड़ा ही कृतघ्नी है। रोगकी निवृत्तिका उपाय इसने शुभाशुभ कर्मकी निवृत्ति ही बतलाई है, मेरा नाम-तक भी नहीं लिया। इस मुनिके वचनोंसे यह साफ मालूम होता है कि हमने कुछ नहीं किया है कर्मकी निवृत्तिने ही किया है तथा इसप्रकार रौद्र विचार करतेर वैद्यने उसीसमय आयुबंध बांध लिया और आयुके अन्तमे मरकर वह वानरयोनिमें उत्पन्न होगया।

कदाचित् विहार करतेर मुनिराज, जिस बनमें यह वानर रहता था उसी बनमें जा पहुंचे और पर्यंक आसन मांड़कर, नासाग्रदृष्टि होकर, ध्यानैकतान हो गये। किसी समय मुनिराज-पर बन्दरकी दृष्टि पड़ी। मुनिराजको देखते ही उसे जातिस्मरण बलसे उसने अपने पूर्वभवका सब समाचार जान लिया।

राजा श्रीकृष्णके सामने मुनिराजके उपदेशसे जो उसने अपना पराभव समझा था वह पराभव भी उसे उस समय स्मरण हो आया और मारे क्रोधके उस पापीने पवित्र किंतु ध्यानरसमें लीन मुनि गुणसागरके ऊपर एक विशाल काष्ठ पटक

दिया। उन्हें अनेक प्रकार पीड़ा भी देने लगा, किंतु मुनिराज जरा भी ध्यानसे विचलित न हुए।

चिरकाल तक अनेक प्रयत्न करनेपर भी जब बन्दरने देखा कि मुनिराज ममता रहित समता रसमें लीन, निर्मल ज्ञानके धारक, हलन चलन क्रियासे रहित, परमपद मोक्षपदके अभिलाषी, परम किंतु उत्कृष्ट धर्मध्यान शुक्लध्यानके आचरण करनेवाले, ध्यानबलसे परम सिद्धि प्राप्तिके इच्छुक, पाषाणमें उकली हुई प्रतिमाके समान निश्चल और हाथपैरकी समस्त चेष्टाओंसे रहित हैं तो उसे भी एकदम वैराग्य होगया।

कुछ समय पहले जो उसके परिणामोंमें रौद्रता थी वही मुनिराजकी शांतमुद्राके सामने शांतिरूपमें परिणत हो गई। वह अपने दुष्कर्मके लिये अधिक निंदा करने लगा। मुनिराजपर जो काठ डाला था वह भी उसने उठाके एक ओर रख दिया। वह पूर्वभवमें वैद्य था इसलिये मुनिराज पर काष्ठ पटकनेसे जो उनके शरीरमें घाव हो गये थे, उत्तमोत्तम औषधियोंसे उन्हें भी उसने अच्छा कर दिया। अब वह मुनिराजकी शुद्ध हृदयसे भक्ति करने लगा और यह प्रार्थना करने लगा—

प्रभो! अकारण दीनबन्धो! मेरे इन पापोंका छुटकारा कैसे होगा? मैं अब कैसे इन पापोंसे बचूंगा? कृपाकर मुझे कोई ऐसा उपाय बतावें जिससे मेरा कल्याण हो। मुनिराज परम दयालु थे, उन्होंने वानरको पंच अणुव्रतका उपदेश दिया व और भी अनेक उपदेश दिये।

वानरने भी मुनिराजकी आज्ञानुसार पंच अणुव्रत पालने स्वीकार कर लिये, अहंकार क्रोध आदि जो दुर्वासनाएं थीं उन्हें भी उसने छोड़ दिया और हरसमय अपने अधिकाधिक [illegible] लिये [illegible] करने लगा।

सेठ जिनदत्त! तुम निश्चय समझो जो नीच पुरुष बिना विचारे क्रोध, मान, माया आदि कर बैठते हैं उन्हें पीछे अधिक पछिताना पड़ता है। वे तिर्यंच नरक आदि गतियोंमें जाते हैं व वहां उन्हें अनेक दुस्सह वेदनायें सहनी पड़ती हैं। अविचारित काम करनेवाले इस लोकमें भी राजा आदिसे अनेक दण्ड भोगते हैं, उनकी सब जगह निन्दा फैल जाती है। परलोकमें भी उन्हें सुख नहीं मिलता। अबुद्धिपूर्वक काम करनेवालोंकी सब जगह हंसी होती है। देखो, अनेक शास्त्रोंका भले प्रकार ज्ञाता, राजा श्रीकृष्णके सम्मानका भाजन वह वैद्य तो कहाँ? और कहाँ अशुभ कर्मके उदयसे उसे बन्दर योनिकी प्राप्ति? यह सब फल अज्ञानपूर्वक कार्य करनेका है।

जिनदत्त! यह कथा तुम ध्यानपूर्वक सुन चुके हो, तुम्हीं कहो क्या उस बन्दरका वह कार्य उत्तम था? जिनदत्तने कहा—

मुनिनाथ! वह बन्दरका अविचारित काम सर्वथा अयोग्य था। बिना विचारे अभिमानादिके वशीभूत हो नीच काम करनेवाले मनुष्योंको ऐसे ही फल मिलते हैं।

इसके अनन्तर हे मगधदेशके स्वामी राजा श्रेणिक! सेठ जिनदत्त मेरी कथाके उत्तरमें दूसरी कथा कहना ही चाहता था कि उसके पास उसका पुत्र कुबेरदत्त भी बैठा था और सब बातोंको बराबर सुन रहा था इसलिये उसने विवादके शांत्यर्थ शीघ्र ही वह रत्नभरित घड़ा दूसरी जगहसे निकालकर मेरे देखतेर अपने पिताके सामने रख दिया और विनयपूर्वक इस प्रकार प्रार्थना करने लगा—

प्रभो! समस्त जगतके तारक स्वामिन्! मेरे पिताने बड़ा अनर्थ कर पाड़ा। इस दुष्ट धनके फन्देमें फंसकर आपको भी चोर बना दिया। हाय, इस धनके लिये सहस्रबार धिक्कार है। दीनबन्धो! यह बात सर्वथा सत्य जान पड़ती है कि संसारमें

जो घोरसे घोर पाप होते हैं वे लोभसे ही होते हैं। संसारमें यदि जीवोंका परम अहित करनेवाला है तो यह लोभ ही है।

प्रभो ! किसी रीतिसे अब मेरा उद्धार कीजिये। मुक्तिमें असाधारण कारण मुझे जैनेश्वरी दीक्षा दीजिये। अब मैं क्षणभर भी भोग भोगना नहीं चाहता।

जिनदत्त भी रत्नोंके घड़ाको और पुत्रको संसारसे विरक्त देख अति दुःखित हुआ, अपने अविचारित कामपर उसे बहुत लज्जा आई, संसारको असार जान उसने भी धनसे सम्बन्ध छोड़ दिया। अपनी बारबार निंदा करनेवाले समस्त परिग्रहसे विमुख उन दोनों पिता पुत्रने मुझसे जैनेश्वरी दीक्षा धारण करली। एवं अतिशय निर्मल चित्तके धारक, भले प्रकार उत्तमोत्तम शास्त्रोंके पाठी, परिग्रहसे सर्वथा निष्पृह, मनोगुप्ति वचनगुप्ति कायगुप्तिके धारक वे दोनों दुर्धर तप करने लगे।

इसप्रकार हे मगधदेशके स्वामी श्रेणिक! अनेक देशोंमें विहार करते २ हम तीनों मुनि! राजगृहमें भी आये। उक्त दो मुनियोंके समान मैं त्रिगुप्ति पालक न था। मेरे अभीतक कायगुप्ति नहीं हुई इसलिये मैंने राजमन्दिरमें आहार न लिया, आहारके न लेनेका और कोई कारण नहीं।

इस रीतिसे तीनों मुनिराजोंके मुखसे भिन्न २ कथाके श्रवणसे अतिशय सन्तुष्ट-चित्त मोक्ष सम्बन्धी कथाके परमप्रेमी महाराज श्रेणिक मुनिराजको नमस्कार कर राजमंदिरमें गये। राजमंदिरमें जाकर सम्यग्दर्शनपूर्वक जैनधर्म धारण कर मुनिराजोंके उत्तमोत्तम गुणोंको निरन्तर स्मरण करते हुये रानी चेलना और चतुरंग सेनाके साथ आनन्दपूर्वक राजमंदिरमें रहने लगे।

इसप्रकार श्रीपद्मनाम भगवान्‌के पूर्वभवके जीव महाराज श्रेणिकके चरित्रमें कायगुप्ति कथाका वर्णन करनेवाला ग्यारहवाँ सर्ग समाप्त हुआ।

बारहवां सर्ग

महाराज श्रेणिकको क्षायिक सम्यक्दर्शनकी उत्पत्ति

जिस परमोत्तम धर्मकी कृपासे मगधदेशके स्वामी महाराज श्रेणिकको अनुपम सुख मिला, पापरूपी अन्धकारको सर्वथा नाश करनेवाले उस परमधर्मके लिये नमस्कार है।

महाराज श्रेणिकको जैनधर्ममें जो सन्देह थे सो सब दूट गये थे इसलिये भलेप्रकार जैनधर्मके पालक राज्य सम्बन्धी अनेक भोग भोगनेवाले शुभ मार्गपर आरूढ़ राजा श्रेणिक और रानी चेलना सानन्द राजगृहनगरमें रहने लगे। कभी वे दोनों दम्पति जिनेन्द्रभगवानकी पूजा करने लगे, कभी मुनियोंके उत्तमोत्तम गुणोंका स्मरण करने लगे। कभी उन्होंने त्रेसठ महापुरुषोंके पवित्र चरित्रसे पूर्ण प्रथमानुयोगशास्त्रका स्वाध्याय किया। कभी लोककी लम्बाई चौड़ाई आदि बतलानेवाले करणानु-योगशास्त्रको वे पढ़ने लगे। कभी कभी अहिंसादि श्रावक और मुनियोंके चरित्रको बतलानेवाले चरणानुयोग शास्त्रका उन्होंने श्रवण किया और कभी गुण द्रव्य और पर्यायोंका वास्तविक स्वरूप बतलानेवाले स्यादस्ति स्यान्नास्ति इत्यादि सप्तभंगनिरूपक द्रव्यानुयोग शास्त्रोंको विचारने लगे।

इसप्रकार अनेक शास्त्रोंके स्वाध्यायमें प्रवीण, धर्मसम्पदाके धारक, समस्त विपत्तियोंसे रहित, रति और कामदेवतुल्य भोग भोगनेवाले बड़े २ ऋद्धिधारक मनुष्योंसे पूजित, रतिजन्य सुखके भी भलेप्रकार आस्वादक, वे दोनों दम्पति इंद्र इंद्राणीके समान सुख भोगने लगे और भोगोंमें वे इतने लीन हो गये कि उन्हें जाता हुआ काल भी न जान पड़ने लगा।

बहुतकाल पर्यंत भोग भोगनेपर रानी चेलना गर्भवती हुई।

उसके उदरमें सुषेणचर नामके देवने आकर जन्म लिया। गर्भभारसे रानी चेलनाका मुख फीका पड़ गया। स्वाभाविक कृश शरीर और भी कृश होगया। वचन भी वह धीरे२ बोलने लग गई, गति भी मंद होगई और आलस्यने भी उसपर पूरा२ प्रभाव जमा लिया।

गर्भवती स्त्रियोंको दोहले हुवा करते हैं और दोहलोंसे संतानके अच्छे बुरेका पता लग जाता है, क्योंकि यदि संतान उत्तम होगी तो उसकी माताको दोहले भी उत्तम होंगे और संतान खराब होगी तो दोहले भी खराब होंगे। रानी चेलनाको भी दोहले होने लगे।

चेलनाके गर्भमें महाराज श्रेणिकका परम वैरी, अनेक प्रकार कष्ट देनेवाला पुत्र उत्पन्न होनेवाला था इसलिये रानीको जितने भर दोहले हुए सब खराब ही हुए जिससे उसका शरीर दिनों-दिन क्षीण होने लगा। प्राणपति पर कष्ट आनेसे उसका सारा शरीर फीका पड़ गया। प्रातःकालमें तारागण जैसे विच्छाय जान पड़ते हैं रानी चेलना भी उसी प्रकार विच्छाय होगई।

किसी समय महाराज श्रेणिककी दृष्टि महाराणी चेलना पर पड़ी। उसे इस प्रकार क्षीण और विच्छाय देख उन्हें अति दुःख हुवा। रानीके पास आकर व स्नेह परिपूर्ण वचनोंमें वे इस प्रकार कहने लगे—

प्राणवल्लभे! मेरे नेत्रोंको अतिशय आनंद देनेवाली प्रिये! तुम्हारे चित्तमें ऐसी कौनसी प्रबल चिंता विद्यमान है जिससे तुम्हारा शरीर रात दिन क्षीण और कांति रहित होता चला आता है। कृपाकर उस चिंताका कारण मुझसे कहो, बराबर उसके दूर करनेके लिए प्रयत्न किया जायगा। महाराजके ऐसे शुभ वचन सुन पहले तो लज्जावश रानी चेलनाने कुछ भी उत्तर न दिया, किंतु जब उसने महाराजका आग्रह विशेष देखा तो

वह दुःखाश्रुओंको पोंछती हुई विनयसे इस प्रकार कहने लगी—

प्राणनाथ! मुझसरीखी अभागिनी डाकिनी स्त्रीका संसारमें जीना सर्वथा निस्सार है। यह जो गर्भ धारण किया है सो गर्भ नहीं, आपकी अभिलाषाओंको मूलसे उखाड़नेवाला अंकुर बोया है। इस दुष्ट गर्भकी कृपासे मैं प्राण लेनेवाली डांकिनी पैदा हुई हूँ।

प्रभो! यद्यपि मैं अपने मुखसे कुछ कहना नहीं चाहती तथापि आपके आग्रहवश कुछ कहती हूँ। मुझे यह खराब दोहला हुआ है कि आपके वृक्षः-स्थलको विदार रक्त देखूं। इस दोहलाकी पूर्ति होना कठिन है इसलिये मैं इस प्रकार अति चिंतित हूँ।

रानी चेलनाके ऐसे वचन सुन महाराज श्रेणिकने उसी समय अपने वृक्षस्थलको चीरा और उससे निकले रक्तको रानी चेलनाको दिखाकर उसकी इच्छाकी पूर्ति की। नवम मासके पूर्ण होनेपर रानी चेलनाके पुत्र उत्पन्न हुआ। पुत्रोत्पत्तिका समाचार महाराजके पास भी पहुँचा। उन्होंने दीन अनाथ याचकोंको इच्छाभर दान दिया और पुत्रको देखनेके लिए गर्भगृहमें गये।

ज्योंही महाराज अपने पुत्रके पास गये कि महाराजको देखते ही उसे पूर्वभवका स्मरण हो आया।

महाराजको पूर्वभवका अपना प्रबल वैरी जान मारे क्रोधके उसकी मुंठी बन्ध गई, मुख भयंकर और कुटिल हो गया, नेत्र लोहूलोहान होगये, मारे क्रोधके भोंहें चढ़ गई, ओठ भी डसने लगा और उसकी आंखें भी इधर उधर फिरने लगीं।

रानीने जब उसकी यह दशा देखी तो उसे प्रबल अनिष्टका करनेवाला समझ वह डर गई। अपने हितकी इच्छासे निर्मोह हो उसने वह पुत्र शीघ्र ही वनको भेज दिया। जब राजाको यह पता लगा कि रानीने भयभीत हो पुत्रको वनमें भेज दिया है

तो उससे न रहा गया। पुत्रपर मोहकर उन्होंने शीघ्र ही उसे राजमन्दिरमें मंगा लिया।

उसे पालनपोषणके लिए किसी धायके हाथ सोंप दिया और उसका नाम कुणिक रख दिया एवं वह कुणिक दिनोंदिन बढ़ने लगा।

कुमार कुणिकके बाद रानी चेलनाके वारिषेण नामका दूसरा पुत्र हुआ। कुमार वारिषेण अनेक ज्ञान विज्ञानोंका पारगामी, मनोहर रूपका धारक, सम्यग्दर्शनसे भूषित और मोक्षगामी था। वारिषेणके अनंतर रानी चेलनाके हल्ल, हल्लके पीछे विदल, विदलके पीछे जितशत्रु ये तीन पुत्र और भी उत्पन्न हुए और ये तीनों ही कुमार मात.पिताको आनंदित करनेवाले हुए।

इस प्रकार इन पांच पुत्रोंके बाद रानी चेलनाके प्रबल भाग्योदयसे सबको आनन्द देनेवाला फिर गर्भ रह गया। गर्भके प्रसादसे रानी चेलनाका आहार कम हो गया। गति भी धीमी हो गई, शरीरपर पांडिमा छा गई, आवाज मन्द हो गई, शरीर अति कृश हो गया, पेटकी त्रिवलि भी छिप गई। होनेवाला पुत्र समस्त शत्रुओंके मुख काले करेगा इस बातको जतलाते हुवे ही उसके दोनो चूचक भी काले पड़ गये एवं गर्भभारके सामने उसे भूषण भी नहीं रुचने लगे।

किसी समय रानीके मनमें यह दोहला हुवा कि ग्रीष्मकालमें हाथीपर चढ़कर बरषते मेहमें इधर उधर घूमूं किन्तु इस इच्छाकी पूर्ति उसे अतिकठिन जान पड़ी इसलिये उस चिन्तासे उसका शरीर दिनोंदिन अधिक क्षीण होने लगा। जब महाराजने रानीको अति चिन्ताग्रस्त देखा तो उन्हें परम दुःख हुवा। चिन्ताका कारण जाननेके लिये वे रानीसे इसप्रकार कहने लगे—

प्रिये ! मैं तुम्हारा शरीर दिनोंदिन क्षीण देखता चला आता हूं। मुझे शरीरकी क्षीणताका कारण नहीं जान पड़ता। तुम शीघ्र

कहो। तुम्हें कौनसी चिन्ता ऐसी भयंकरतासे सता रही है? महाराजके ऐसे वचन सुन रानीने कहा—

कृपानाथ! मुझे यह दोहला हुआ है कि मैं ग्रीष्मकालमें बरसते हुए मेघमें हाथीपर चढ़कर घूमूं किन्तु यह इच्छा पूर्ण होनी दुःसाध्य है इसलिये मेरा शरीर दिनोंदिन क्षीण होता चला जाता है। रानीकी ऐसी कठिन इच्छा सुनी तो महाराज अचम्भेमें पड़ गये। उस इच्छाके पूर्ण करनेका उन्हें कोई उपाय न सूझा इसलिये वे मौन धारण कर निश्चेष्ट बैठ गये।

कुमार अभयने महाराजकी यह दशा देखी तो उन्हें बड़ा दुःख हुआ, वे महाराजके सामने इस प्रकार विनयसे पूछने लगे—पूज्य पिता! मैं आपको प्रबल चिंतासे आतुर देख रहा हूँ, मुझे नहीं मालूम पड़ता कि अकारण आप क्यों चिंता कर रहे हैं? कृपया चिंताका कारण मुझे भी सुनावें।

पुत्र अभयके ऐसे वचन सुनकर महाराज श्रेणिकने सारी आत्मकहानी कुमारको कह सुनाई और चिन्ता दूर करनेका कोई उपाय न समझ वे अपना दुःख भी प्रगट करने लगे।

कुमार अभय अति बुद्धिमान थे। ज्योंही उन्होंने पिताके मुखसे चिन्ताका कारण सुना, शीघ्र ही संतोषप्रद वचनोंमें उन्होंने कहा—पूज्यवर! यह बात क्या कठिन है, मैं अभी इस चिंताके हटानेका उपाय सोचता हूं, आप अपने चित्तको मलीन न करें तथा चिंता दूर करनेका उपाय भी सोचने लगे।

कुछ समय सोचने पर उन्हें यह बात मालूम हुई कि यह काम बिना किसी व्यंतरकी कृपाके नहीं हो सकता इसलिये आधीरातके समय घरसे निकले। व्यंतरकी खोजमें किसी श्मशानभूमिकी ओर चलदिये एवं वहां पहुंचकर किसी विशाल वटवृक्षके नीचे इधर उधर घूमने लगे।

वह श्मशान उल्लुओंके फूत्कार शब्दोंसे व्याप्त था, मृगालोंके भयंकर शब्दोंसे भयावह था, जगह२ वहां अजगर फुंकार शब्द कर रहे थे, मदोन्मत्त हाथियोंसे अनेक वृक्ष उखड़े पड़े थे, अर्द्धदग्ध मुर्दे और फूटे घड़ोंके समान उनके कपाल वहां जगह२ पड़े थे, मांसाहारी भयंकर जीवोंके रौद्र शब्द क्षण२ में सुनाई पड़ते थे, अनेक जगह वहां मुरदे जल रहे थे और चारों ओर उनका धुआं फैला हुवा था। मांस लोलुपी कुत्ते भी वहां जहां तहां भयावह शब्द करते थे। चारों ओर वहां राखकी ढेरियां पड़ी थीं। इसलिये मार्ग जानना भी कठिन पड़ जाता था एवं चारों ओर वहां हड्डियां भी पड़ी थीं।

बहुत काल अन्धकारमें इधर उधर घूमने पर किसी वट-वृक्षके नीचे कुछ दीपक जलते हुवे कुमारको दीख पड़े, वह उसी वृक्षकी ओर झुक पड़ा और वृक्षके नीचे आकर उसे धीर वीर जयशील स्थिरचित्त चिरकालसे उद्विग्न एवं जिसके चारों ओर फूल रक्खे हुए हैं ऐसा कोई उत्तम पुरुष दीख पड़ा। उस पुरुषको ऐसी दशापन्न देख कुमारने पूछा—

भाई! तू कौन है? क्या तेरा नाम है? कहांसे तू यहां आया? तेरा निवासस्थान कहां है? और तू यहां आकर क्या सिद्ध करना चाहता है? कुमारके ऐसे वचन सुन उस पुरुषने कहा—

राजकुमार! मेरा वृत्तांत अतिशय आश्चर्यकारी है। यदि आप उसे सुनना चाहते हैं तो सुनें मैं कहता हूँ—

विजयार्धपर्वतकी उत्तर दिशामें एक गगनप्रिय नामका नगर है। गगनप्रिय नगरका स्वामी अनेक विद्याधर और मनुष्योंसे सेवित मैं राजा वायुवेग था। कदाचित् मुझे विजयार्ध पर्वतपर जिनेन्द्र चैत्यालयोंके वन्दनार्थ अभिलाषा हुई। मैं अनेक राजाओंके साथ आकाशमार्गसे अनेक नगरोंको निहारता हुवा

विजयार्ध पर्वतपर आ गया। उसी समय राजकुमारी सुभद्रा जो कि बालकपुरके महाराजकी पुत्री थी अपनी सखियोंके साथ विजयार्ध पर्वतपर आई।

राजकुमारी सुभद्रा अतिशय मनोहरा थी, यौवनकी अद्वितीय शोभासे मंडित थी, मृगनयनी थी। उसके स्थूल किंतु मनोहर नितंब उसकी विचित्र शोभा बना रहे थे एवं रतिके समान अनेक विलास संयुक्त होनेसे वह साक्षात् रति ही जान पड़ती थी।

ज्योंही कमलनेत्रा सुभद्रा पर मेरी दृष्टि पड़ी मैं बेहोश हो गया, कामबाण मुझे बेहद रीतिसे वेधने लगे, मेरा तेजस्वी शरीर भी उस समय सर्वथा शिथिल हो गया। विशेष कहांतक कहूं तन्मय होकर मैं उसीका ध्यान करने लगा।

सुभद्रा बिना जब मेरा एक क्षण भी वर्ष सरीखा बीतने लगा तो बिना किसीके पूछे मैं जबरन सुभद्राको हर लाया और गमनप्रिय नगरमें आकर आनन्दसे उसके साथ भोग भोगने लगा। इधर मैं तो राजकुमारी सुभद्राके साथ आनन्दसे रहने लगा और उधर किसी सखीने बालकपुरके स्वामी सुभद्राके पितासे सारी वार्ता कह सुनाई और ठिकाना भी बतला दिया।

सुभद्राकी इसप्रकार हरणवार्ता सुन मारे क्रोधके उसका शरीर भभक उठा और विमान पंक्तियोंसे समस्त गगनमंडलको आच्छादन करता हुआ शीघ्र ही गमनप्रिय नगरकी ओर चल पड़ा।

बालकपुरके स्वामीका इस प्रकार आगमन मैंने भी सुना, अपनी सेना सजाकर मैं शीघ्र उसके सन्मुख आया। चिरकाल तक मैंने उसके साथ और विद्याओंके जानकार तीक्ष्ण खड्गोंके धारी उसके योद्धाओंके साथ युद्ध किया। अन्तमें बालकपुरके स्वामीने अपने विद्याबलसे मेरी समस्त विद्या छीन ली। सुभद्राको भी जबरन ले गया। विद्याके अभावसे मैं विद्याधर भी भूमि-गोचरीके समान रह गया।

अनेक शोकोंसे आकुलित हो मैं पुनः उस विद्याके लिये यह मंत्र सिद्ध कर रहा हूँ, बारह वर्ष पर्यंत इस मंत्रके जपनेसे वह विद्या सिद्ध होगी ऐसा नैमित्तिकने कहा है, किन्तु बारह वर्ष बीत चुके, अभीतक विद्या सिद्ध न हुई इसलिये मैं अब घर जाना चाहता हूं। ज्योंही कुमारने उस पुरुषके मुखसे ये समाचार सुने शीघ्र ही पूछा—

भाई, यह कौनसा मंत्र है मुझे भी तो दिखाओ, देखूं तो वह कैसा कठिन है? कुमारके इस प्रकार पूछे जानेपर उस पुरुषने शीघ्र ही वह मंत्र कुमारको बतला दिय।

कुमार अतिशय पुण्यात्मा थे। उस समय उनका सौभाग्य था इसलिये उन्होंने मंत्र सीखकर शीघ्र ही इधर उधर कुछ बीज क्षेपण कर दिये और बातकी बातमें वह मंत्र सिद्ध कर लिया। मंत्रसे जो विद्या सिद्ध होनेवाली थी शीघ्र ही सिद्ध हो गई। कुमारके प्रसादसे राजा वायुवेगको भी विद्या सिद्ध हो गई जिससे उसे परम सन्तोष हो गया एवं वे दोनों महानुभाव आपसमें मिल भेटकर बड़े प्रेमसे अपने अपने स्थान चले गये।

मत्र सिद्ध कर कुमार अपने घर आये। विद्याबलसे उन्होंने शीघ्र ही कृत्रिम मेघ बना दिये। रानी चेलनाको हाथीपर चढ़ा लिया। इच्छानुसार उसे जहां तहां घुमाया। जब उसके दोहलेकी पूर्ति हो गई तो वह अपने राजमहलमें आई। दोहलेकी पूर्ति समझ जो उसके चित्तमें खेद था वह दूर हो गया। अब उसका शरीर सोनेके समान दमकने लगा। नौमासके बीत जाने पर रानी चेलनाके अतिशय प्रतापी शत्रुओंका विजयी पुत्र उत्पन्न हुआ और दोहलेके अनुसार उसका नाम गजकुमार रक्खा गया।

गजकुमारके बाद रानी चेलनाके मेघकुमार नामका पुत्र उत्पन्न हुआ। सात ऋषियोंसे आकाशमें जैसी तारा शोभित होती है रानी चेलना भी ठीक उसी प्रकार सात पुत्रोंसे शोभित होने

लगी। इस प्रकार आनन्दमें अतिशय सुखी समस्त खेदोंसे रहित वे दोनों दम्पति आनन्दपूर्वक भोग भोगते राजगृह नगरमें रहने लगे।

कदाचित् अनेक राजा और सामन्तोंसे सेवित, भलेप्रकार बन्दीजनोंसे स्तुत्य महाराज श्रेणिक छत्र और चंचल चमरोंसे शोभित अत्युन्नत सिंहासनपर बैठे ही थे कि अचानक ही सभामें वनमाली आया। उसने विनयसे महाराजको नमस्कार किया एवं षट्कालके फल और पुष्प महाराजकी भेट कर वह इस प्रकार निवेदन करने लगा—

समस्त पुण्योंके भण्डार! बड़े २ राजाओंसे पूजित! दयामयचित्तके धारक! चक्र और इन्द्रकी विभूतिसे शोभित! देव! विपुलाचल पर्वत पर धर्मके स्वामी भगवान महावीरका समवशरण आया है। भगवानके समवशरणके प्रसादसे वनश्री साक्षात् स्त्री बन गई है क्योंकि स्त्री जैसी पुत्ररूपी फलयुक्त होती है वनश्री भी स्वादु और मनोहर फलयुक्त हो गई है। स्त्री जैसी सुपुष्पा रजोधर्मयुक्त होती है वनश्री भी सुपुष्पा हरे पीले अनेक फूलोंसे सज्जित हो गई है। स्त्री जैसी यौवन अवस्थामें मदनोद्दीप्ता कामसे दीप्त हो जाती है वनश्री भी मदनोद्दीप्ता मदनवृक्षसे शोभित हो गई है।

भगवानके समवशरणकी कृपासे तालावोंने सज्जनोंके चित्तकी तुलना की है, क्योंकि सज्जनोंका चित्त जैसा रसपूर्ण करुणा आदि रसोंसे व्याप्त रहता है तालाव भी उसी प्रकार रसपूर्ण जलसे भरे हुए हैं। सज्जनोंका चित्त जैसा सपद्म अष्टदल-कमलाकार होता है, तालाब भी सपद्म-मनोहर कमलोंसे शोभित है। सज्जनचित्त जैसा वर-उत्तम होता है तालाब भी वर-उत्तम है। सज्जनका चित्त जैसा निर्मल होता है तालाब भी

उसी प्रकार निर्मल है। सज्जनोंके चित्त जैसे गम्भीर होते हैं तालाब भी इस समय गम्भीर हैं।

इस प्रकारसे भी वनश्रीने स्त्रीकी तुलना की है क्योंकि स्त्री जैसी सवंशा–कुलीना होती है वनश्री भी सवंशा वांसोंसे शोभित है। स्त्री जैसी तिलकोशोमा तिलकसे शोभित रहती है वनश्री भी तिलकोशोमा तिलकवृक्षसे शोभित है। स्त्री जैसी मदनाकुला–कामसे व्याकुल रहती है वनश्री भी मदनाकुला–मदन वृक्षोंसे व्याप्त है। स्त्री जैसी सुवर्णा मनोहर वर्णवाली होती है वनश्री भी सुवर्णा हरे पीले वर्णोंसे युक्त है। स्त्रीके सर्वांगमें जैसा मन्मथ–काम आनन्दमयमान रहता है वनश्री भी मन्मथ जातिके वृक्षोंसे जहां तहां व्याप्त है।

पद्मिनी स्त्री जैसी भोरोंकी झंकारोंसे युक्त रहती है वनश्री भी भोरोंकी झंकारसे शोभित है। स्त्री जैसी हास्ययुक्त होती है वनश्री भी पुष्परूपी हास्ययुक्त है। स्त्री जैसी स्तनयुक्त होती है वनश्री भी ठीक उसी प्रकार फलरूपी स्तनोंसे शोभित है। प्रभो! इस समय नोले आनन्दसे सर्पोंके साथ क्रीड़ा कर रहे हैं। बिल्लीके बच्चे वैर रहित मूसोंके साथ खेल रहे हैं। अपना पुत्र समझ हाथिनी सिंहनीके बच्चोंको आनन्दसे दूध पिला रही है और सिंहनी हथिनियोंके बच्चोंको प्रेमसे दूध पिला रही है।

प्रजापालक! समवशरणके प्रभावसे समस्त जीव वैर रहित हो गये हैं, मयूरगण सर्पोंके मस्तकोंपर आनन्दसे नृत्य कर रहे हैं। विशेष कहांतक कहा जाय, इस समय असम्भव भी काम बड़े २ देवोंसे सेवित महावीर भगवानकी कृपासे सम्भव हो रहे हैं।

मालीसे इसप्रकार अचिन्त्य प्रभावशाली भगवान् महावीरका आगमन सुन मारे आनन्दके महाराजका शरीर रोमांचित हो

गया। उदयाद्रिसे जैसा सूर्य उदित होता है महाराज भी उसी प्रकार शीघ्र ही सिंहासनसे उठ पड़े।

जिस दिशामें भगवानका समवशरण आया था उस दिशाकी ओर सात पैंड चलकर भगवानको परोक्ष नमस्कार किया। उस समय जितने उनके शरीरपर कीमती भूषण और वस्त्र थे तत्काल उन्हें मालीको दे दिया। धन आदि देकर भी मालीको संतुष्ट किया। समस्त जीवोंकी रक्षा करनेवाले महाराजने समस्त नगरवासियोंके बतानेके लिये बड़ी भक्ति और आनन्दसे नगरमें ड्योढ़ी पिटवा दी। ड्योढ़ीकी आवाज सुनते ही नगरनिवासी शीघ्र ही राजमहलके आंगनमें आगये। उनमें अनेक तो घोड़ेपर सवार थे और अनेक हाथीपर और रथोंपर बैठे थे।

सब नगरवासियोंके एकत्रित होते ही रानी, पुरवासी, राजा, सामन्त और मन्त्रियोंसे वेष्टित महाराज शीघ्र ही भगवानकी पूजार्थ वनकी ओर चल दिये। मार्गमें घोड़े आदिके पैरोंसे जो धूलि उठती थी वह हाथियोंके मदजलसे शांत हो जाती थी। उस समय जीवोंके कोलाहलोंसे समस्त आकाश व्याप्त था, इसलिये कोई किसीकी बात तक भी नहीं सुन सकता था। यदि किसीको किसीसे कुछ कहना होता था तो वह उसके मुंहकी ओर देखता था और बड़े कष्टसे इशारेसे अपना तात्पर्य उसे समझाता था।

उस समय ऐसा जान पड़ता था मानों बाजोंके शब्दोंसे सेना दिक्कुमारियोंको बुला रही है। उस समय सबोंका चित्त कर्मविजयी भगवान महावीरमें लगा था और छत्रोंका तेज सूर्यतेजको भी फीका कर रहा था। इसप्रकार चलते२ महाराज समवशरणके समीप जा पहुँचे।

समवशरणको देख महाराज शीघ्र ही गजसे उतर पड़े। मानस्तम्भ और प्रतिहार्योंकी अपूर्व शोभा देखते२ समवशरणमें घुस गये।

वहां जिनेन्द्र महावीरको विशाल किन्तु मनोहर सिंहासनपर विराजमान देख भक्तिपूर्वक नमस्कार किया एवं मन्त्रपूर्वक पूजा करना प्रारम्भ कर दिया। सबसे प्रथम महाराजने क्षीरोदधिके समान उत्तम और चन्द्रमाके समान निर्मल जलसे प्रभुकी पूजा की। पश्चात् चारों दिशामें महकनेवाले चन्दनसे और अखण्ड तंदुलसे जिनेन्द्र पूजे। कामबाणके विनाशार्थ उत्तमोत्तम चम्पा आदि पुष्प और क्षुधारोगके विनाशार्थ उत्तमोत्तम स्वादिष्ट पकवान चढ़ाये। समस्त दिशायें प्रकाश करनेवाले रत्नमयी दीपकोंसे और उत्तम धूपसे भी भगवानका पूजन किया एवं मोक्षफलकी प्राप्तिके लिये उत्तमोत्तम फल और अनर्घपदकी प्राप्त्यर्थ अर्घ भी भगवानके सामने चढ़ाये। जब महाराज श्रेणिक अष्टद्रव्यसे भगवानकी पूजा करचुके तो उन्होंने सानन्द हो इसप्रकार स्तुति करना प्रारम्भ कर दिया—

हे समस्त मानवोंके स्वामी! बड़े२ इन्द्र और चक्रवर्तियोंसे पूजित आपमें इतने अधिक गुण हैं कि प्रखर ज्ञानके धारक गणधर भी आपके गुणोंका पता नहीं लगा सकते। आपके गुण स्तवन करनेमें विशाल शक्तिके धारक इन्द्र भी असमर्थ हैं। मुझे जान पड़ता है कामको सर्वथा आपने ही जलाया है, क्योंकि महादेव तो उसके भयसे अपने अंगमें उसकी विभूति लपेटे फिरते हैं। विष्णु रातदिन क्षीरसमुद्रमें घुसे रहते हैं ब्रह्मा भी चतुर्मुख हो चारों दिशाकी ओर कामदेवको देखते रहते हैं और सदा भयसे कांपते रहते हैं।

प्रभो! ऊंचापना जैसा मेरु पर्वतमें है अन्य किसीमें नहीं, उसी प्रकार अखण्ड ज्ञान जैसा आपमें है वैसा किसीमें नहीं।

दीनबन्धो! जो मनुष्य आपके चरणाश्रित हो चुका है यदि वह मत्त, और सुगन्धसे आये भौंरोंकी झन्कारसे अतिशय क्रुद्ध महाबली गजके चक्रमें भी आजाये तो भी गज उसका कुछ

नहीं कर सकता। जिस मनुष्यके पास आपका ध्यानरूपी अष्टापद मौजूद है, मत्त हाथियोंके गण्डस्थल विदारण करनेमें चतुरसिंह भी उसे कष्ट नहीं पहुँचा सकता। आपके चरणसेवी मनुष्यका कल्पांतकालीन और अपने फुलिंगोंसे जाज्वल्यमान अग्नि भी कुछ नहीं कर सकती।

महामुने! जिस मनुष्यके हृदयमें आपकी नामरूपी नाग-दमनी विराजमान है, चाहे सर्प कैसा भी भयंकर हो उस मनुष्यके देखते ही शीघ्र निर्विष हो जाता है। दयासिंधो! जो मनुष्य आपके चरणरूपी जहाजमें स्थित है चाहे वह वडवानलसे व्याप्त, मगर आदि जीवोंसे पूर्ण समुद्रमें ही क्यों न जा पड़े, बातकी बातमें तैरकर पारपर आ जाता है।

जिनेन्द्र! जिन मनुष्योंने आपका नामरूपी कवच धारण कर लिया है वे अनेक भाले, बड़े२ हाथियोंके चीत्कारोंसे परिपूर्ण, भयंकर संग्राममें भी देखते२ विजय पा लेते हैं। कोढ़ जलोदर आदि भयंकर रोगोंसे पीड़ित भी मनुष्य आपके नामरूपी परमौषधिकी कृपासे शीघ्र ही नीरोग हो जाता है।

गुणाकर! जिसका अंग सांकलोंसे जकड़ा हुआ है, हाथ पैरोंमें बेड़ियां पड़ी हैं, यदि ऐसे मनुष्योंके पास आपका नामरूपी अद्भुत खड्ग मौजूद है तो वे शीघ्र ही बंधनरहित हो जाते हैं। प्रभो! अनादिकालसे संसाररूपी घरमें मग्न अनेक दुःखोंका सामना करनेवाले जीवोंके यदि शरण है तो तीनों लोकमें आप ही हैं।

प्रभो! कथंचित् गणनातीत मैं आपके गुणोंकी गणना करता हूं। कृपानाथ! गम्भीर गणनातीत परम प्रसन्न पर्स इतने गुण ही आपमें हैं इनसे अधिक आपमें गुण नहीं। इसलिये हे कल्याणरूप जिनेन्द्र! आपके लिये नमस्कार है। महामुने! परमयोगेश्वर वीर भगवान्! आप मेरी रक्षा करें।

इस प्रकार भगवान महावीरको भक्तिपूर्वक नमस्कार कर और गौतम गणधरको भी भक्तिपूर्वक शिर नवाकर महाराज मनुष्य कोठेमें बैठ गये एवं धर्मरूपी अमृतपानकी इच्छासे हाथ जोड़कर धर्मके बाबत कुछ पूछा।

महाराज श्रेणिकके इस प्रकार पूछनेसे समस्त प्रकारकी चेष्टाओंसे रहित भगवान महावीर अपनी दिव्यवाणीसे इस प्रकार उपदेश देने लगे—

राजन्! सकल भव्योत्तम! प्रथम ही तुम सात तत्वोंका श्रवण करो। सातों सम्यग्दर्शनके कारण हैं और सम्यग्दर्शन मोक्षका कारण हैं। वे सात तत्त्व जीव, अजीव, आस्रव, बंध, सवर, निर्जरा और मोक्ष है। जीवके मूलभेद दो हैं—त्रस और स्थावर। स्थावर पांच प्रकार हैं—पृथ्वी, अप, तेज, वायु और वनस्पति। ये पांचों प्रकारके जीव चारों प्राणवाले होते हैं और इनके केवल स्पर्शन इन्द्रिय होती है। ये पांचों प्रकारके जीव सूक्ष्म और स्थूल भेदसे दो प्रकार भी कहे गये हैं और ये सब जीव अपर्याप्त और लब्ध्यपर्याप्त इस रीतिसे तीन प्रकार भी हैं।

पृथ्वीजीव चार प्रकार हैं--पृथ्वीकाय, पृथ्वीजीव, पृथ्वी और पृथ्वीकयिक। इसी प्रकार जलादिके भी चार भेद समझ लेना चाहिये। आदिके चार जीव घनांगुलके असंख्यातवें भाग शरीरके धारक हैं। वनस्पतिकायके जीवोंका उत्कृष्ट शरीर परिमाण तो संख्यातांगुल है और जघन्य अंगुलके असंख्यात भाग है। शुद्धेतर पृथ्वीजीवोंकी आयु बारह हजार वर्षकी है।

जलजीवोंकी बाईस हजार वर्षकी है, तेजकायिक जीवोंकी सात हजार और तीन वर्षकी है एवं वायुकायिक जीवोंकी तीन हजार और वनस्पतिकायिक जीवोंकी उत्कृष्ट आयु दशहजार वर्षकी है। विकलेन्द्रिय जीव तीन प्रकार हैं—दोइंद्रिय, तेइन्द्रिय और चौइन्द्रिय। संज्ञी और असंज्ञी भेदसे पंचेंद्रिय भी दो प्रकार हैं।

पंचेन्द्रिय जीव मनुष्य, देव, तिर्यंच और नारकी भेदसे भी चार प्रकार हैं। नारकी सातों नरकमें रहनेके कारण सात प्रकार हैं।

तिर्यंचोंके तीन भेद हैं—जलचर, थलचर और नभचर। भोगभूमिज और कर्मभूमिज भेदसे मनुष्य दो प्रकारके हैं। जो मनुष्य कर्मभूमिज हैं वे ही मोक्षके अधिकारी हैं।

देव भी चार प्रकार हैं—भवनवासी, व्यंतर, ज्योतिष्क और वैमानिक। भवनवासी दश प्रकार हैं, व्यंतर आठ प्रकार, ज्योतिषी पांच प्रकार और वैमानिक दो प्रकार हैं। इस प्रकार संक्षेपसे जीवोंका वर्णन कर दिया गया। अब अजीवतत्त्वका वर्णन भी सुनिये—

अजीवतत्त्वके पांच भेद हैं—धर्म, अधर्म, आकाश, काल और पुद्गल। उनमें धर्मद्रव्य असंख्यात प्रदेशी, जीव और पुद्गलके गमनमें कारण, एक अपूर्व और सत्तारूप द्रव्य लक्षण युक्त है। अधर्म द्रव्य भी वैसा ही है किन्तु इतना विशेष है कि यह स्थितिमें सहकारी है।

आकाशके दो भेद हैं-एक लोकाकाश, दूसरा अलोकाकाश। लोकाकाश असंख्यात प्रदेशी है और अलोकाकाश अनंत प्रदेशी है। लोकाकाश सब द्रव्योंको घरके समान अवगाह दान देनेमें सहायक है।

कालद्रव्य भी असंख्यात प्रदेशी एक और द्रव्य लक्षण युक्त है। यह रत्नोंकी राशिके समान लोकाकाशमें व्याप्त है और समस्त द्रव्योंके वर्तना परिणाममें कारण है। कर्मवर्गणा, आहार-वर्गणा आदि भेदसे पुद्गल द्रव्य अनत प्रकार हैं और यह शरीर और इन्द्रिय आदिकी रचनामें सहकारी कारण है!

आस्रव दो प्रकार हैं—द्रव्यास्रव और भावास्रव। दोनों ही प्रकारके आस्रवके कारण मिथ्यात्व, अविरति, प्रमाद आदि हैं। जीवके विभाव परिणामोंसे बंध होता है, और उसके चार भेद

हैं–प्रकृतिबंध, स्थितिबंध, अनुभागबंध और प्रदेशबंध। आस्रवका रुकना संवर है। संवरके भी दो भेद हैं—द्रव्यसंवर और भावसंवर। और इन दोनों ही प्रकारके संवरोंके कारण गुप्ति, समिति, धर्म, अनुप्रेक्षा आदि हैं।

निर्जरा दो प्रकार हैं—सविपाक निर्जरा और अविपाक निर्जरा। सविपाक निर्जरा साधारण और अविपाक निर्जरा तपके प्रभावसे होती है। द्रव्यमोक्ष और भावमोक्षके भेदसे मोक्ष भी दो प्रकार कहा गया है और समस्त कर्मोंसे रहित हो जाना मोक्ष है। मगधेश! यदि इन्हीं तत्वोंके साथ पुण्य और पाप जोड़ दिये जायें तो ये ही नव पदार्थ कहलाते हैं।

इस प्रकार पदार्थोंके स्वरूपके वर्णनके अनतर भगवानने श्रावक व मुनिधर्मका भी वर्णन किया।

महाराज श्रेणिकके प्रश्नसे भगवानने त्रेसठशलाका पुरुषोंका चरित्र भी वर्णन किया। जिससे महाराज श्रेणिकके चित्तमें जो जैनधर्म विषयक अंधकार था शीघ्र ही निकल गया। जब महाराज श्रेणिक भगवानकी दिव्य ध्वनिसे उपदेश सुन चुके तो अतिशय विशुद्ध मनसे राजा श्रेणिकने गौतम गणधरको नमस्कार किया और विनयसे इस प्रकार निवेदन करने लगे –

भगवान्। पुराणश्रवणसे जैनधर्ममें मेरी बुद्धि दृढ है। संसार नाश करनेवाली श्रद्धा भी मुझमें है तथापि प्रभो! मैं नहीं जान सकता कि मेरे मनमें ऐसा कौनसा अभिमान बैठा है जिससे मेरी बुद्धि व्रतोंकी ओर नहीं झुकती। मगधेशके ऐसे वचन सुन गणनायक—

गौतमने कहा:—

राजन्! भोगके तीव्र संसर्गसे, गाढ़ मिथ्यात्वसे, मुनिराजके गलेमें सर्प डालनेसे, दुश्चरित्रसे और तीव्र परिग्रहसे तूने पहिले नरकायु बांध रक्खी है इसलिये तेरी परिणति व्रतोंकी ओर

नहीं झुकती। जो मनुष्य देवगतिका बन्धन बांध चुके हैं उन्हींकी बुद्धि व्रत आदिमें आती है। अन्य गतिकी आयु बांधनेवाले मनुष्य व्रतोंकी ओर नहीं झुकते।

नरनाथ! संसारमें तू भव्य और उत्तम है। पुराणश्रवणसे उत्पन्न हुई विशुद्धिसे तेरा मन अतिशय शुद्ध है, सात प्रकृतियोंके उपशमसे तेरे औपशमिक सम्यग्दर्शन था। अन्तर्मुहूर्तमें क्षायोपशमिक सम्यक्त्व पाकर उन्हीं सात प्रकृतियोंके क्षयसे अब तेरे क्षायिकसम्यक्त्वकी प्राप्ति होगई है। यह क्षायिक सम्यक्त्व निश्चल अविनाशी और उत्कृष्ट है।

भव्योत्तम! जिनेन्द्र द्वारा प्रतिपादित पूर्वापरविरोध रहित शास्त्रों द्वारा निरूपित निर्दोष सात तत्त्वोंका श्रद्धान सम्यग्दर्शन कहा गया है।

इस सम्यग्दर्शनकी प्राप्ति अतिशय दुर्लभ मानी गई है। संसाररूपी विषवृक्षके जलानेमें सम्यग्दर्शनके सिवाय कोई वस्तु समर्थ नहीं। सम्यग्दर्शनसे बढ़कर संसारमें कोई सुख भी नहीं और न कोई कर्म और तप है। देखो—सम्यग्दर्शनकी कृपासे समस्त सिद्धियां मिलती हैं। सम्यग्दर्शनकी ही कृपासे तीर्थंकरपना और स्वर्ग मिलता है एवं संसारमें जितने सुख हैं वे भी सम्यग्दर्शनकी कृपासे बातकी बातमें प्राप्त हो जाते हैं।

राजन्! इस सम्यग्दर्शनकी कृपासे जीवोंके कुव्रत भी सुव्रत कहलाते हैं और उसके बिना योगियोंके सुव्रत भी कुव्रत होजाते हैं। भव्योत्तम! तू अब किसी बातका भय मत कर। सम्यग्दर्शनकी कृपासे आगे उत्सर्पिणी कालमें तू इसी भरतक्षेत्रमें पद्मनाभ नामका धारक तीर्थंकर होगा, इसलिये तू आसन्नभव्य है। तू अब निर्भय हो। तूने तीर्थंकर प्रकृतिकी कारण भावनायें भाली है, समस्त दोष रहित तूने सम्यग्दर्शन प्राप्त कर लिया है और

विनयगुण तुममें स्वभावसे है। तेरा चित्त भी शीलव्रतकी ओर झुका है। यह शीलव्रत व्रतोंकी रक्षार्थ छत्रके समान है।

मगधेश्वर! तू अपने चित्तमें संवेगकी भावना करता है, भवभोगसे निवृत्त होनेके लिये तपमें भी मन लगाता है, शक्त्यनुसार धर्मार्थ जिनपूजा आदिमें तेरा धन भी खर्च होता है, साधुओंका समाधान भी तू आश्चर्यकारी करता है, शास्त्रानुसार तू योगियोंका वैयावृत्य भी करता है, समस्त कर्म रहित जिनेन्द्र भगवानमें तेरी भक्ति भी अद्वितीय है, भले प्रकार शास्त्रके जानकार उत्तमोत्तम आचार्योंकी उपासना तू भक्ति और हर्ष-पूर्वक करता है, जिनप्रतिपादित शास्त्रोंका तू भक्त भी है, इस समय षट् आवश्यकोंमें तेरी बुद्धि भी अपूर्व है, धर्मके प्रसारके लिये तू जैनमार्गकी प्रभावना भी करता है। जैनमार्गके अनुयायी मनुष्योंमें वात्सल्य भी तेरा उत्तम है।

राजन्! त्रैलोक्यमें मोक्षकी कारण परम पवित्र सोलह भावना भानेसे तूने तीर्थंकरपदका बन्ध भी बांध लिया है। अब तू प्राणोंका त्यागकर प्रथम नरक रत्नप्रभामें जायेगा और वहां मध्य आयुको भोगकर भविष्यत् कालमें नियमसे रत्नधामपुरमें तू तीर्थंकर होगा। मुनिनाथ गौतमके ऐसे वचन सुन महाराज श्रेणिकने कहा—

नाथ! अधोगतिका प्रियपना क्या है? श्रेणिकका भीतरी भाव समझ गौतम गणधरने राजा श्रेणिकको कालसूकरकी कथा सुनाई। उसने पहिले अपने पापोदयसे सप्तम नरककी आयु बांध पुनः किस रीतिसे उसका छेद किया सो भी कह सुनाया।

इस प्रकार गौतम गणधरके वचनोंसे अतिशय सन्तुष्ट, अनेक बड़े२ राजाओंसे पूजित महाराजने जिनराजके चरणकमलोंसे अपना मन लगाया और समस्त कल्याणकोंसे युक्त हो वे अपने पुत्र पौत्रोंके साथ शत्रु रहित हो गये।

पापोंसे जो पहिले सप्तम नरककी आयु बांध ली थी उस आयुको अपने उत्कृष्ट भावों द्वारा महाराज श्रेणिकने छेदकर दिया तथा तीर्थंकर नामकर्मकी शुभ भावना आनेसे भविष्यत्‌में तीर्थंकर प्रकृतिका बन्ध बांधकर अतिशय शोभाको धारण करने लगे। देखो भावोंकी विचित्रता !

कहाँ तो सप्तम नरककी उत्कृष्ट स्थिति और कहाँ फिर केवल प्रथम नरककी मध्यम स्थिति ? यह सब धर्मका ही प्रसाद है।

धर्मकी कृपासे जीवोंको अनेक कल्याण आकर उपस्थित हो जाते हैं और धर्मकी कृपासे तीर्थंकर पदकी भी प्राप्ति हो जाती है इसलिये उत्तम पुरुषोंको चाहिये कि वे निरन्तर धर्मका आराधन करें।

इस प्रकार भविष्यत् कालमें होनेवाले श्री पद्मनाभ तीर्थंकरके
जीव महाराज श्रेणिकके चरित्रमें महाराज श्रेणिकको
क्षायिक सम्य-दर्शनकी उत्पत्ति वर्णन करनेवाला
बारहवां सर्ग समाप्त हुआ।

तेरहवां सर्ग

देव द्वारा अतिशय प्राप्तिका वर्णन

गणके स्वामी मुनियोंमें उत्तम श्री गौतम गणधरको भक्ति-पूर्वक नमस्कार कर बड़ी विनयसे कुमार अभयने अपने भवोंको पूछा। कुमारको इस प्रकार अपने पूर्वभव श्रवणकी अभिलाषा देख गौतम गणधर कहने लगे—

कुमार अभय! यदि तुम्हें अपने पूर्ववृत्तांत सुननेकी अभिलाषा है तो मैं कहता हूं, तुम ध्यानपूर्वक सुनो:—

इसी लोकमें एक वेणातड़ाग नामकी पुरी है, वेणातड़ागमें कोई रुद्रदत्त नामका ब्राह्मण निवास करता था। वह रुद्रदत्त बड़ा पाखण्डी था इसलिये किसी समय तीर्थाटनके लिये निकल पड़ा और घूमतार उज्जयनीमें जा निकला।

उस समय उज्जयनीमें कोई अर्हद्दास नामका सेठ रहता था। उसकी प्रियभार्या जिनमती थी। वे दोनों ही दम्पति जैनधर्मके पवित्र सेवक थे। अनेक जगह नगरमें फिरता फिरता रुद्रदत्त सेठ अर्हद्दासके घर आया और कुछ भोजन मांगने लगा। वह समय रात्रिका था इसलिये ब्राह्मणकी भोजनार्थ प्रार्थना सुन जिनमतीने कहा—

यह समय रात्रिका है। विप्र! मैं रात्रिको भोजन न दूंगी।

सेठानी जिनमतीके ऐसे वचन सुन रुद्रदत्तने कहा—

बहिन! रात्रिमें भोजन देनेमें और करनेमें क्या दोष है? जिससे तू मुझे भोजन नहीं देती? जिनमतीने कहा—

प्रिय भव्य! रात्रिमें भोजन करनेसे पतग, डांस, माखी आदि जीवोंका घात होता है इसलिये महापुरुषोंने रात्रिका भोजन अनेक पाप प्रदान करनेवाला, हिंसामय, घृणित और

अनेक दुर्गतियोंका देनेवाला कहा है। यह निश्चय समझो कि जो मनुष्य रात्रिमें भोजन करते हैं वे नियमसे उल्लू, बाघ, हिरण, सर्प, बिच्छू होते हैं और रात्रि भोजियोंको बिल्ली और मूसोंकी योनियोंमें घूमना पड़ता है। और सुन—जो मनुष्य रात्रिमें भोजन नहीं करते उन्हें अनेक सुख मिलते हैं!

रातमें भोजन न करनेवालोंको न तो इस भव सम्बन्धी कष्ट भोगना पड़ता है और न परभव सम्बन्धी, इसलिये हे विप्र! मैं तुम्हें रातमें भोजन न दूंगी, सवेरा होते ही भोजन दूंगी। जिनमतीकी ऐसी युक्तियुक्त वाणी सुनकर विप्रने शीघ्र ही रात्रिभोजनका त्याग किया और सबेरे आनन्दपूर्वक भोजन-कर सम्यक्त्व गुणसे भूषित किसी जैन मनुष्यके साथ गंगास्नानके लिये चल दिया।

मार्गमें चलतेर एक पीपलका वृक्ष, जो कि फलोंसे श्याम था, लम्बी शाखाओंका धारी, भांति भांतिके पक्षियोंसे युक्त और जिसके चौतर्फा बड़ेर पाषाणोंके ढेर थे, दीख पड़ा।

वृक्षको देखते ही ब्राह्मणका कंठ भक्तिसे गद्गद् हो गया। उसे देव जान शीघ्र ही उसने नमस्कार किया, गाढ़ मिथ्यात्वसे मोहित हो शीघ्र ही उसकी तीन परिक्रमा दीं और बारर उसकी स्तुति करने लगा। विप्र रुद्रदत्तकी ऐसी चेष्टा देख और उसे प्रबल मिथ्यामती समझ उसके बोधार्थ वह वणिक कहने लगा—

विप्रवर! कृपया कहो, यह किस नामका धारक देव है और इसका माहात्म्य क्या है? विप्रने जवाब दिया—

विष्णु भगवानके वासके लिये यह बोधिकर्म नामका देव है। यह इच्छानुसार मनुष्योंका बिगाड़ सुधार कर सकता है। ब्राह्मणके मुखसे वृक्षकी यह प्रशंसा सुन वणिकने शीघ्र ही उसमें

दो लात मारी और उसके पत्ते तोड़कर उन्हें जमीन पर बिछाकर शीघ्र ही उनके ऊपर बैठ गया और विप्रसे कहने लगा—

प्रिय विप्र! अपने ईश्वरका प्रताप देखो। अरे यह वनस्पति मनुष्योंपर क्या रिस खुश हो सकती है? वणिककी वैसी चेष्टा देख रुद्रदत्तने जवाब तो कुछ नहीं दिया, किन्तु अपने मनमें यह निश्चय किया कि अच्छा, क्या हर्ज है? कभी मैं भी इसके देवताको देखूंगा।

इस वणिकने नियमसे मेरा अपमान किया है तथा इस प्रकार अपने मनमें विचार करता२ कहने लगा—भाई! देवकी परीक्षामें किसीको मध्यस्थ करना चाहिये। ब्राह्मण रुद्रदत्तके ऐसे वचन सुन वणिकने उसके अन्तरंगकी कालिमा समझ ली तथा वह उसे इस रीतिसे समझाने लगा—

प्रियमित्र! यह पीपल एकेन्द्रिय जीव है। इसमें न तो मनुष्योंके समान विशेष ज्ञान है न किसी प्रकारकी सामर्थ्य है। यह तो केवल पक्षियोंका घर है। तुम निश्चय समझो सिवाय शुभाशुभ कर्मके यहां किसीमें सामर्थ्य नहीं जो मनुष्योंका बिगड़ सुधार कर सके। प्रिय भ्राता! यह निश्चय है कि जो मनुष्य धर्मात्मा हैं, बड़े२ देव भी उनके दास बन जाते हैं और पापियोंके आत्मीयजन भी उनसे विमुख हो जाते हैं।

इसप्रकार अपनी वचनभंगीसे और जिनेन्द्र भगवानके आगमकी कृपासे श्रावक उस वणिकने शीघ्र ही ब्राह्मणका मिथ्यात्व दूर कर दिया और वे दोनों स्नेहपूर्वक बातचीत करते हुए आगेको चल दिये।

आगे चलकर वे दोनों गंगा नदीके किनारे पहुंचे। वणिक तो भूखा था इसलिये वह खानेको बैठ गया और रुद्रदत्त शीघ्र ही स्नानार्थ गंगामें घुस गया। बहुत देर तक उसने गंगामें स्नान किया व पानी उछालकर पितरोंको पानी दिया पश्चात् वहां

यह जैन श्रावक भोजन करने बैठा था वहीं आया। विप्रको आया देख वणिकने कहा—

विप्रवर! यह जूठा भोजन रक्खा है आनंदपूर्वक इसे खाओ। वणिककी ऐसी बात सुन विप्रने जवाब दिया—

वणिक सरदार! यह बात कैसे हो सकती है? झूठा भोजन खाना किसी प्रकार योग्य नहीं। विप्रके ऐसे वचन सुन वणिकने जवाब दिया—

भाई! यह भोजन गंगाजल मिश्रित है। इसमें झूठापन कहांसे आया? तुम निर्भय हो खाओ। गंगाजल मिश्रित होनेसे इसमें जरा भी दोष नहीं। यदि कहो कि तीर्थ जलसे मिश्रित भी झूठा भोजन योग्य नहीं हो सकता तो तुम्हीं बताओ पापकी शुद्धि गंगाजलसे कैसे हो सकती?

अरे भाई! यदि यह बात ठीक हो कि स्नानसे शुद्धि हो जाती है तो मछलियां रातदिन गंगाके जलमें पड़ी रहती हैं, धीवर हमेशा नहाते धोते रहते हैं, उन्हें शुद्ध हो सीधे स्वर्ग चले जाना चाहिये। प्रिय भाई! तुम निश्चय समझो, भीतरी शुद्धि स्नानसे नहीं होती किन्तु तप, व्रत, ध्यान, क्षमा और शुभभावसे होती है।

देखो शराबका घड़ा ऊपरसे हजारबार धोनेपर भी जैसे शुद्ध नहीं होता उसी प्रकार यह देह भी पापमय है, अब्रह्म आदि पापोंसे व्याप्त है। कदापि इस देहकी स्नानसे शुद्धि नहीं हो सकती, किन्तु जिन मनुष्योंने ज्ञानतीर्थका अवगाहन किया है, ज्ञानतीर्थमें स्नान किया है वे बिना जलके ही धोके घड़ेके समान शुद्ध रहते हैं।

वणिकके वचन सुन ब्राह्मणने शीघ्र ही तीर्थमूढ़ताका त्याग कर दिया। वहींपर एक तपस्वी भी पंचाग्नि तप रहा था। वणिक ब्राह्मण रुद्रदत्तको उसके पास ले गया और जलती हुई

अग्निमें अनेक प्राणियोंको मरते दिखाया जिससे विप्रसे पाखण्डी-तपोमूढता भी छुड़वा दी और यह उपदेश भी दिया कि—

वेदमें जो यह बात बतलाई है कि हिंसा बाक्य भयका देनेवाला होता है। पाखण्डी तप महान हिंसाका करनेवाला है सो कैसे तुम्हारे मनमें योग्य जंच सकता है? प्रिय विप्र! यदि बिना दयाके भी धर्म कहा जायगा तो बिल्ली, मूंसे, बाघ, व्याघ्र आदि भी धर्मात्मा कहे जायेंगे। यज्ञमें सफेद छागका मारना यदि ठीक है तो धनयुक्त मनुष्यका चोरों द्वारा मारना भी किसी प्रकार पापप्रद नहीं हो सकता।

यदि कहो कि नरमेध और अश्वमेध यज्ञमें जो प्राणी मरते हैं वे सीधे स्वर्ग चले जाते हैं तो उक्त यज्ञभक्तोंको चाहिये कि वे अपने कुटुम्बीजनोंको भी यज्ञार्थ हनें। प्रिय रुद्रदत्त! वेद हो, चाहें लोक हो किसीमें पापप्रद प्राणी-घातसे कदापि धर्म नहीं हो सकता। प्राणिघातसे धर्म मानना बड़ी भारी भूल है।

इस प्रकार अपने उपदेशसे वणिकने रुद्रदत्तकी आगम मूढता भी छुड़वादी। सांख्यादि दूसरे२ मतोंके सिद्धांतोंका खंडन करता हुआ उसे जैन तत्वोंका उपदेश दिया जिससे उस ब्राह्मणने समस्त दोषरहित बड़े बड़े देवोंसे पूजित सम्यक्त्वमें अपने चित्तको जमाया। जिनोक्त तत्वोंमें श्रद्धा की और मिथ्यात्वकी कृपासे जो उसके चित्तमें मूढ़ता थी सब दूर हो गई।

कदाचित् श्रावक व्रतोंसे युक्त सम्यक्त्वके धारी आपसमें परमस्नेही वे दोनों तत्त्वचर्चा करते हुए मार्गमें जा रहे थे कि पूर्वपापके उदयसे उन्हें दिशा भूल हो गई। वह वन निर्जनवन था, वहां कोई मनुष्य रास्ता बतलानेवाला न था।

इसलिये जब उन दोनोंका संग छूट गया तो ब्राह्मण रुद्रदत्तने शीघ्र ही सन्यास लेकर चारों प्रकारके आहारका त्याग कर दिया

और प्रथम स्वर्गमें जाकर देव होगया। वहां पर बहुत कालतक उसने देवियोंके साथ उत्तमोत्तम स्वर्गसुख भोगे।

आयुके अन्तमें मरकर अब तू अभयकुमार नामका धारी राजा श्रेणिकका पुत्र उत्पन्न हुआ और अब जैन शास्त्रानुसार तप कर तू नियमसे सिद्धपदको प्राप्त होगा। इसप्रकार जब गौतम गणधर अभयकुमारके पूर्वभवका वृत्तांत कह चुके तो हस्तिकुमारने भी विनयसे कहा—

प्रभो! मैं पूर्वभवमें कौन था? कैसा था? कृपाकर कहें। हस्तिकुमारके ऐसे वचन सुन गौतम भगवान्‌ने कहा—

यदि तुम्हें अपने पूर्वभवके सुननेकी इच्छा है तो मैं कहता हूं तुम ध्यानपूर्वक सुनो—इसी पृथ्वीतलमें एक अनेक प्रकारके वृक्षोंसे मंडित भयंकर दारुण नामका वन है। किसी समय उस वनमें अतिशय ध्यानी सुधर्म नामका योगी तप करता था और अतिशय निर्मल अपनी शुद्धात्मामें लीन था। उस वनका रखवारा दारुणभिल्ल नामका देव था।

कार्यवश मुनिराजको बिना देखे ही उसने वनमें अग्नि जला दी। कल्पांतकालके समान अग्निकी ज्वाला धधकने लगी। अग्निज्वालासे मुनिराजका शरीर भस्म होने लगा। उनके प्राणपखेरु उड़भगे और मरकर मुनिराज अच्युत स्वर्गमें जाकर देव होगया।

जब वनरक्षक देवने मुनिराजका अस्थिपंजर देखा तो उसे परम दुःख हुआ। अपनी बार२ निंदा करता वह इस प्रकार विचारने लगा—हाय!!! चारित्रसे व पवित्र तपसे शोभित बिना कारण मैंने मुनिराजके शरीरको जला दिया। हाय! मुझसे अधिक संसारमें पापी कोई न होगा तथा इस प्रकार विचार करते२ उसकी आयु भी समाप्त हो गई और वह मरकर उसी जगह शुभ, विशाल शरीरका धारक उन्नतदंतोंसे शोभित एवं अंजन पर्वतके समान ऊंचा हाथी होगया।

कदाचित् अष्टाह्निका पर्वमें अच्युत स्वर्गका निवासी वह मुनिका जीव देव नंदीश्वर पर्वतकी वंदनार्थ निकला और उसी वनमें उसे वह हाथी दीख पड़ा। अपने अवधिज्ञानके बलसे देवने अपनी पूर्व मुनिमुद्रा जानली और पुष्पक विमानसे उतर कर उस वनमें उसी प्रकार ध्यानमें लीन हो गया।

हाथीने जब उसे देखा तो उसे शीघ्र ही जाति स्मरण हो गया। जातिस्मरण होते ही उसकी आंखोंसे अश्रुपात होने लगा। अपने पूर्वभवकी बारबार निन्दा करते हुवे शीघ्र ही उस देवको नमस्कार किया।

देवके उपदेशसे हाथीने सम्यग्दर्शनके साथ शीघ्र ही श्रावक व्रत धारण किये। देव वहांसे चला गया, हाथी भी प्रासुकजल और पक्व फलाहारसे श्रावक व्रत पालन करने लगा। अपनी आयुके अन्तमें सन्यास धारणकर हाथीने समाधिपूर्वक अपना चोला छोड़ा और अनेक देवोंसे सेवित सहस्रार स्वर्गमें जाकर देव हो गया। जैसे क्षणभरमें आकाशमें मेघसमूह प्रकट होजाता है उसी प्रकार उत्पाद शैयापर उत्पन्न होते ही अन्तर्मुहूर्तमें उसे पूर्ण शरीरकी प्राप्ति हो गई, उसके कानोंमें कुण्डल और केयूर झलकने लगे।

वक्षस्थलमें मनोहर विशाल हार और शिरपर मनोहर रत्नजड़ित मुकुट झिलमिलाने लगा। चारों ओर दिशा सुगन्धीसे व्याप्त हो गई, निर्मल ऋद्धियोंकी प्राप्ति हो गई, शरीर दिव्य वस्त्र और आभूषणोंसे शोभित हो गया तथा नेत्र विशाल और निर्निमेष हो गये। जिस समय देवने अपनी ऐसी सुन्दर दशा देखी तो वह विचारने लगा—

मैं कौन हूँ? यहां कहांसे आया हूं? मेरा क्या स्थान और और क्या गति है? मनोहर शब्द करनेवाली ये देवांगनाएं क्यों इस प्रकार मुझे चाहती हुई नृत्य कर रही हैं? इसप्रकार विचार करते करते अपने अवधिज्ञान बलसे शीघ्र ही उसने 'मैं

मंत्रोंकी कृपासे हाथीकी योनिसे यहां आया हूं" इत्यादि वृत्तांत जान लिया तथा वृत्तांत जानकर और अपनेको स्वर्गस्थ देव समझकर जिनेन्द्र आदिको पूजते हुवे उसने धर्ममें मति की।

दिव्यांगनाओंके साथ वह आनन्द सुख भोगने लगा, नन्दीश्वर पर्वतपर जिनमन्दिरोंको पूजने लगा। इस रीतिसे अचनगोचर स्वर्ग सुख-भोगकर और वहांसे च्युत होकर अब तू रानी चेलनाके गर्भमें आकर उत्पन्न हुआ है। इस प्रकार गौतम गणधरद्वारा अभयकुमार व दंतिकुमारका पूर्वभववृत्तांत सुन श्रेणिक आदि प्रधान २ पुरुषोंको अतिशय आनन्द हुआ।

सबोंने शीघ्र ही मुनिनाथको नमस्कार किया। दृढ़ सम्यक्त्व रूपासे पूर्ण जिनशासनको स्मरण करते हुवे भगवानके गुणोंमें दत्तचित्त वे सब प्रीतिपूर्व नगरमें आगये, और बड़े २ महाराजोंको वशमें कर महाराज श्रेणिकने महामंडलेश्वरपद प्राप्त कर लिया। किसी समय महाराज इन्द्र अपनी सभामें अनेक देवोंके साथ बैठे थे। अपने वचनोंसे सम्यक्त्वकी महिमा गान करते हुवे वे कहने लगे—

भरतक्षेत्रमें महाराज श्रेणिक सम्यग्दर्शनसे अतिशय शोभित हैं। वर्तमानमें उनके समान क्षायिक सम्यक्त्वका धारक दूसरा कोई नहीं। जिसके सम्यग्दर्शनरूपी विशाल वृक्षको मिथ्यादर्शन रूपी गज तोड़ नहीं सकता और वह वृक्ष महाशाखारूपी दृढ़मूलका धारक और स्थिर है। कुआगम कुठार उसे छेद नहीं सकता। कुशास्त्ररूपी प्रबल पवन भी उसे नहीं चला सकती। उसका सम्यक्त्वरूपी वृक्ष शास्त्ररूपी जलसे सिंचित है और उस सम्यग्दर्शनका दृढ़भावरूपी महामूल छिन्न नहीं किया जा सकता। महाराज इन्द्र द्वारा श्रेणिकके सम्यग्दृष्टिपनेकी इस प्रकार प्रशंसा सुन सभामें स्थित समस्त देव आश्चर्य करने लगे एवं अतिशय प्रीतियुक्त किन्तु मनमें अति आश्चर्ययुक्त दो देव

शीघ्र ही महाराज श्रेणिककी परीक्षार्थ पृथ्वीमंडलपर उतरे और कहां तो महाराज श्रेणिक मनुष्य ? और कहां फिर उसकी इन्द्रद्वारा तारीफ ? यह भलेप्रकार विचार कर जो महाराज श्रेणिकके आनेका मार्ग था उस मार्ग पर स्थित हो गये ।

उनमें एक देवने पीछी कमंडलु हाथमें लेकर मुनिरूप धारण किया और दूसरेने आर्यिकाका । वह आर्यिका गर्भवती बन गई और मुनिवेषधारी वह देव मछलियोंको किसी तालावसे निकाल अपने कमंडलुमें रखता हुआ उस गर्भवती आर्यिकाके साथ रहने लगा । महाराज श्रेणिक वहां आये । उन्हें देख जल्दी घोड़ेसे उतर और भक्तिपूर्वक उन्हें नमस्कार कर कहने लगे—

समस्त मनुष्योंको हास्यास्पद यह दुष्कर्म आप क्या कर रहे हैं ? इस वेषमें यह दुष्कर्म आपको सर्वथा वर्जनीय है । श्रेणिकके ऐसे वचन सुन मायावी उस देवने जवाब दिया—

राजन् ! गर्भवती इस आर्यिकाको मछलीके मांस खानेकी अभिलाषा हुई है इसलिये इसके लिये मैं मछलियां पकड़ रहा हूँ । इस कर्मसे मुझे कोई दोष नहीं लग सकता । देवकी यह बात सुन श्रेणिकने कहा—

मुनिवेष धारणकर यह कर्म आपके लिये सर्वथा अयोग्य है । इसमें मुनिलिंगकी बड़ी भारी निन्दा है । आपको चाहिये कि इस कामको आप सर्वथा छोड़ दें । देवने कहा—

राजन् ! तुम्हीं कहो इस समय हमें क्या करना चाहिये ? मेरा अनायास ही इस निर्जन वनमें इस आर्यिकाके साथ सम्बन्ध होगया इसलिये इसे गर्भोत्पत्ति और मांसाभिलाषा हो गई । मैं इसे अब चाहता हूँ इसलिये मेरा कर्तव्य है कि मैं इसकी इच्छायें पूरण करूं । छली मुनिकी यह बात सुनकर राजाने कहा—

तथापि मुने ! इस वेषमें तुम्हारा यह कर्तव्य सर्वथा अयोग्य

है। आपको कदापि यह काम नहीं करना चाहिये। राजाके ऐसे वचन सुन देवने कहा—

राजन्! आप क्या विचार कर रहे हैं? जितने मुनि और आर्यिकाओंको आप देख रहे हैं वे सब मेरे ही समान शुभ कार्यसे विमुख हैं। निर्दोष कोई नहीं। महाराज! जिसकी अंगुली दबती है उसे ही वेदना होती है, अन्य मनुष्य वेदनाका अनुभव नहीं कर सकते वे तो हंसते हैं, उसी प्रकार आप हमें देखकर हंसते हैं। देवकी यह बात सुन श्रेणिकको कुछ क्रोधसा आगया। वे कहने लगे—

मुने! तू मुनि नहीं है, बड़ा निकृष्ट दयारहित चारित्रविमुख और मूर्ख है। तेरे सम्यग्दर्शन भी नहीं मालूम होता। श्रेणिकके ऐसे वचन सुन देवने जवाब दिया—

राजन्! जो मैंने कहा है सो बिलकुल ठीक कहा है। क्या तेरा यह कर्तव्य है कि तू परम योगियोंको गाली प्रदान करे? हमने समझ लिया कि तुझमें जैनीपना नाम मात्रका है। यतियोंको मर्मविदारक गाली देनेसे जैनीपनेका तुझमें कोई गुण नहीं दीख पड़ता। देवके ऐसे वचन सुन महाराजने कहा—

मुने! संवेगादि गुणोंके अभावसे तो तेरे सम्यग्दर्शन नहीं है और दया विना चारित्र नहीं है। ऐसे दुष्कर्म करनेसे तू बुद्धिमान भी नहीं, नीतिमान योगी और शास्त्रवेत्ता भी नहीं। साधो! यदि तू ऐसा करेगा तो जैनधर्मकी प्रभावनाका नाश हो जायगा। इसलिये तेरा यह कर्तव्य सर्वथा अनुचित है। यदि तू नहीं मानता तो तुझे नियमसे इस दुष्कर्मका फल भोगना पड़ेगा।

मुने! जो तुमने मुझसे दुष्ट वचन कहे हैं उनसे तुम कदापि मुनि नहीं हो सकते इसलिये तुम शीघ्र ही दुष्कर्मका त्याग करो जिससे तुम्हें मुक्ति मिले। अभी तुम मेरे साथ चलो, मैं

तुम्हारी सब आशा पूरी करूंगा और यदि तुम मेरे साथ न चलोगे तो तुम्हें गधेपर चढ़ाकर तुम्हारा हालबेहाल करूंगा। इसप्रकार साम्य आदि वचनोंसे मुनिको समाश्वासन दे राजा श्रेणिक उन दोनोंको घर ले आये और अपने मंदिरमें लाकर ठहराया। जिस समय मंत्रियोंने राजा श्रेणिकको चारित्रभ्रष्ट मुनि और आर्यिकाके साथ देखा तो वे कहने लगे—

राजन्! आप क्षायिक सम्यग्दृष्टि हैं, आपके संग इस चारित्रभ्रष्ट मुनि आर्यिका युगलका साथ कदापि योग्य नहीं हो सकता। आपको इनका सम्बन्ध छोड़ देना योग्य है। चारित्रभ्रष्ट मुनि आर्यिकाके नमस्कार करनेसे आपके दर्शनमें अतिचार आता है। मंत्रियोंके ऐसे वचन सुन महाराज श्रेणिकने जवाब दिया—

वेषधारी इस मुनिको मैंने वास्तविक मुनि जान नमस्कार किया है इससे मेरे दर्शनमें कदापि अतीचार नहीं आ सकता, किन्तु चारित्रमें अतीचार आता है सो चारित्र मेरे नहीं है इसलिये इनको नमस्कार करनेपर भी कोई दोष नहीं। महाराज श्रेणिकका ऐसा पाडित्य देख और इन्द्र द्वारा की हुई प्रशंसाको वास्तविक प्रशंसा जान वे दोनों देव अति आनन्दित हुए।

अपना रूप बदल उन्होंने शीघ्र ही आनन्दपूर्वक रानी चेलना और महाराज श्रेणिकके चरणोंको नमस्कार किया।

सुवर्ण सिंहासनपर बैठाकर दोनों देवोंने भक्तिपूर्वक गंगा सीता आदि नदियोंके निर्मल जलसे राजा रानीको स्नान कराया, वस्त्र भूषण फूलोंसे प्रशंसापूर्वक उनकी पूजा की। अनेक अनान्य गुण और सम्यग्दर्शनसे शोभित उन दोनों दम्पतीको नमस्कारकर आकाशमें पुष्पवर्षाके साथ वाद्यनादोंको कर अतिशय हर्षित और राजा रानीके गुणोंमें दत्तचित्त वे दोनों देव कीर्तिभाजन बने। सो ठीक ही है सम्यग्दर्शनकी कृपासे सम्यग्दृष्टियोंकी बड़ेर देव

परम सन्तोष देनेवाली पूजन करते हैं और संसारमें सम्यग्दर्शनकी कृपासे इन्द्रोंद्वारा प्रशंसा भी मिलती है।

इस प्रकार पद्मनाभ तीर्थंकरके पूर्वभवके जीव महाराज श्रेणिकके चरित्रमें देवद्वारा अतिशय प्राप्ति वर्णन करनेवाला तेरहवां सर्ग समाप्त हुवा।

चौहहवां सर्ग

श्रेणिक, चेलना आदिकी गतिकी वर्णन

कदाचित् महाराज सानंद सभामें विराजमान थे कि समस्त भयोंसे रहित संसारकी वास्तविक स्थिति जाननेवाले कुमार अभय सभामें आये। उन्होंने भक्तिपूर्वक महाराजको नमस्कार किया और सर्वज्ञभाषित अनेक भेदप्रभेदयुक्त वे समस्त सभ्योंके सामने वास्तविक तत्वोंका उपदेश करने लगे। तत्वोंका व्याख्यान करतेर जब सब लोगोंकी दृष्टि तत्वोंकी ओर झुक गई तो वे अवसर पाकर अपनी पूर्व भवावलीके स्मरणसे चित्तमें अतिशय खिन्न हो अपने पितासे कहने लगे—

पूज्य पिता! इस संसारसे अनेक पुरुष चले गये, युगके आदिमें ऋषभ आदि तीर्थंकर भरत आदि चक्रवर्ती भी कूच कर गये। कृपानाथ! यह संसार एक प्रकारका विशाल समुद्र है, क्योंकि समुद्रमें जैसे मछलियां रहती हैं संसाररूपी समुद्रमें भी जन्मरूपी मछलियां हैं। समुद्रमें जैसे भमर पड़ते हैं संसाररूपी समुद्रमें भी दुःखरूपी भमर हैं। समुद्रमें जैसी कल्लोलें होती हैं, संसार-समुद्रमें भी जरारूपी तीव्र कल्लोलें मौजूद हैं। समुद्रमें जिस प्रकार कीचड़ होती है, संसाररूपी

निस्सार हैं। गृहादिकमें संलग्न जो बुद्धि है सो मिथ्याबुद्धि है और असार है।

कृपानाथ! यह राज्य भी विनाशिक है मैं कदापि इस राज्यको स्वीकार न करूंगा, किन्तु समस्त पापोंसे रहित मैं निश्चल तप धारण करूंगा। मैंने अनेकबार इस राज्यका भोग किया है। मेरे सामने यह राज्य अपूर्व नहीं हो सकता। अक्षयसुख मोक्षसुख ही मेरे लिये अपूर्व है।

पूज्यवर! मैंने आपकी आज्ञाका भी अच्छी तरह पालन किया है। अब मैं भविष्यत् कालमें आपकी आज्ञा पालन न कर सकूंगा, इसलिये आप कृपाकर मुझे तपके लिये आज्ञा प्रदान करें।

पुत्रको तपके लिये उद्यमी देख महाराज श्रेणिकके मुखसे अविरल अश्रुधारा बहने लगी तथापि अभयकुमार उन्हें अच्छी तरह समझाकर अपनी माताको भी संबोधकर और अतिशय मनोहरांगी अपनी प्रिय स्त्रियोंको भी समझाकर शीघ्र ही घरसे निकले और राजा आदिके रोके जानेपर भी राजकुमार आदिके साथ हाथीपर सवार हो विपुलाचलकी ओर चलदिये।

उस समय विपुलाचल पर महावीर भगवानका समवशरण विराजमान था इसलिये ज्योंही अभयकुमार विपुलाचलके पास पहुंचे उन्होंने राजचिह्न छोड़ दिये, गजसे उतर शीघ्र ही समवशरणमें प्रवेश किया। समवशरणमें विराजमान महावीर भगवानको देख तीन प्रदक्षिणा दीं, पूजन नमस्कार और स्तुति की।

गौतम गणधरको भी प्रणाम किया और दीक्षार्थ प्रार्थना की। वस्त्राभूषण आदिका त्यागकर बहुतसे कुटुम्बियोंके साथ शीघ्र ही परम तप धारण किया। तेरह प्रकारके चारित्र पालने लगे एवं ध्यानैकतान मुक्तिके अभिलाषी वे परमपदकी आराधना करने लगे।

जो अभयकुमार आदि महापुरुष अनेक कोमल२ वस्त्रोंसे शोभित हंसोंके समान स्वच्छ रुईसे बने मनोहर पलंगोंपर सोते थे वे ही अब कंकरीली जमीन पर सोने लगे। जो शीतकालमें मनोहर२ महलोंमें कामविह्वला रमणियोंके साथ सानंद शयन करनेवाले थे वे चौतर्फा अतिशय शीतल पवनसे व्याप्त नदीके तीरोंपर सोते हैं।

ग्रीष्मकालमें जो शरीरपर हरिचंदनका लेप करा कर फुवारा सहित महलोंके रहनेवाले थे, वे ही अब अतिशय तीक्ष्ण सूर्यके आतापको झेलते हुए पर्वतोंकी शिखरोंपर निवास करते हैं।

जो उत्तम पुरुष वर्षाकालमें, जहां किसी प्रकारके जलका संचार नहीं ऐसे उत्तमोत्तम घरोंमें रहते थे उन्हें अब जलसे व्याप्त वृक्षोंके नीचे रहना पड़ता है। पतले किंतु उत्तम चीनी वस्त्रोंसे सदा जिनके शरीर ढके रहते थे वे ही अब चोहट्टोंमें वस्त्ररहित हो सानद रहते हैं।

जो चित्रविचित्र रत्नोंसे जड़ित सुवर्णपात्रोंमें भोजन करते थे उन्हें अब सछिद्र पाणिपात्रोंमें भोजन करना पड़ता है। जो भांति२ के पके अन्न और खीर आदि पदार्थोंका भोजन करते थे उन्हें अब पारणामें तेलयुक्त कोदों कंगु आदि पदार्थ खाने पड़ते हैं। जो हाथी घोड़े आदि सवारियों पर सवार हो जहांतहां घूमते थे वे ही अब कंटकाकीर्ण जमीनपर चलते हैं। जो सात२ ड्योढ़ीयुक्त मणिजड़ित महलोंमें सोते थे वे ही अब अनेक सर्पोंसे व्याप्त पहाड़ोंकी गुफामें सोते हैं। राज्यावस्थामें जिनकी प्रशंसा पराक्रमी और महामानी बड़े२ राजा करते थे उनकी प्रशंसा अब चारित्रसे पवित्र निरभिमानी बड़े२ मुनिराज करते हैं।

राज्य अवस्थामें जो रतिजन्य सुखका आस्वादन करते थे वे ही अब विषयातीत नित्य ध्यानजन्य सुखका आस्वाद करते हैं।

जो राजमन्दिरमें कामिनियोंके मुखसे उत्तमोत्तम गायन सुनते थे उन्हें अब श्मसानभूमिमें मृग और शृगालोंके भयंकर शब्द सुनने पड़ते हैं ।

राजघरमें जो पुत्र नातियोंके साथ खेल खेलते थे अब वे निर्भय किंतु विश्वस्त मृगोंके साथ खेल खेलते रहते हैं ।

इसप्रकार चिरकाल तक घोरतप तपकर परिग्रह जीतकर और घातियाकर्मोंका विध्वंसकर शुक्लध्यानके प्रभावसे मुनिवर अभयकुमारने केवलज्ञान प्राप्त कर लिया, एवं केवलज्ञानकी कृपासे संसारके समस्त पदार्थ जानकर भूमण्डलपर बहुत कालतक विहार कर अचिंत्य अव्याबाध मोक्षसुख पाया । इनसे अन्य और जितने योगी थे वे भी अपनेर कर्मविपाकके अनुसार स्वर्ग आदि उत्तमोत्तम गतियोंमे गये ।

❀ ❀ ❀

तीन लोकमें यशस्वी अतिशय सन्तुष्ट जैनधर्मके आराधक नीतिपूर्वक प्रजाके पालक महाराज आनन्दपूर्वक राजगृहीमें रहने लगे । उनका पुत्र वारिषेण अतिशय बुद्धिमान, मनोहर, जैन धर्ममें रति करनेवाला एवं व्रतरूपी भूषणसे भूषित था । कदाचित् राजकुमार वारिषेणने चतुर्दशीका उपवास किया ।

इधर यह तो रात्रिमें किसी वनमें जाकर कायोत्सर्ग धारण कर ध्यान करने लगा और उधर किसी वेश्याने सेठ श्रीकीर्तिकी सेठानीके गलेमें पड़ा अतिशय देदीप्यमान सुन्दर हार देखा और हार देखते ही वह विचारने लगी—

इस दिव्य हारके विना संसारमें मेरा जीवन विफल है तथा ऐसा विचार शीघ्र ही उदास हो शयनागारमें खाटपर गिर पड़ी । एक विद्युत नामका चोर जो उसका आशिक था, रात्रिमें वेश्याके पास आया । उसने कईवार वेश्यासे वचनालाप करना

चाहा। वेश्याने जवाब तक न दिया किन्तु जब वह चोर विशेष अनुनय करने लगा तो वह कहने लगी—

प्रिय वल्लभ! मैंने सेठ श्रीकीर्तिकी सेठानीके गलेमें हार देखा है। मैं उसे चाहती हूँ, यदि मुझे हार न मिला तो मेरा जीवन निष्फल है और तुम्हारे साथ दोस्ती भी किसी कामकी नहीं। वेश्याकी ऐसी रूखी बात सुन चोर शीघ्र ही चल दिया। तथा सेठ श्रीकीर्तिके घर जाकर और हार चुराकर अपनी चतुराईसे बाहर निकल आया।

हार बड़ा चमकदार था इसलिये ज्योंही चोर सड़क पर आया और ज्योंही कोतवालने हारका प्रकाश देखा तो लेजाने-वालेको चोर समझ शीघ्र ही उसके पीछे धावा किया। चोरको और कोई रास्ता न सूझा, वह शीघ्र ही भागता २ श्मशान-भूमिमें घुस गया।

जब वह श्मशानभूमिमें घुसा तो उसे आगेको वहां कोई रास्ता न दिखा इसलिये उसने शीघ्र ही कुमार वारिषेणके गलेमें हार डाल दिया और आप एक ओर छिप गया। हारकी चमकसे कोतवाल भागता २ कुमारके पास आया। कुमारको हार पहिने देख शीघ्र ही दौड़ता २ राजाके पास पहुँचा और कहने लगा—

राजन्! यदि आपका पुत्र ही चोरी करता है तो चोरी करनेसे दूसरोंको कैसे रोका जा सकता है? राजकुमारका चोरी करना उसी प्रकार है जैसे बाड़द्वारा खेतका खाना। कोतवालकी बात सुन इधर महाराजने तो श्मशानभूमिकी ओर गमन किया और उधर कुमार वारिषेणके व्रतके प्रभावसे हार फूलकी माला बन गया।

ज्योंही महाराजने यह ऐसी अतिशय सुना तो वे कोतवालकी निंदा करने लगे और कुमारके पास क्षमा कराना चाहा।

विद्युत्चोर भी यह सब दृश्य देख रहा था उससे ये बातें न देखी गईं। वह शीघ्र ही महाराजके सन्मुख आया तथा महाराजसे अभयदानकी प्रार्थना कर और अपना स्वरूप प्रकट कर जो कुछ सच्चा हाल था सारा कह सुनाया। जब महाराजने चोरके मुखसे सब समाचार सुन लिये तो उन्होंने कुमार वारिषेणसे घर चलनेके लिये कहा किन्तु कुमारने कहा—

पूज्यपिता ! मैं पाणिपात्रमें भोजन करूंगा-दिगम्बर व्रत धारण करूंगा। यह व्रत मैंने ले लिया है, अब मैं घर जा नहीं सकता। महाराज आदिने कुमारको दीक्षासे बहुत रोका किन्तु उन्होंने एक न मानी।

वे सीधे सूर्यदेव मुनिराजके पास चले गये और केशलुंचन कर दीक्षा धारण कर ली, एवं अष्ट अंग सहित सम्यग्दर्शनके धारक बड़े२ देवों द्वारा पूजित वारिषेण मुनि तेरह प्रकारके चारित्रका पालन करने लगे।

वारिषेण मुनिराजके व्रत रहित पुष्पडाल आदि अनेक शिष्य थे, उन्हें उपदेश, शुभाचार और चातुर्यसे सन्मार्गमें प्रतिष्ठित किया, बहुत काल पर्यन्त भूमण्डल पर विहार किया, अनेक जीवोंको सम्बोधा, आयुके अन्तमें रत्नत्रययुक्त हो सन्यास धारण किया। भलेप्रकार आराधना आराधीं एवं समाधिपूर्वक अपने प्राण त्यागकर मुनि वारिषेणका जीव अनेक देवियोंसे व्याप्त महान ऋद्धिका धारक देव हो गया।

किसी समय धर्मसेवनार्थ चिन्ता विनाशार्थ और सुखपूर्वक स्थितिके लिये पूर्वजन्मके मोहसे महाराजने समस्त भूपोंको इकट्ठा किया और उनकी सम्मतिपूर्वक बडे समारोहके साथ अपना विशाल राज्य युवराज कुणिकको दे दिया।

अब पूर्व पुण्यके उदयसे युवराज कुणिक महाराज कहे जाने

लगे। वे नीतिपूर्वक प्रजाका पालन करने लगे और समस्त पृथ्वी उन्होंने चौरादि भयसे विवर्जित कर दी।

कदाचित् महाराज कुणिक सानन्द राज्य कर रहे थे कि अकस्मात् उन्हें पूर्वभवके वैरका स्मरण हो आया। महाराज श्रेणिकको अपना वैरी समझ पापी हिंसक महा अभिमानी दुष्ट कुणिकने मुनि कण्ठमें निक्षिप्त सर्पजन्य पापके उदयसे शीघ्र ही उन्हें काठके पिंजरेमें बन्द कर दिया।

महाराज श्रेणिकके साथ कुणिकका ऐसा वर्ताव देख रानी चेलनाने उसे बहुत रोका, किन्तु उस दुष्टने एक न मानी, उल्टा वह मूर्ख गाली और मर्मभेदी दुर्वाक्य कहने लगा। खानेके लिये महाराजको वह रूखसूखा कोदोंका अन्न देने लगा और प्रतिदिन भोजन देते समय अनेक कुवचन भी कहने लगा।

महाराज श्रेणिक चुपचाप कीलोंयुक्त पींजरेमें पड़े रहते और कर्मके वास्तविक स्वरूपको जानते हुए पापके फलपर विचार करते रहते थे।

किसी समय दुष्टात्मा पापी राजा कुणिक अपने लोकपाल नामक पुत्रके साथ सानंद भोजन कर रहा था। बालकने राजाके भोजनपात्रमें पेशाब कर दिया। राजाने बालकके पेशाबकी ओर कुछ भी ध्यान न दिया, वह पुत्रके मोहसे सानंद भोजन करने लगा। उसी समय उसने अपनी मातासे कहा—

माता! मेरे समान पुत्रका मोही इस पृथ्वीतलमें कोई नहीं, यदि है तो तू कह! माताने जवाब दिया—

राजन्! तेरा पुत्रमें क्या अधिक मोह है? सबका मोह तीनों लोकमें बालकों पर ऐसा ही होता है। देख!!! यद्यपि तेरे पिताके अभयकुमार आदि अनेक उत्तमोत्तम पुत्र थे तो भी

बाल्य अवस्थामें पिताका प्यारा और मान्य जैसा तू था वैसा कोई नहीं था। प्यारे पुत्र! तेरे पिताका तुझसे इतना अधिक स्नेह था, सुन, मैं तुझे सुनाती हूं—

एक समय तेरी अगुलीमें बड़ा भारी घाव हो गया था एवं उसमें पीव बढ़ गया था, बहुत दुर्गंध आती थी जिससे तुझे बहुत पीड़ा थी। घावके अच्छे करनेके लिये बहुतसी दवाइयां कर छोड़ीं तो भी तेरी वेदना शांत न हुई। उस समय तेरे मोहसे तेरे पिताने तेरे मुखमें अंगुली देदी और तेरी सब पीड़ा दूर कर दी। माता चेलनाकी यह बात सुन दुष्ट कुणिकने जवाब दिया—

माता! यदि पिताका मुझमें मोह अधिक था तो जिससमय मैं पैदा हुआ था उस समय पिताने मुझे निर्जन वनमें क्यों फिकवा दिया था? माताने जवाब दिया—

प्रिय पुत्र! तू निश्चय समझ, तेरे पिताने तुझे वनमें नहीं फिकवाया था किंतु तेरी भृकुटी भयंकर देख मैंने फिकवाया था, तेरा पिता तो तुझे वनसे ले आया व राजा बनानेके लिये सानद तेरा पालनपोषण किया था।

यदि तेरा पिता ऐसा काम न करता तो तुझे राज्य क्यों देता? पुत्र! तेरे पिताका तुझमें बड़ा स्नेह, बड़ा मोह और बड़ी भारी प्रीति थी। तुझसे वे अनेक आशा भी रखते थे इसमें जरा भी झूठ नहीं।

जैसी वेदना इस समय तू अपने पिताको दे रहा है 'याद रख' तेरा पुत्र भी तुझे वैसी ही वेदना देगा। खेतमें जैसा बीज बोया जाता है वैसा ही फल काटा जाता है, उसी प्रकार जैसा काम किया जाता है फल भी उसीके अनुसार भोगना पड़ता है।

राजन्! जिसने तुझे राज्य दिया, जन्म दिया और विशेष-

तथा पढ़ा लिखाकर तैयार किया, क्या उस पूज्यपादके साथ तेरा यह क्रूर बर्ताव प्रशंसनीय हो सकता है ? अरे ! जो मनुष्य उत्तम हैं वे अपने पिताको पूज्य समझ भक्तिपूर्वक पूजा करते हैं। पितासे भी अधिक राज्य देनेवालेको और उससे भी अधिक विद्या प्रदान करनेवालेको पूजते हैं। तू यह निकृष्ट काम क्या कर रहा है ?

जो उपकारका आदर करनेवाले हैं, सज्जन लोग जब उसका भी उपकार करते हैं तो उपकार करनेवालेका तो वे अवश्य ही उपकार करते हैं। जो मनुष्यपर उपकारको नहीं मानते हैं वे नराधम कहलाते हैं और वे नियमसे नर्क जाते हैं।

राजन् ! जो किये उपकारका लोप करनेवाले हैं वे संसारमें कृतघ्न कहलाते हैं, किन्तु जो कृत उपकारको माननेवाले हैं वे कृतज्ञ कहे जाते हैं और सब लोग उनकी मुक्तकंठसे प्रशंसा करते हैं।

प्यारे पुत्र ! पिता आदिका बन्धन पुत्रके लिये सर्वथा अनुचित है, महापापका करनेवाला है, इसलिये तू अभी जा और अपने पिताको बन्धनरहित कर। माता द्वारा इस प्रकार सम्बोध पा राजा कुणिक मनमें अति खिन्न हुए। अपने दुष्कर्मकी बार-बार निंदा कर वे ऐसा विचारने लगे—

हाय ! मुझ पापात्माने बड़ा निंद्य काम कर दिया। हाय ! अब मैं इस महापापसे कैसे छुटकारा पाऊंगा ? अनेक हित करनेवाले पूज्य पिताको मैं अभी जाकर छुड़ाता हूं। इस प्रकार क्षण एक अपने मनमें विचार कर राजा कुणिक महाराजको बन्धनमुक्त करने चल दिये। ज्यों ही राजा कुणिक कठेरेके पास पहुँचे और ज्योंही क्रूर-मुख राजा कुणिकको महाराजने देखा कि देखते ही उनके मनमें यह विचार उठ खड़ा—

यह दुष्ट अभी पीड़ा देकर गया है अब यह क्या करना चाहता है जिसमे मेरी ओर आ रहा है? पहिले मुझे बहुत संताप दे चुका है अब भी यह मुझे अधिक संताप देगा। हाय! इस निर्दयी द्वारा दिया हुआ दुःख अब मैं सहन नहीं कर सकता।

बस इस प्रकार अपने मनमें अतिशय दुःखी हो शीघ्र ही तलवारकी धारपर शिर मारा। तत्काल उनके प्राणपखेरू धर उड़ें और प्रथम नर्कमें पहुँच गये। पिताको असिधारापर प्राणरहित देख राजा कुणिकके होश उड़ गये। उस समय उन्हें और कुछ न सूझा। वे चेलना और अन्तःपुरके साथ बेहोश हो करुणाजनक इस प्रकार रुदन करने लगे—

हा नाथ! हा कृपाधीश! हा स्वामिन्! हा महामते! हा विना कारण समस्त जगतके बन्धु! हा प्रजाधोश! हा शुभ! हा तात! हा गुणमंदिर! हा मित्र! हा शुभाकार! हा ज्ञानिन्! यह तुमने विना समझे क्या कर डाला? आप ज्ञानी थे। आपको ऐसा करना सर्वथा अनुचित था।

महाराजकी मृत्युसे नन्दश्री और रानी चेलनाको परम दुःख हुआ। उनकी आंखोंमें अविरल अश्रुधारा बह निकली। उन्होंने शीघ्र ही अपने केश उखाड़ दिये, छाती कूटने लगीं, हार तोड़ दिये। हाथके कंकण तोड़कर फेंक दिये, हाहाकार करती जमीनपर गिर गई और मूर्छित हो गई। शीतोपचारसे बड़े कष्टसे रानीको होशमें लाया गया। ज्योंही रानी होशमें आई तो उसे और भी अधिक दुःख हुआ। वह पति विना चारों ओर अपना पराभव देख इस प्रकार विलाप करने लगी—

हा प्राणवल्लभ! हा नाथ! हा प्रिय! हा कांत! हा दयाधीश! हा देव! हा शुभाकर! हा मनुष्येश्वर! मुझ पापिनीको छोड़

आप कहां चले गये ? हाय ! मुझे अशरण निराधार आपने कैसे छोड़ दी ?

रनवासके इस प्रकार रोनेपर समस्त पुरवासी जन और स्त्रियां भी असीम रुदन करने लगीं। पश्चात् राजा कुणिकने महाराजका संस्कार किया। रानी चेलना द्वारा रोके जानेपर भी मिथ्यादृष्टि राजा कुणिकने "महाराज सीधे मोक्ष जावें" इस अभिलाषासे सर्वथा व्रत रहित ब्राह्मणोंके लिये गौ, हाथी, घोड़ा, घर, जमीन, धन आदिका दान दिया तथा और भी अनेक विपरीत क्रियाएँ कीं !

कदाचित् रानी चेलना सानन्द बैठी थी कि अकस्मात् उसके चित्तमें ये विचार उठ खड़े कि यह संसार सर्वथा असार है तथा संसारसे सर्वथा भयभीत हो वह इसप्रकार सोचने लगी—

संसारमें न तो पिताका स्नेह पुत्रमें है और न पुत्रका स्नेह पितामें है। समस्त जीव स्वेच्छाचारी हैं और जबतक स्वार्थ रहता है तभीतक आपसमें स्नेह करते हैं। संसारमें सम्पत्ति यौवन और ऐंद्रियक सुख भी अस्थिर हैं। भोग ज्यों २ भोगे जाते हैं उनसे तृप्ति तो बिलकुल नहीं होती किंतु कोष्ठसे अग्नि-ज्वाला जैसी बढ़ती चली आती है उसी प्रकार भोग भोगनेसे और भी अभिलाषा बढ़ती ही चली जाती है।

कदाचित् तैलसे अग्निकी और जलसे समुद्रकी तृप्ति हो जाय किन्तु इन्द्रियभोग भोगनेसे मनुष्यकी कदापि तृप्ति नहीं हो सकती। अनेक बड़े२ पुरुष पहिले धन परिवारका त्याग कर गये, अब जा रहे हैं और जायेंगे। मैं केवल पुत्रके मोहसे मोहित हो घरमें कैसे रहूं ? विषयभोगसे जीव निरन्तर पापका उपार्जन करते रहते हैं और उस पापकी कृपासे उन्हें नियमसे नर्क जाना पड़ता है।

हजार कंटकोंके धारक प्राणिके स्पर्शसे जैसा दुःख होता है उससे भी अधिक जीवोंको नरकमें दुःख भोगना पड़ता है। संसारमें जो स्त्रियां दूसरे मनुष्योंकी अभिलाषा करती हैं नियमसे वे पूर्वपापोदयसे लोहेकी तप्त पुतलियोंसे चिपकायी जाती हैं। जो मनुष्य परस्त्रियोंके साथ विषय भोगते हैं उन्हें नरकमें स्त्रीके आकारकी तप्त पुतलियोंके साथ आलिंगन कराया जाता है।

जो मूर्ख यहां शराब गटकते हैं, हाहाकार करते हुए भी उन मनुष्यको जबरन लोह पिगलाकर पिलाया जाता है। जो यहां बिना छने जलमें स्नान करते हैं नारकी उन्हें तप्त तेलकी भरी कढ़ाइमें जबरन स्नान कराते हैं। जो पापी मोहवश यहां परस्त्रियोंके स्तनमर्दन करते हैं नारकी उन्हें मर्मघाती अनेक शस्त्रोंसे पीड़ा देते हैं। नरकोंमें अनेक नारकी आपसमें लड़ते हैं अनेक पैने हथियारोंसे और नखोंसे छिन्नभिन्न होते हैं। अनेक अग्निमें डालकर मारे जाते हैं और आपसमें अनेक पीड़ा सहते हैं।

नरकमें रातदिन भवनवासी देव भिड़ाते हैं इसलिये एक नारकी दूसरे नारकीको आपसमें बुरी तरह मारता है, मुष्टियोंसे पीस देता है, इस रीतिसे नारकी सदा पूर्व पापोदयसे नरकोंमें दुःख भोगते रहते हैं—नरकमें जीवन पर्यंत क्षणभर भी सुख नहीं मिलता, किंतु तीव्र दुःखका सामना करना पड़ता है। तिर्यंचोंपर भी हमेशाह वात ठंडो घामका दुःख रहता है। बिचारे तिर्यंचोंपर अधिक बोझ लादा जाता है, उन्हें भूख प्याससे वंचित रक्खा जाता है जिसमें तिर्यंचोंको असह्य वेदना भोगनी पड़ती है।

आपसमें भी तिर्यंच एक दूसरेको दुःख दिया करते हैं। मनुष्यों द्वारा भी वे अनेक दुःख भोगते हैं एवं अब एक

बलवान तिर्यंच दूसरे निर्बल तिर्यंचको पकड़कर खा जाता है तब भी उन्हें अनेक दुःख भोगने पड़ते हैं। मनुष्य भवमें भी जब मनुष्योंके माता पिता पुत्र मित्र मर जाते हैं उस समय उन्हें अधिक दुःख होता है।

धनाभाव, दरिद्रता, सेवा आदिसे भी अनेक दुःख भोगने पड़ते हैं। देवगतिमें भी अनेक प्रकारके मानसिक दुःख होते हैं। मरणकालमें भी माला सूख जानेसे और देवांगनाके वियोगसे भी देवोंको अनेक दुःख भोगने पड़ते हैं। दुष्ट देवों द्वारा भी अनेक दुःख सहने पड़ते हैं।

इस प्रकार सर्वथा दुःखपद चतुर्गतिरूप संसारमें चारों ओर दुःख ही दुःख भरा हुआ है, रंचमात्र भी सुख नहीं। इस रीतिसे चिरकालपर्यंत विचार कर रानी चेलना भवभोगोंसे सर्वथा विरक्त हो गई और शीघ्र ही भगवान महावीरके समवशरणकी ओर चल दी।

समवशरणमें जाकर रानीने तीन प्रदक्षिणा दीं, भक्तिपूर्वक पूजा और स्तुति की और यतिधर्मका व्याख्यान सुना, पश्चात् चन्दना नामकी आर्यिकाके पास गई। अपनी सासुको भक्तिपूर्वक नमस्कार कर अनेक रानियोंके साथ शीघ्र ही संयम धारण कर लिया व चिरकाल तक तप किया।

आयुके अन्तमें सन्यास लेकर और ध्यान बलसे प्राण परित्याग कर निर्मल सम्यग्दर्शनकी कृपासे स्त्रीवेदका त्याग किया और महान् ऋद्धिका धारक अनेक देवोंसे पूजित देव होगया।

स्वर्गके अनेक सुख भोग भविष्यत् कालमें चेलनाका जीव नियमसे मोक्ष जायगा। रानी चेलनाके सिवाय और जितनी रानियां थीं वे भी तप कर और प्राणोंका परित्याग कर यथा-योग्य स्थान गईं!

इसप्रकार चेलना आदि रानियां समस्त पापोंका नाश कर और पुंवेद पाकर स्वर्ग गईं और वहां देव हो अनेक मनोहर देवांगनाओंके साथ क्रीड़ा कर भोग भोगने लगीं।

महाराज श्रेणिक भी सप्तम नरककी प्रबल आयुका नाश कर रत्नप्रभा नामक प्रथम नरकमें गये तथा वहां पापफलका विचार करते हुए और अपनी निंदा करते हुए रहने लगे। अब वे चौरासी हजार वर्ष नरकदुःख भोगकर और वहांकी आयुको छेदकर भविष्यत् कालमें प्रथम तीर्थंकर होंगे और कर्म नाश कर सिद्धपद प्राप्त करेंगे।

इसप्रकार तीर्थंकर पद्मनाभके पूर्वभवके जीव महाराज श्रेणिकके चरित्रमें श्रेणिक, चेलना आदि गति वर्णन करनेवाला चौदहवां स्वर्ग समाप्त हुआ।

पन्द्रहवां सर्ग

भविष्यकालके तीर्थंकर पद्मनाभका पंचकल्याण वर्णन

समस्त पदार्थोंके प्रकाश करनेमें सूर्यके समान, भावि तीर्थंकर श्रीपद्मनाभ भगवानको नमस्कार कर स्वकल्याण सिद्ध्यर्थ उन्हीं भगवानके आचार्यों द्वारा प्रतिपादित पांच कल्याणोंका वर्णन करता हूं।

उत्सर्पिणीकालके एक हजार वर्ष बाद अतिशय चतुर उत्तम ज्ञानके धारक चौदह कुलकर 'मनु' होंगे और वे अपने बुद्धिबलसे प्रजाको शुभ कार्यमें लगावेंगे। उन सबमें शुभकर्ता, अनेक देवोंसे पूजित, अनेक गुणोंके आकर, अपनी किरणोंसे समस्त अन्धकारको नाश करनेवाले गम्भीर, अनेक आभरणोंसे शोभित और अतिशय प्रसिद्ध तीर्थंकर पद्मनाभके पिता अन्तिम कुलकर महापद्म होंगे।

कुलकर महापद्म मुखसे चन्द्रमाको, नेत्रोंसे ताराओंको, वक्षःस्थलसे शिलाको, दांतोंसे कुन्दपुष्पको और बाहुयुग्मसे शेषनागको जीतेंगे। अनेक राजाओंसे वंदित राजा महापद्ममें उत्तमोत्तम गुण, रूप, समस्त कलायें, शील, यश आदि होंगे।

महापद्म अपने उत्तम बुद्धिबलसे जीवेंगे। मनोहर रूपसे कामदेवकी तुलना करेंगे, निरन्तर विभूतिके प्रभावसे देवतुल्य और अपने शरीरकी कांतिसे सूर्यके समान होंगे। महापद्मके रहनेके लिये इन्द्रकी आज्ञासे कुबेर अनेक रत्नोंसे जड़ित, मनोहर भूमियोंसे शोभित, अयोध्यानगरीका निर्माण करेगा।

अयोध्याका परकोटा मनोहर किरणोंसे व्याप्त मुक्ताफल और भी अनेक रत्नोंसे निर्माण किया स्वर्गकी समताको धारण करेगा और घर स्वर्गघरोंके साथ स्पर्द्धा करेंगे। अयोध्याके घर

विमानोंको जीतेंगे। मनुष्य देवोंको, स्त्रियां देवांगनाओंको, राजा इन्द्रोंको और वृक्ष कल्पवृक्षोंको नीचा दिखायंगे।

अयोध्यामें रहनेवाली कामिनियोंके मुखसे चन्द्रमण्डल जीता जायगा। नखोंसे ताराभाष, मनोहर नेत्रोंसे कमल और गमनसे हाथी पराजित होंगे। अयोध्यापुरीके महलों पर लगीं ध्वजाएं चन्द्र मण्डलका स्पर्श करेंगी। अयोध्यापुरीका विशेष कहांतक वर्णन किया जाय? जिनेन्द्रके रहनेके लिये कुवेर इन्द्रकी आज्ञासे उसे एक ही बनावेगा, और वहां अनेक राजाओंसे पूजित चौतर्फा अपनी कीर्ति प्रसार करनेवाले अतिशय मनोहरपुण्यवान, चतुर, सुन्दर और सात हाथ शरीरके धारक कुलकर महापद्म रहेंगे। महापद्मकी प्रिय भार्या सुन्दरी होगी।

सुन्दरी अतिशय शरीरकी धारक, पद्मके समान सुन्दर, रतिके समान होगी। उसके केश अतिशय देदीप्यमान और उत्तम होंगे। मुख कमलकी सुगन्धिसे उसके मुखपर भौंरे गिरेंगे और उसके शिरपर रत्नजड़ित देदीप्यमान चूड़ामणि शोभित होगा। अतिशय तिलकसे युक्त उसका भाल अतिशय शोभाको धारण करेगा और वह ऐसा मालूम पड़ेगा मानों त्रिलोककी स्त्रियोंके विजयके लिये विधाताने एक नवीन यन्त्र रचा हो।

कानोंतक विस्तृत विशाल और रक्त उसके नेत्र होंगे और वे पद्मदलकी शोभा धारण करेंगे। सुन्दरीको भ्रकुटियोंके मध्यमें ओंकार अतिशय शोभाको धारण करेगा।

विधाता उसे समस्त जगतको वश करनेके लिये निर्माण करेगा ऐसा मालूम पड़ता है। दांतरूपी अनुपम केशरका धारक, नासिका रूपी बिशसे मनोहर व ओष्ठरूपी पल्लवोंसे व्याप्त उसका मुखकमल अतिशय शोभा धारण करेगा। मनोहर कम्बुके समान सुन्दर, तीन रेखाकी धारक, मुखरूपी घरके लिए खम्भेके समान कोकिला ध्वनियुक्त उसकी ग्रीवा अतिशय शोभित होगी।

मुक्ताफलसे शोभित भांति-भांतिके रत्नोंसे देदीप्यमान

सुन्दरीके कण्ठस्थ हार अतिशय शोभा धारण करेगा और वह ऐसा जान पड़ेगा मानों विधाताने स्तनकलशोंकी रक्षार्थ मनोहर सर्पका ही निर्माण किया हो। सुवर्णमय हाररूपी सर्पोंसे शोभित चूचुकरूपी वस्त्रसे आच्छादित उसके दोनों स्तन मनोहर घड़ेके समान जान पड़ेंगे। अंगुलीरूपी पत्तोंसे व्याप्त बाहुरूपी दन्डोंका धारक, कंकणरूपी उन्नत केसरसे शोभित दोनों करकमल अतिशय शोभा धारण करेंगे।

मनोहरांगी सुन्दरीका कामदेवरूपी हाथोंसे युक्त मनोहर बिखरे हुए केशरूपी पत्रका धारक कामीजनोंकी क्रीड़ाका इष्टस्थल नाभिरूपी तालाब संसारमें एक ही होगा। सुन्दरीका उन्नत स्तनोंके भारसे अतिशय कृश कटिभाग अति शोभित होगा, सो ठीक ही है, दो आदमियोंके विवादमें मध्यस्थ मारे भयके कृश हो ही जाता है। सुन्दरीके दोनों जानु, कदली स्तम्भके समान शोभा धारण करेंगे।

कामीजनोंको वश करनेके लिये वे कामदेवके दो बाण कहलाये जायेंगे, और अनेक शुभ लक्षणोंके धारक होंगे। मीन शंख आदि उत्तमोत्तम गुणोंसे उसके दोनों चरण अत्यन्त शोभित होंगे और नखरूपी रत्नोंसे युक्त उसकी अंगुली होंगी।

विधाता सुन्दरीका रूप तो अनेक उपायोंसे रचेगा और मुख चन्द्रमासे, नेत्र कमलपत्रोंसे, दांत मूगोंसे, ओठ पके बिम्बाफलोंसे, दोनों भुजा शाखाओंसे, वक्षःस्थल सुवर्णतटोंसे, दोनों स्तन सुवर्ण-कलशोंसे एवं दोनों चरणकमल पत्रोंसे बनावेगा। माता सुन्दरी सरस्वतीके समान शोभित होगी क्योंकि सरस्वती जैसी सालंकृति अलंकारयुक्त होती है, सुन्दरी भी अनेक आभरणोंसे युक्त होगी।

सरस्वती जैसी सर्वगुणा सर्वगुणयुक्त होती है उसी प्रकार सुन्दरी भी सर्व गुणोंसे युक्त होगी। सरस्वती जैसी विशेषा दोष रहित होती है सुन्दरी भी निर्दोष होगी। सरस्वती उत्तम

रीतिसे देदीप्यमान होती है उसी प्रकार सुन्दरी भी अतिशय सुडौल होगी। सरस्वती जैसी अनेक रसोंसे युक्त होती है सुन्दरी भी लावण्ययुक्त होगी। सरस्वती जैसी शुभ अर्थयुक्त होती है सुन्दरी भी अपने अवयवोंसे सुडौल होगी।

माता सुन्दरी गतिसे हथिनीको जीतेगी और नयनसे ्गी, वाणीसे कोकिल, रूपसे रति एवं मुखसे चन्द्रताको जीतेगी। भगवानके जन्मके छै मास पहिलेसे अन्ततक पन्द्रह मास पर्यन्त कुबेर इन्द्रकी आज्ञासे तीनोंकाल अमोघ रत्नोंकी वर्षा करेगा। माताकी सेवाके लिए इन्द्रकी आज्ञासे छप्पन कुमारियां आवेंगी और राजाको नमस्कार कर राजमहलमें प्रवेश करेंगी।

किसी समय कमलनेत्रा रानी सुन्दरी शयनागारमें अपनी मनोहर शैयापर शयन करेगी। अचानक ही वह रात्रिके पिछले प्रहरमे ये स्वप्न देखेगी।

१–जिससे मद चू रहा है ऐसा सफेद हाथी।
२–उन्नत स्कंधका धारक नाद करता हुआ बैल।
३–हाथीको विदारण करता बलवान केहरी।
४–दुग्धसे स्नान करती लक्ष्मी।
५–भ्रमरोंसे व्याप्त उत्तम दो मालाए।
६–संपूर्ण चन्द्रमा।
७–अंधकारका नाशक प्रतापी सूर्य।
८–जलमें किलोल करती दो मछलियां।
९–दो उत्तम घड़े।
१०–अनेक पद्मोंसे व्याप्त सरोवर।
११–रत्न मीन आदिसे युक्त विशाल समुद्र।
१२–मणिजड़ित सोनेका सिंहासन।
१३–अनेक देवांगनाओंसे शोभित सुरविमान।
१४–नागेंद्रका घर।

१५–रत्नोंका ढेर और

१६–निर्धूम वह्नि।

तथा उन्नत देहके धारक पवित्र किसी हाथीको अपने मुखमें प्रवेश करते भी वह सुन्दरी देखेगी।

प्रातःकालमें वीणा, डंका, शंख आदिके शब्दोंसे और मागधोंकी स्तुतिके साथ रानी पलगसे उठाई जायगी और शय्यासे उठते समय वह प्राची दिशासे जैसे सूर्य उदित होता है वैसी शोभा धारण करेगी। महारानी उठकर स्नान करेगी और शिरपर मुकुट, कंठमे ललित हार, हाथोंमें कंकण, भुजाओंमें बाजूबन्ध, कानोंमें कुन्डल, कमरपर करधनी एव पैरोंमें नूपूर पहनेगी तथा अपने स्वामी राजा महापद्मके पास जायेगी और सिंहासनपर उनके वामभागमे बैठकर चित्तमें हर्षित हो इस प्रकार कहेगी–स्वामिन्! रात्रिके पिछले प्रहर मैंने १६ स्वप्न देखे, कृपाकर उनका जैसा फल हो वैसा आप कहें। रानीके ऐसे वचन सुन राजा महापद्म इस प्रकार कहेंगे—

प्रिये! मृगाक्षि! जो तुमने मुझसे स्वप्नोंका फल पूछा है मै कहता हू, तुम ध्यानपूर्वक सुनो, जिससे तुम्हें सुख मिले। स्वप्नमे हाथीके देखनेका फल तो यह है कि तेरे पुत्ररत्न उत्पन्न होगा।

बैलका देखनेका फल यह है कि वह तो तीनों लोकमें अतिशय पराक्रमी होगा।

तूने जो सिंह देखा है उसका फल यह है कि तेरा पुत्र अनन्तवीर्यशाली होगा और दो मालाओंके देखनेसे धर्मतीर्थका प्रवर्तक होगा।

जो तूने लक्ष्मीको स्नान करते देखा है उसका फल यह है कि मेरुपर्वत पर तेरे पुत्रको लेजाकर देवगण क्षीरोदधिके जलसे स्नान करावेंगे। चन्द्रमाके देखनेसे तेरा पुत्र समस्तजगत्‌को

आनन्द प्रदान करनेवाला होगा। सूर्यके देखनेका फल यह है कि तेरा पुत्र अद्वितीय कांतिधारक होगा। कुम्भके देखनेसे अगाध द्रव्यका स्वामी होगा। मीनके देखनेसे तेरा पुत्र सुखका भण्डार होगा और उत्तमोत्तम लक्षणोका धारक होगा।

समुद्रके देखनेका फल यह है कि तेरा पुत्र ज्ञानका समुद्र होगा और जो तूने सिंहासन देखा है उससे तेरा पुत्र तीनों-लोकके राज्यका स्वामी होगा। देवविमानोंके देखनेसे बलवान और पुण्यवान होगा। तूने जो नागेंद्रका घर देखा है उसका फल यह है कि तेरा पुत्र जन्मते ही अवधिज्ञानका धारक होगा।

चित्रविचित्र रत्नराशि देखनेसे तेरा पुत्र अनेक गुणोंका धारक होगा। निर्धूम अग्निके देखनेका यह फल है कि तेरा पुत्र समस्त कर्म नाश कर सिद्धपद प्राप्त करेगा और तूने जो मुखमे हाथी प्रवेश करते देखा है उसका फल यह है कि तेरे शीघ्र पुत्र होगा।

राजाके मुखसे ज्योंही रानी स्वप्नफल सुन हर्षित होगी त्यों ही महान पुण्यका भण्डार महाराज श्रेणिकका जीव नरककी आयुका विध्वंसकर रानी सुन्दरीके शुभ उदरमे जन्म लेगा।

तीर्थंकर पद्मनामका आगमन अवधिज्ञानसे विचार देवगण अयोध्या आवेंगे। तीर्थंकरके मातापिताको भक्तिपूर्वक प्रणाम करेंगे। उन्हें उत्तमोत्तम वस्त्र पहनायगे। भगवानका गर्भकल्याण कर सीधे स्वर्ग चले जायगे और वहा समस्त पुण्योंके भण्डार समस्त कर्म नाश करनेवाले भगवान तीर्थंकरकी कथा सुन आनन्दसे रहेंगे।

छप्पन कुमारियां माताकी भोजनादिसे भक्तिपूर्वक सेवा करेंगी। आज्ञानुसार माताका स्नपन विलेपन आदि काम करेंगी। कोई कुमारी माताके पैर धोयेगी। कोई उनके सामसे उत्तमोत्तम पुष्प लाकर धरेंगी। कोई माताकी देहसे तेल मलेगी। कोई क्षीरोदधि जलसे माताको स्नान करायगी। कोई पूजा, मांक

लाडू, खीर, उर्द मूगके स्वाद दही और भी भांति२ के व्यंजन माताको देगी। कोई माताके भोजनार्थ उत्तमोत्तम भोजन बनानेके लिये उत्तमोत्तम पात्र देगी। कोई कोई माताकी प्रसन्नताके लिये हाव भाव पूर्वक नृत्य करेगी। कोई माताकी आज्ञानुसार बर्ताव करेगी और कोई कुमारिका अपने योग्य वर्तावसे माताके चित्तको अतिशय आनन्द देगी।

कोई कोई कुमारी कत्था चूना सुपारी रखकर सुन्दरीको पान देगी। कोई उसके गलेमे अतिशय सुगन्धित माला पहनायगी। कोई कोई माताके लिये मनोहर शय्याका निर्माण करेगी और कोई रत्नोंके दिया लगायगी और कोई२ कुमारी माताके मस्तक पर मुकुट, कानमें कुण्डल, हाथमें कंकण, गलेमें हार, नेत्रमें काजल, मुखमें पान, मस्तकपर तिलक, कमरमें करधनी, नाकमें मोती, कण्ठमें कंठी, पैरमें नूपुर, पांवकी अंगुलियोंमें बिछिये पहिनायेगी।

जब नौमा महिना पास आ जायगा तब कुमारियां माताके विनोदार्थ क्रियागुप्त, कर्तृगुप्त, कर्मगुप्त और प्रहेलिका कहकर माताको आनन्द बढ़ायेगी। कोई पूछेगी, बता माता—शरीरका ढकनेवाला कौन हैं? चन्द्रमण्डलमें क्या है? और पापकी कृपासे जीव कैसे होते है? माता उत्तर देगी—सभा विभा अभा:

कुमारियां फिर पूछेंगी, बता माता—जीवोंका अन्तमें क्या होता है? कामी लोग क्या करते हैं? ध्यानके बलसे योगी कैसा होता है? माता उत्तर देगी—१ विनाश, २ विलास, ३ विपाश।

कोई कुमारी क्रियागुप्तश्लोक कहकर मातासे पूछने लगेगी—

> शुभे[1] ध जन्मसन्तानसंभवं कल्विषं घन।
> प्राणिनां भ्रूणभावेन विज्ञानशत पारगे॥

१-हे अनेक विज्ञानोंकी आकर! शुभे! गर्भके प्रभावसे जीवोंके अनेक जन्मोंसे चले आये बज्रपापोंका नाश करो।

इसमें क्रिया कौन[1] है? कोई कहने लगी, बता माता—

आनन्दयन्तु लोकानां मनांसि वचनोत्करैः।
मातः कर्तृपदं गुप्तं वद भ्रूण विभावतः॥

इसमें कर्ता[2] कौन है? कोई कहने लगी, बता माता—

[3]सुधीमनसम्पन्ना लाभन्ते किंनराः क्वचित्।
स्वकर्मवशगा भीमे भवे विक्षिप्तमानसा॥

इसमें कर्म क्या है?

कोई[4] कुमारी कहने लगी-माता! तुम समस्या पूरण करनेमें बड़ी चतुर हो। इस समय तुम गर्भवती भी हो। "मुनिर्वेश्यायते सदा" इस समस्याकी पूर्ति करो। माताने जवाब दिया—

परार्थं लोकयत्येव गृहीत्वार्थं विमुञ्चति।
धत्ते नाभिविकारं च मुनिर्वेश्यायते सदा॥

दूसरी कुमारी बोली—माता! बली वेश्यायते सदा १ धारागा संगत नम.२। इन दो समस्याओंकी पूर्ति जल्द करो। माताने जवाब दिया—

१–इसमें 'दो अवखण्डने' धातुका लोटके मध्यम पुरुषका एक वचन 'द्य' क्रियापद है।

२–लोगोंके मन, वचनोंसे आनंद प्राप्त हों। हे माता! इसमें कर्तृपद गुप्त है, गर्भके प्रभावसे आप कहें। इस श्लोकमें मनांसि कर्ता है।

३–विशेष चितयुक्त, कर्मोंके वशीभूत और नीतिरहित मनुष्य क्या संसारमें कहीं उत्तम बुद्धिके धारक हो सकते हैं? कदापि नहीं, इसमें सुधी कर्ता है।

४–जो मुनि परधनकी ओर देखता रहता है धन लेकर धनीको छोड़ देता है और नाभिविकारयुक्त होता है वह मुनि वेश्याके समान होता है।

❀ स्वपुष्पं दर्शयत्येव कुलीना सुपयोधरा।
मधुपैश्चुंब्यमाना च वल्ली वेश्यायते सदा॥ १॥
– पानीये बालिशैर्नूनं धरास्थे प्रतिबिंबितं।
दृश्यते च शुभाकारं धरायां संगत नभः॥ २॥
× दूरस्थैर्दूरतो नूनं नरैर्विज्ञानपारगैः।
दृष्यते च शुभाकारं धरायां संगत नभः॥ ३॥

कोई कुमारी मातासे यह कहेगी, शुभ लक्षणोंकी आकर–मृगनयनी! प्रियवादिनि! नियमसे आपके गर्भमें किसी पुण्यवानने अवतार लिया है। माता यह झूठ न समझो, क्योंकि जो मनुष्य पक्षपाती और पूज्योंका वंचन करते हैं संसारमें वे अनेक कष्ट भोगते है।

इस प्रकार समस्त कुमारियां तीनोकाल हृदयसे माताकी सेवा करेंगी और तीर्थंकर, चक्रवर्ती, नारायण, प्रतिनारायण, वासुदेव आदि महापुरुषोंकी कथा कहकर माताका मन आनंदित करेंगी। प्रायः स्त्रियोंके गर्भके समय उदरवृद्धि, आलस्य, तन्द्रा वगैरह हुआ करते हैं, किंतु माताके गर्भके समय न तो

❀ –लता वेश्याके समान आचरण करती है क्योंकि वेश्या जैसी 'स्वपुष्पं दर्शयति" रजोधर्मयुक्त होती है, लता भी पुष्प (फूल) युक्त होती है। वेश्या जैसी कुलीनी नीच पुरुषोंमें लीन रहती है लता भी कुलीना पृथ्वीमें है। वेश्या जैसी सुपयोधरा उत्तम स्तनयुक्त होती है लता भी उत्तम दुधयुक्त है। वेश्या जैसी मधुपैश्चुंब्यमाना मद्यपजनोंसे चुंब्यमान होती है लता भी भौरोंसे चुंब्यमान है।

– मूर्खलोग भूमिस्थ पानीमें स्पष्टतया आकाशको देखते हैं, इसलिये आकाश भूमिपर कहा जाता है।

× विज्ञानके वेत्ता पुरुष दूरसे आकाशको पृथ्वीपर रक्खा हुआ समझते हैं।

उदरवृद्धि होगी, न आलस्य और तंद्रा होगी, मुखपर सफेदाई भी न होगी।

जब पूरे नौ मास हो जांयगे तब उत्तम योग, दिन, चन्द्रमा, लग्न और नक्षत्रमें माता उत्तम पुत्ररत्न जनेगी। उस समय पुत्रके शरीरकी कांतिसे दिशाएँ निर्मल हो जायेंगी। भवनवासियोंके घरोंमें शङ्ख शब्द होने लगेंगे। व्यंतरोंके घरोंमें भेरी बजैगी। ज्योतिषियोंके घर मेघध्वनिके समान सिंहासन रव और वैमानिक देवोंके यहां घण्टा शब्द होंगे। अपने अवधि-बलसे तीर्थंकरका जन्म जान देवगण अपने २ वाहनों पर सवार हो अयोध्या आंयगे।

प्रथम स्वर्गका इन्द्र भी अतिशय शोभनीय ऐरावत गजपर सवार हो अपनी इन्द्राणीके साथ अयोध्या आयगा। अयोध्या जाकर इन्द्राणी इन्द्रकी आज्ञासे शीघ्र ही प्रसूतिघरमें प्रवेश करेगी। वहां तीर्थंकरको अपनी माताके साथ सोता देख उनकी गूढ़-भावसे स्तुति करेगी।

माताको किसी प्रकारका कष्ट न हो इसलिये इन्द्राणी उस समय एक मायामयी पुत्रका निर्माण करेगी और उसे माताके पास सुलाकर और भगवानको हाथमें लेकर इन्द्रके हाथमें देगी। भगवानको देख इन्द्र अति प्रसन्न होगा और शीघ्र ही हाथीपर बिराजमान करेगा। उस समय ईशान इन्द्र भगवानपर छत्र लगायेगा।

सनत्कुमार और महेन्द्र दोनों इन्द्र चमर ढोरेंगे एवं सबके सब मिलकर आकाश मार्गसे मेरुपर्वतकी ओर उसी क्षण चल देंगे। मेरुपर्वतपर पहुँच इन्द्र भगवानको पांडुकशिलापर बिठायेगा। उस समय देवगण एक हजार आठ कलशोंसे भगवानका अभिषेक करेंगे।

इन्द्र उसी समय भगवानका नाम पद्मनाभ रक्खेगा, अनेक

प्रकार भगवानकी स्तुति करेगा और उस समय भगवानका रूप देख तृप्त न होता हुआ सहस्राक्ष होगा। बालक भगवानको इन्द्राणी अपनी गोदमें लेगी और अनेक भूषणोंसे भूषित करेगी। भूषणभूषित भगवान उस समय सूर्यके समान जान पडेंगे और दुंदुभि आनक शंख काहलोंके शब्दोंके साथ नृत्य करते हुए, तालके शब्दोंसे समस्त दिशा पूर्ण करते हुए, लयपूर्वक रागसहित सरस गान करते हुए और जयर शब्द करते हुए समस्त देव मेरुपर्वत पर भगवानके जन्मकालका उत्सव मनायगे। पश्चात् अनेक देवोंसे सेवित इन्द्र भगवानको गोदमें लेकर हाथीपर विराजमान करेगा।

अनेक शालि धान्य युक्त, बड़ीर गलियोंसे व्याप्त ध्वजायुक्त अनेक मकानोंसे शोभित अयोध्यापुरीमें आयगा। बड़ेर नेत्रोंसे शोभित भगवानको पिताके सुपुर्द करेगा। मेरुपर्वतपर जो काम होगा इन्द्र उस सबको भगवानके पिता महापद्मसे कहेगा। पिता माताके विनोदार्थ इन्द्र फिर नृत्य करेगा एवं भगवानको अनेक भूषण प्रदानकर और भगवानको भक्तिपूर्वक नमस्कार कर इन्द्र समस्त देवोंके साथ स्वर्ग चला जायगा।

इस प्रकार समस्त देवोंसे पूजित भातिरके आभरणयुक्त देहका धारक, अनेक गुणोंका आकर बालक पद्मनाभ दिनोंदिन बढ़ता हुआ पिता माताका सन्तोषस्थान होगा। पद्मनाभ अमृतके परिपूर्ण अपने पावके अगूठेको चूसेगा और पवित्र देहका धारक शुभ लक्षणोंका स्थान वह कलाओंसे जैसा चन्द्रमा बढ़ता चला आता है वैसा ही शुभ लक्षणोंसे बढ़ता चला जायगा।

अतिशय पुण्यात्मा तीर्थंकर पद्मनाभके शरीरकी ऊँचाई सात हाथ होगी और आयु ११६ एकसौ सोलह वर्षकी होगी। तीर्थंकर पद्मनाभकी स्त्रियां अनेक गुणोंसे भूषित सुवर्णके समान कांतिकी धारक शुभ यौवनकालमें अतिशय शोभायुक्त होगी।

भगवान ऋषभदेवके जैसे भरत चक्रवर्ती आदि शुभलक्षणोंके धारक पुत्र हुए थे वैसे ही तीर्थंकर पद्मनाभके भी चक्रवर्ती पुत्र होंगे। तीर्थंकर ऋषभदेवके ही समान तीर्थंकर पद्मनाभ राज्य करेंगे, नीतिपूर्वक प्रजाका पालन करेंगे और प्रजावर्गको षट्कर्मकी ओर योजित करेंगे तथा देश ग्राम पुर द्रोण आदिकी रचना कराएंगे। वर्णभेद और नृपवंशभेदका निर्माण करेंगे।

राजा लोगोंको नीतिकी शिक्षा देंगे, व्यापारका ढंग सिखलायेंगे और भोजनादि सामग्रीकी शिक्षा प्रदान करेंगे। इस रीतिसे भगवान पद्मनाभ कुछ दिन राज्य करेंगे। पश्चात् कुछ निमित्त पाकर शीघ्र ही भवभोगोंसे विरक्त हो जांयगे और सद्धर्मकी ओर अपना ध्यान खींचेंगे। भगवानको भवभोगोंसे विरक्त जान शीघ्र ही लोकांतिक देव आंयगे और महाराजकी बार२ स्तुति कर उन्हें पालकीमें बिठा बन ले जांयगे।

भगवान तप धारण करेंगे और तपके प्रभावसे मनःपर्ययज्ञान प्राप्त करेंगे और पीछे केवलज्ञान प्राप्त करेंगे। भगवानको केवलज्ञानी जान देवगण आयेंगे और समवशरणकी रचना करेंगे। भगवान समवशरणमें सिंहासनपर विराजमान हो भव्यजीवोंको धर्मोपदेश देंगे। जहांतहां विहार भी करेंगे और अपने उपदेश रूपी अमृतसे भव्यजीवोंके मन संतुष्ट कर समस्त कर्मोंका नाशकर निर्वाणस्थान चले जायगे। जिस समय भगवान मोक्ष चले जांयगे उस समय देव आकर उनका निर्वाणकल्याण मनांयगे फिर सानंद अपनी देवांगनाओंके साथ स्वर्ग चले जांयगे और वहां आनंदसे रहेंगे।

इस प्रकार भगवान पद्मनाभके पूर्वभवके जीव महाराज श्रेणिकके चरित्रमें भविष्यत्कालमें होनेवाले भगवान पद्मनाभके पंचकल्याण वर्णन करनेवाला पंद्रहवां सर्ग समाप्त हुआ।